विज्ञान परिचर्चा

त्रैमासिक पत्रिका | वर्ष 3, अंक 3 | जनवरी–मार्च 2013

अधिशासी सम्पादक

देवी प्रसाद उनियाल,
वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी, उत्तराखंड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद्, (यूकॉस्ट)

प्रबन्ध सम्पादक

कमला पन्त,
अध्यक्ष, पीपुल्स एसोसिएशन ऑफ हिल एरिया लांचर्स (पहल)

प्रधान सम्पादक

मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी
एसोशिएट प्रोफेसर (से.नि.),
डी.बी.एस. कालेज, देहरादून

सम्पादन सहयोग

शशिकान्त गुप्त
एसोशिएट प्रोफेसर (से.नि.),
डी.बी.एस. कालेज, देहरादून

अजय कुमार बियानी
एसोशिएट प्रोफेसर,
डी.बी.एस. कालेज, देहरादून

नीलाम्बर पुनेठा
जिला समन्वयक, यू–कास्ट, पिथौरागढ़

अशोक कुमार पंत
राज्य समन्वयक,
राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस, उत्तराखण्ड

दिनेश चन्द्र शर्मा
ग्रा० व पोस्ट मस्वासी,
तहसील स्वार, रामपुर, (उ.प्र.)

सलाहकार मण्डल

प्रो. ए.एन. पुरोहित,
पूर्व कुलपति,
हेनब. गढ़वाल विश्वविद्यालय, आलमी आँचल,
डोभालवाला, देहरादून

डॉ. राजेन्द्र डोभाल,
महानिदेशक,
उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद,
देहरादून

डॉ. एस.एस. नेगी,
निदेशक,
वन अनुसंधान संस्थान,
देहरादून

प्रो. एस.सी. सक्सेना,
निदेशक,
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान,
रूड़की

डॉ. ए.के. गुप्ता,
निदेशक, वाड़िया हिमालय भूविज्ञान संस्थान,
देहरादून

डॉ. मनोज पटेरिया,
निदेशक,
राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी संचार परिषद्,
नई दिल्ली

डॉ लीलाधर जगूड़ी,
सीताकुटीर, बदरीपुर,
देहरादून

डॉ. एम.ओ. गर्ग,
निदेशक,
भारतीय पेट्रोलियम संस्थान,
देहरादून

प्रो. धीरेन्द्र शर्मा,
निदेशक,
सेंटर फॉर साइंस पॉलिसी रिसर्च, निर्मल निलय,
भगवंतपुर, देहरादून

डॉ. रवि चोपड़ा,
पीपुल्स साइंस इंस्टीट्यूट,
252, वसंत विहार, फेज–1,
देहरादून

डॉ. बी.एस. बिष्ट,
कुलपति,
जी.बी.पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय,
पन्तनगर

डॉ. जी.एस. रौतेला,
महानिदेशक,
राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद्,
कोलिकाता

डॉ. डी.के. पाण्डे,
राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद,
नई दिल्ली

डॉ अनुज सिन्हा,
सलाहकार, विज्ञान प्रसार
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग,
भारत सरकार

डॉ एल.एम.एस. पालनी,
निदेशक,
गोविन्द बल्लभ पन्त हिमालय पर्यावरण
विकास संस्थान, कटारमल कोसी,
अल्मोड़ा

प्रो० रामसागर,
निदेशक,
आर्यभट्ट प्रेक्षण विज्ञान संस्थान,
नैनीताल

डा० जगदीश चन्द्र भट्ट,
निदेशक,
विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान,
अल्मोड़ा

© vigyan pricharcha, 2010

प्रकाशकीय कार्यालय
मकान नं. – 108, लेन नं.–1, विवेकानन्द ग्राम जोगीवाला, हरिद्वार रोड़, देहरादून

मोबाइल : 09759348564, 09412047994, 09897020782, 09837862096
ईमेल : pahal_uttarakhand@yahoo.co.in
वेबसाइट : www.pahal_understanding.org

विज्ञान परिचर्चा के लेखों में प्रकाशित सभी विचार लेखकों के अपने हैं तथा लेखकीय स्वतन्त्रता के अन्तर्गत व्यक्त किये गये हैं। उनके साथ सम्पादक अथवा प्रकाशक का सहमत होना या उन विचारों का पत्रिका की नीति से कोई सम्बन्ध होना आवश्यक नहीं है।

विज्ञान परिचर्चा

त्रैमासिक पत्रिका
वर्ष 3, अंक 3
जनवरी–मार्च 2013

पीपुल्स एसोसिएशन ऑफ हिल एरिया लांचर्स (पहल), भारतीय विज्ञान लेखक संघ (इस्वा) उत्तराखंड प्रभाग तथा उत्तराखंड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् (यूकॉस्ट) के संयुक्त तत्त्वावधान में प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका, अंतर्भूत उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् समाचार पत्रक–
जनवरी–मार्च 2013

पहल

यह पत्रिका विज्ञान के प्रचार–प्रसार हेतु, विज्ञान–सुधी पाठकों के आग्रह पर 'प्रकाशकीय कार्यालय' से निःशुल्क प्रदान की जाती है।

अनुक्रम

पाठकों की प्रतिक्रिया 04

सम्पादकीय 05

उत्तराखण्ड के विज्ञान ऋषि 11 – प्रो. मोहन चन्द्र जोशी 06

उत्तराखण्ड के विज्ञान संस्थान – 7 मौसम विज्ञान केन्द्र, उत्तराखण्ड 08

विज्ञान पहेलियाँ – दिनेश चमोला 'शैलेश' 09

बुलेट ट्रेन – राजेन्द्र पाल 10

जरबेरा – निशा वर्मा 14

भारत में आधुनिक रसायन विज्ञान के जन्मदाता आचार्य प्रफुल्ल चंद्र रॉय – रघुनन्दन प्रसाद चमोली 16

औषधि गुणों से युक्त वनस्पति श्वेतार्क, सफेद मदार अथवा आक – बाबूलाल शर्मा 20

विज्ञान वर्ग पहेली – 7 का हल 21

सौर प्रज्वाल एवं इनके विध्वंसक स्वरूप – काली शंकर 22

बहुमूल्य पौधे–आर्किड – पल्लवी पाल एवं नीलम नेगी 26

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग समाचार पत्रक 27

पहल के समाचार 36

राष्ट्रीय शिक्षक विज्ञान कांग्रेस एक परिचय 39

जैव उर्वरकों का महत्व – दिनेश मणि 42

धारणीय विकास में उच्च शिक्षा एवं शोध की भुमिका – भवतोष शर्मा 46

कैल्शियम लें पर सावधानी के साथ – मंजुलिका लक्ष्मी 48

परितंत्र की कहानी – 11 – हिंसा को उकसाता मानव – दिनेश चन्द्र शर्मा 50

पुस्तक समीक्षा – बच्चों के लिए अंतरिक्ष यात्रा का रोमांच – रूफ़िया खान 52

हिमालय की वनस्पतियों पर बढ़ता दबावः शिमला (पश्चिमी हिमालय) एक संदर्भ
– हर्ष सिंह, वीणा दीक्षित, प्रियंका अग्निहोत्री एवं तारिक हुसैन 54

खोदो, पर खो मत दो – मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी 56

एक यात्रा प्राकृतिक प्रयोगशाला की – कैलाश कोठारी 59

विज्ञान व्यंग चित्र – अशोक कुमार दुबे 60

पाठकों की प्रतिक्रिया

विज्ञान परिचर्चा वर्ष 3 अंक 1 पढ़ा। पढ़कर बहुत ही आनन्द आया। लगा कि हमारे देश में ऐसे भी सुन्दर प्रयास हो रहे हैं जिनके द्वारा विज्ञान को सरल करके भारतीय भाषा में प्रस्तुत किया जा रहा हैं साथ ही साथ हमारी अद्भुत संस्कृति को बैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयास सराहनीय है। मुझे यह पत्रिका डॉ पुरूषोत्तम उपाध्याय जी (लेखक–आचार्य सश्रुत) से मिली।

मैं इस पत्रिका का नियमित पाठक बनना चाहता हूँ। कृपया पुराने अंक भी दिलवाने की कृपा करें।

डॉ. राहुल बंसल
प्रोफेसर तथा अध्यक्ष
कम्यूनिटी मेडिसिन विभाग
सुभारती मेडिकल कॉलेज
मेरठ

विज्ञान परिचर्चा का प्रत्येक अंक ध्यान से और पूरी रुचि के साथ पढ़ता हूँ। अबतक प्रकाशित दस अंक देख चुका हूँ। ये सभी अंक एक से बढ़ कर एक हैं। आपका यह प्रयास निश्चित रूप से सराहनीय है तथा क्षेत्र में एक बहुत बड़ी आवश्यकता की पूर्ति करता है। विज्ञान की समाज में रुचि पैदा करने का अन्त्यन्त महत्वपूर्ण कार्य यह पत्रिका कर रही है इसमें कोई सन्देह नहीं।

इसके प्रकाशन के पीछे जो परिश्रम है वह स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। पत्रिका पूर्ण रूप से चित्रित होने के कारण और आकर्षक बन गई है। विभिन्न अंकों में प्रकाशित लेख आदि इतने महत्त्वपूर्ण हैं कि इनको जिल्द बांध कर स्थायी रूप से संग्रहीत कर संजोकर रखना चाहिए। इतनी सुन्दर पत्रिका के प्रकाशन के लिये इससे सम्बन्धित सभी लोग और विशेषकर सम्पादक मण्डल बधाई के पात्र हैं। यदि पत्रिका पूर्ण रूप से रंगीन हो सके तो और अधिक निखरेगी।

डॉ. रफअत जमाल आजमी
वैज्ञानिक जी (से.नि.)
वाड़िया हिमालय भू विज्ञान संस्थान, देहरादून

श्रद्धांजलि

विज्ञान परिचर्चा का यह जनवरी से मार्च 2013 का अंक है। इसलिये सिद्धान्तानुसार इसमें इस कालावधि के बाद घटी किसी घटना से संबंधित लेखन उचित तथा तर्कपूर्ण नहीं होगा। अबतक हम इस नियम का पालन करते भी आये हैं। परन्तु वास्तविकता यह है कि अंक काफी देर से प्रकाशित हो रहा है। यह प्रेस में ही था कि दिनांक 16–17 जून को उत्तराखंड ने प्राकृतिक विनाश लीला का वह तांडव देखा जो अभूतपूर्व, भयावह तथा प्रत्येक के हृदय को झकझोर देने वाला था। तीन दिन तक घोर वृष्टि हुई और सारा हिमालयीय क्षेत्र पंचमहाभूतों के रौद्र रूप से ऐसा प्रभावित हुआ कि जिससे उबरने में अब वर्षो लगेंगे। यद्यपि हिमालय में प्राकृतिक हादसे होना उतना अस्वाभाविक नहीं है परन्तु इस बार उसका परिणाम इसलिये भी असामान्य हो गया क्योंकि उसके कारण चार धाम की यात्रा पर आये हुए हजारों की संख्या में यात्री फंस गये, मारे गये या लापता हो गये। इसके अतिरक्त स्थानीय निवासी उजड़ गये, गांव के गांव नष्ट हो गये, व्यवसाय समाप्त हो गया, पूरी तरह सम्पूर्ण क्षेत्र तबाह हो गया। संपूर्ण विज्ञान परिचर्चा परिवार कालावधि पालन की अपनी परंपरा तोड़ते हुए अपने सभी मृत भाई बहनों के प्रति श्रद्धांजलि व्यक्त करता है तथा कामना करता है कि जो बचे हैं उन्हे इस हानि को सहन करने पुनः बसने, उन्नति करने और नवनिर्माण की शक्ति प्राप्त हो।

संपादकीय

अभी हाल की बात है। एक सभा में चर्चा चल रही थी। चर्चा में एक शब्द का प्रयोग हुआ 'माडर्न साइंस' अर्थात् आधुनिक विज्ञान। इस शब्द के प्रयोग पर आपत्ति करते हुए किसी ने मत प्रदर्शित किया कि विज्ञान विज्ञान है; उसमें प्राचीन और आधुनिक ऐसा कुछ नहीं होता। दूसरा मत था कि नहीं वैज्ञानिक ढंग से चिन्तन–मनन पहले नहीं था, अब है इसलिये विज्ञान का जैसा स्वरूप या उसकी जैसी समझ आज है वैसी प्राचीन काल में नहीं थी इसलिए आधुनिक विज्ञान शब्द का प्रयोग उचित है।

उक्त चर्चा ने विचार करने के लिए प्रेरित किया और वे विचार सुधी पाठकों के चिन्तन के लिये यहाँ प्रस्तुत हैं। बैज्ञानिक दृष्टिकोण क्या आधुनिक समाज की उपज है? क्या यह मानव द्वारा आविष्कृत कुछ नया चिन्तन है? क्या प्राचीन मानव समाज वैज्ञानिक ढंग से नहीं सोचता था? क्या पूर्व काल में आस्था, विश्वास, श्रद्धा आदि का ही साम्राज्य था और आज वे बातें काफी कम हो गई हैं और सब लोग तर्कपूर्ण दृष्टिकोण से ही सोचने लगे हैं?

यदि उक्त प्रश्नों पर मन्थन किया जाय तो कुछ तथ्य प्रत्यक्ष होते हैं। पृथ्वी पर मानव अर्थात् होमो सेपियन्स का आगमन लगभग एक लाख वर्ष पूर्व हुआ। मानव जीव विकास के क्रम की परिणति था जो अपने पूर्वज होमो सेपियन्स नियांडर्थेलिस, होमो इरेक्टस, होमो हैबिलिस तथा उसके भी पूर्व के वानर समान प्रजाति से धीरे–धीरे हुए शारीरिक तथा बौद्धिक परिवर्तनों का परिणाम था। इस एक लाख वर्ष के काल में से पहले लगभग 90 हजार वर्ष का समय मानव एक वन्य प्राणी के रूप में ही रहा और हमारे सभ्यता के विकास की कहानी पिछले दस हजार वर्षों की है। इन दस हजार वर्षों में पूर्व पाषाण काल, उत्तर पाषाण काल, ताम्रकाल, लौहकाल आदि के पुरातात्विक प्रमाण मिलते हैं। ये सभी प्रमाण प्रौद्योगिक उन्नति का मार्ग बताते हैं। बौद्धिक चिन्तम का विकास किस प्रकार हुआ यह भी समझना होगा।

आज हम विज्ञान और प्रौद्योगिकी इन दो शब्दों को हमेशा साथ–साथ एक युग्म शब्द जैसा प्रयोग करते हैं। जब भी विज्ञान के बारे में कोई बात करते हैं तो उदाहरण सदा उपकरणों या यन्त्रों के दिये जाते हैं। यह सच है कि प्रौद्योगिकी का विकास वैज्ञानिक सिद्धान्तों के विकास का ही प्रतिफल होता है। लेकिन नई–नई तकनीकों की खोज और वैज्ञानिक ढंग से चिन्तन और मनन दो अलग–अलग क्षेत्र हैं। आवश्यकता आविष्कार की जननी है इसलिये जब जैसी आवश्यकता पड़ी तब मानव ने उसकी पूर्ति के लिए कोई न कोई तकनीक विकसित की। प्यास लगे तो पृथ्वी की सतह पर उपलब्ध पानी तक सभी जीव जाते हैं परन्तु जमीन खोद कर सतह के नीचे गहराई में एकत्रित पानी को कुओं से प्राप्त करने की बौद्धिक क्षमता मानव ने दिखाई। इसी प्रकार जीवन के हर क्षेत्र में प्रौद्योगिक उन्नति होती चली आ रही है। बहुधा लोग कहते हैं कि सत्रहवीं शताब्दी में यूरोप में जो औद्योगिक क्रान्ति हुई और हर कार्य के लिए बड़ी तेजी से मशीनों का प्रयोग प्रारंभ हो गया तभी से वैज्ञानिक काल कहा जाना चाहिये। इसीलिये इस समय के बाद का काल आधुनिक विज्ञान का काल है। लगभग इसी समय यूरोप के इसाई समुदाय में नव जागरण या रेनेसाँ की विचारधारा प्रारंभ हुई जब संसार की हर चीज को तर्क की कसौटी पर कसा जाने लगा और धर्म, आस्था, श्रद्धा तथा अंधविश्वासों के बाहर मानव सोचने लगा।

किंतु वैज्ञानिक विचारधाराओं का इतिहास पढ़ने पर हमें एक विचित्र सी स्थिति दिखाई पड़ती है। सोलहवी–सत्रहवीं शताब्दी के नवजागरण काल के पहले यूरोप की स्थिति सचमुच अंधकर में डूबे समाज की स्थिति दिखती है। परन्तु प्राचीन ग्रीक और रोमन वैज्ञानिकों की विचारधाराओं को देखें तो वे बहुत आधुनिक प्रतीत होते हैं। थियोफ्रेस्टस, एरिस्टॉटल, प्लिनी (बड़े) जैसे विद्वान प्रकृति के रहस्यों को समझने के लिये काल्पनिक गाथाओं में विश्वास नहीं वरन् प्रत्यक्ष निरीक्षण और परीक्षणों पर विचार करते मिलते हैं। हमारे यहाँ भी सांख्य या वैशेषिक दर्शनों के प्रणेता ऋषि श्रद्धा और आस्था की नहीं वरन् तात्विक विचार, चर्चा तथा विश्लेषण की बातें करते दिखते हैं। इस प्रकार बौद्धिक वैज्ञानिक चिन्तन की प्रक्रिया हम सभ्यताओं के विकास के प्रारम्भ से ही पाते हैं।

वैसे भी जिसे हम में से कुछ आधुनिक विज्ञान कहते हैं उसकी जड़ें हमें प्राचीन काल से ही दिखने लगती हैं। उदाहरणार्थ छोटी कक्षा में विज्ञान पढ़ाते समय आर्कमिडीज का सिद्धान्त पढ़ाया जाता है। ये आर्कमिडीज कोई आधुनिक वैज्ञानिक नहीं थे। इनका काल था 287 से 212 वर्ष ईसा पूर्व। सारी सृष्टि जैसे ग्रह, तारे, नक्षत्र, हवाएँ, बादल, पेड़–पौधे और जीव–जन्तुओं के बारे में अत्यन्त प्राचीन वैज्ञानिक जानकारियाँ हम ईसा पूर्व चौथी शताब्दी के वैज्ञानिक एरिस्टॉटल के लेखों में पाते हैं। आज हम जानते हैं कि पृथ्वी के शैल मूल रूप से दो तरह से बनते हैं। अत्यन्त उच्च ताप पर पिघले हुए शिला पदार्थों के ठंडे होने से बने आग्नेय शैल या जल में निक्षेपित अवसादी शैल। प्राचीन ग्रीक, रोमन तथा भारतीय वैज्ञानिकों ने भी सृष्टि की उत्पत्ति अग्नि या जल से बताई है। अर्थात् वे लोग भी वैज्ञानिक ढंग से चिन्तम मनन करते थे। यह तो बाद में धर्मग्रंथों का काल आया जब यह माना जाने लगा कि भगवान ने कहा कि बन जा और बन गया। पाँचवीं शताब्दी में हुए गणितज्ञ आर्यभट्ट ने बताया कि सूर्य केन्द्र में स्थित है और पृथ्वी उसके चारों ओर घूमती है। बाद के विद्वानों को उनकी यह बात तर्क की कसौटी पर खरी न लगी यह बात अलग है।

इस प्रकार हम यदि मानव का इतिहास देखें तो हम पाते हैं कि प्रारंभ से ही दो प्रकार की विचारधाएँ चलती आ रही हैं। एक निरीक्षण, परीक्षण आधारित तर्कपूर्ण विश्लेषण की वैज्ञानिक धारा और दूसरी धर्मग्रन्थों को मानने वाली, बिना स्वबुद्धि का प्रयोग किये किसी बात को स्वीकार कर लेने वाली आस्था की धारा। ये दोनों पहले भी थीं और आज भी हैं। आज के विज्ञान के कहे जाने वाले युग में भी तन्त्र, मन्त्र, चमत्कार, शकुन–अपशकुन आदि चल ही रहे है। इसलिये पुराना विज्ञान और आधुनिक विज्ञान जैसा कुछ नहीं है। केवल वैज्ञानिक और अवैज्ञानिक ये दो ही भेद किये जा सकते हैं।

उत्तराखण्ड के विज्ञान ऋषि 11

प्रो. मोहन चन्द्र जोशी

विज्ञान परिचर्चा के प्रत्येक अंक में हम उत्तराखण्ड के विज्ञान ऋषि स्तम्भ में उत्तराखण्ड से संबंधित अर्थात् इस क्षेत्र में पले-बढ़े तथा बाहर कार्यरत या बाहर से यहाँ आ कर उत्तराखण्ड को कार्यक्षेत्र बनाने वाले किसी लब्धप्रतिष्ठ श्रेष्ठ एवं ज्येष्ठ वैज्ञानिक का परिचय अपने पाठकों के लिये प्रस्तुत करते हैं। उत्तराखण्ड को देवभूमि कहा जाता है। परन्तु यह जैसी देव भूमि हैं उससे भी अधिक ज्ञान भूमि हैं। इसलिये इस क्षेत्र ने ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र में एक से एक महान् प्रतिभाओं की देन इस देश तथा विश्व को दी है। विज्ञान की भी प्रत्येक शाखा में हम इसके अनेकानेक अन्यतम उदाहरण पाते हैं। अब तक इस क्रम में हम भौतिक विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, भू-विज्ञान, परागाणु विज्ञान, जैव प्रौद्योगिकी, कृषि विज्ञान तथा वानिकी के वैज्ञानिकों का परिचय प्राप्त कर चुकें हैं। आज ज्ञान-विज्ञान की मूलभूत शाखा अर्थात गणित के क्षेत्र में विश्व प्रसिद्धि प्राप्त जिन वैज्ञानिक का परिचय यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा हैं वे है इंडियन इन्स्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी, मुंबई में गणित के सेवा निवृत्त प्राध्यापक प्रोफेसर मोहन चन्द्र जोशी।

विज्ञान की जिन शाखाओं में प्राचीन काल से भारत विश्व में अग्रेसर रहा है उनमें आयुर्वेद, स्थापत्य शास्त्र, खनिज विज्ञान के साथ साथ गणित का स्थान अत्युच्च है। यहाँ तक कहा जा सकता है कि आज विश्व में गणित का जो कुछ भी ज्ञान है उसका मूल आधार भारत है। लगध, आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त, वराहमिहिर, भास्कराचार्य आदि महान् प्राचीन गणितज्ञों का हम सदैव सादर स्मरण करते है। आधुनिक काल में भी प्रो. केरूनाना छत्रे, गणेश प्रसाद, एस. रामानुजन, गोरखप्रसाद तथा अन्य अनेक गणित के दीपस्तम्भ भारत की भूमि ने दिये हैं। विज्ञान परिचर्चा के वर्ष 3. अंक 1 में अविनाश उनियाल तथा वर्ष 3 अंक 2 में विजय खंडूरी के लेखों से भारत की इस गणित यात्रा पर पर्याप्त प्रकाश पड़ा है। भारतीय गणितज्ञों की इस महान् तेजोमय पराम्परा की ही एक कड़ी हैं देवभूमि उत्तराखण्ड के एक श्रेष्ठ सुपुत्र प्रो. मोहन चन्द्र जोशी।

कुमाऊँ में अल्मोड़ा जिले के मल्ला दनिया गाँव के मूल वासी दि. 21 अप्रैल सन् 1942 को जन्मे प्रो. जोशी की प्रारम्भिक शिक्षा अल्मोड़ा में ही हुई। राजकीय इंटर कॉलेज अल्मोड़ा से इंटरमीडिएट करने के बाद उन्होंने आगरा विश्वविद्यालय से स्नातक, दिल्ली विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर (1967) तथा संयुक्त राज्य अमेरिका के पुर्दू विश्वविद्यालय से एम.एस. तथा पीएच.डी. (1973) की उपाधियाँ प्राप्त कीं। आपकी विशेषज्ञता के विषय हैं, नॉन लीनियर एनेलीसिस, प्रोबेबलिस्टिक फंक्शनल एनेलीसिस, मैथेमेटिकल सिस्टम थिअरी तथा इंडस्ट्रियल मैथेमेटिक्स पुर्दू विश्वविद्यालय में अध्ययन उपरांत उन्होंने वहीं गणित विभाग में कुछ समय तक इंस्ट्रक्टर के पद पर कार्य किया। तदनंतर वे भारत वापस आये और पिलानी स्थित बिड़ला इंस्टीटयूट ऑफ टेक्नॉलॉजी में जून 1974 से मई 1984 तक असिस्टेंट प्रोफेसर के पद पर कार्यरत रहे। उसके बाद वे इंडीयन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी, मुंबई में पहले असोशिएट प्रोफेसर तथा बाद में प्रोफेसर बने। सन् 2004 में वे सक्रिय सेवा से निवृत्त हुए और गणित के प्रचार प्रसार में जुट गये।

प्रो. जोशी ने अपना सारा जीवन गणित के लिये अर्पण कर दिया है। जैसा कि हम सभी जानते हैं विज्ञान की अन्य सभी शाखाओं के समान ही गणित का भी अद्भुत विकास हुआ है। विज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र का मूल गणित है। गणित विज्ञान की भाषा है। जिन तथ्यों को गणितीय समीकरणों से व्यक्त न किया जा सके अनेक लोग तो उन्हें विज्ञान स्वीकार भी नहीं करते। आज गणित का अर्थ केवल हिसाब किताब या जोड़ घटाना ही नहीं रह गया है। उद्योग, व्यापार, कृषि, क्रीड़ा स्वास्थ, निर्माण आदि जीवन का कोई भी क्षेत्र क्यों न हो उसका सारा व्यवहार गणित आधारित ही है। इस तथ्य को प्रो. जोशी पूर्ण अधिकार के साथ प्रतिपादित करते हैं। औद्योगिक गणित उनकी विशेषज्ञता का क्षेत्र बन चुका है।

प्रो. जोशी ने अध्यापन के अतिरिक्त गहन शोध कार्य किया। उनके 40 से अधिक शोध निबन्ध अनेक राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। अनेक शोध छात्र उनके निर्देशन में पीएच. डी. उपाधि प्राप्त कर चुके हैं। प्रो. जोशी की गणित के विविध आयामों पर पुस्तकें भी प्रकाशित हैं जिनमें श्री आर. के. बोस के सहयोग से लिखित 'मेथड्स् ऑफ मैथेमेटिकल फीजिक्स' तथा 'सम टॉपिक्स इन नॉन लीनियर फंक्शनल एनेलिसिस' के साथ साथ उनकी 'कंप्यूटर ओरिएण्टेड एप्रोच टुवर्ड्स् कैल्क्यूलस' प्रसिद्ध है। उन्होंने 'मैथेमेटिकल थिअरी ऑफ कंट्रोल' शीर्षक से 1990 में आयोजित एक अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी के शोध निबंधों का सम्पादन भी किया। उसी प्रकार 1993 में बड़ोदा विश्वविद्यालय में आयोजित कार्यशाला तथा 1996 में आइ.आइ.टी. मुंबई में 'इंजीनियरिंग ऑप्टिमाइजेशन' विषयक

कार्यशाला के कार्यविवरणों के भी वे सम्पादक रहे। आज देश के विभिन्न भागों में गणित विषयक कार्यशालाओं के आयोजनों में वे व्यस्त हैं। ये कार्यशालाएँ विद्यालयीय, माध्यमिक विद्यालयीय, विश्वविद्यालयीय विद्यार्थियों तथा शिक्षकों के लिये अलग अलग की जा रही हैं। इस प्रकार गणित के क्षेत्र में होने वाली अधुनातन खोजों तथा उपलब्धियों से देश के भावी गणितज्ञों को परिचित कराने के इस महत्तम कार्य में प्रो. जोशी जुटे हैं। आइ. आइ. टी. में उन्होंने अपने विद्यार्थियों तथा सहयोगियों के साथ मिलकर एक औद्योगिक गणित संघ बनाया। इसके द्वारा उन्होंने अनेक अन्तर्राष्ट्रीय संघों जैसे ऑक्स्फोर्ड, इंग्लैण्ड के ओ. सी. आइ. ए. एम., ब्रूनेल के सी. ए. आर. आई. एस. एम. ए., जर्मनी के आइ. टी. डब्लू. एम., कनाडा के मैनिटोबा विश्वविद्यालय के इंडस्ट्रियल मैथेमेटिकल सेंटर आदि के साथ संबंध जोड़े। इस प्रकार उन्होनें औद्योगिक गणित के विभिन्न पहलुओं का विकास कर देश भर में उद्योगों की विभिन्न समस्याओं के गणितीय निराकरण प्रस्तुत किये हैं। अपने इन अनुभवों को उन्होनें नॉनलीनियर एनेलीस्ट्स् की विश्व परिषद के सम्मेलनों में प्रस्तुत भी किया हैं।

स्वाभाविक है कि प्रो. जोशी की योग्यताओं का लाभ अनेकानेक संस्थान पाना चाहते रहे हैं। इसलिये उन्हें जर्मनी के कैसस्लॉटर्न विश्वविद्यालय, इंग्लैण्ड के एडिनबरो स्थित इंटरनेशनल सेंटर ऑफ मैथेमेटिकल साइंसेज, पुर्दू विश्वविद्यालय, सं.रा. अमेरिका आदि संस्थानों ने विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में आमंत्रित किया। गणित के क्षेत्र में इस प्रकार उल्लेखनीय तथा प्रशंसनीय योगदान के लिये प्रो. जोशी को अनेकानेक संस्थानों द्वारा समय समय पर पुरस्कृत तथा अलंकृत किया जाता रहा है। इनमें उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी परिषद द्वारा वर्ष 2011 में अल्मोड़ा आयोजित विज्ञान कांग्रेस के अवसर पर प्रदत्त 'विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी उत्कृष्टता सम्मान' विशेष उल्लेखनीय है।

विज्ञान परिचर्चा के सम्पादक मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी ने उनके मुंबई स्थित निवास स्थान पर उनसे भेंट कर अनेक विषयों पर चर्चा की। उस चर्चा के कुछ अंश यहाँ प्रस्तुत हैं।

वि.प – प्रो. जोशी! आप हिमालय पर्वत के दुर्गम क्षेत्र से निकल कर आज ज्ञान के उच्च शिखर पर पहँचे हैं। अपनी इस यात्रा के बारे में कुछ बताइये।

जोशी – मैं आज जो कुछ भी पा सका हूँ उसका सारा श्रेय मेरे गुरुजनों को हैं। अल्मोड़ा के विद्यालय में मैने प्रारम्भिक शिक्षा पाई। मुझे ऐसा लगता है कि उन दिनों विद्यालयीय शिक्षा अत्युत्कृष्ट थी। अध्यापक अत्यन्त योग्य तथा शिक्षा के प्रति समर्पित थे। आज भी में विद्यालयों में कार्यशालाएँ आयोजित करता हूँ। परन्तु मुझे लगता है कि हमारे अध्यापकों की तुलना में आज के अध्यापकों की लगन में कुछ कमी है। ज्ञान का बहुत विकास हुआ है। पहले जो विषय एम.एससी. में थे वे अब बी.एससी. में तथा जो बी.एससी. में पढ़ाये जाते थे वे माध्यमिक स्तर पर आ गये हैं। तो विषय का स्तर तो बढ़ता जा रहा है। यदि उसी गति से शिक्षकों का स्तर नहीं बढ़ा तो सन्तुलन कैसे बनेगा।

वि.प – आप आइ.आइ.टी. में प्राध्यापक हैं। अनेक लोग ऐसा मानते हैं कि आइ. आइ.टी. ग्रेज्युएट निर्माण करने के उत्कृष्ट कारखाने हैं। उनका शोध का स्तर बहुत श्रेष्ठ नहीं हैं। आपका क्या विचार है?

जोशी – मैं इससे असहमत हुँ। स्तर तुलनात्मक होता है। आइ.आइ.टी. में प्रवेश पाने वाले विद्यार्थियों का स्तर बहुत अच्छा होता है। भारत के विश्वविद्यालयों में शोध क्षेत्र में भी सभी आइ.आइ.टी. अग्रणी हैं। टाटा इंस्टीटयूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साईस, अनेक क्रेन्दीय विश्वविद्यालयों के समान ही देश के सात प्रमुख आइ.आइ.टी. में शोध कार्य हो रहा है। हाँ, विश्व स्तर पर या विकसित देशों की तुलना में कहें तो हम काफी पीछे हैं। वर्ल्ड रैंकिंग में भारत का कहीं नाम नहीं हैं। भारत में यदि प्रतिवर्ष दस हजार शोध पत्र प्रकाशित होतें हैं तो चीन में एक लाख। हमारे शोध पत्रों में भी स्तरीय बहुत कम हैं। ग्रेजुएट स्तर पर हमारे विद्यार्थी विश्व के किसी भी देश के बराबर हैं। शोध स्तर पर कम हो जाते हैं। अध्यापको की भी कमी है।

वि.प – आइ.आइ.टी. की कार्यपद्धति के बारे में कुछ बताइये।

जोशी – यहाँ शोध कार्य को उच्च प्राथमिकता दी जाती हैं। पदोन्नति सीधे शोध से सम्बद्ध है। प्रोफेसर हो, एसोशिएट प्रोफेसर हो या असिस्टेंट प्रोफेसर सबका अध्यापन भार बराबर होता है। असिस्टेंट प्रोफेसर को प्रोन्नति पाने के लिसे उच्च स्तर का शोध कार्य करना पड़ता है। परन्तु प्रोफेसर बन जाने के बाद भी कार्य में कोई शिथिलता नहीं आती क्योंकि नवनवीन अध्ययन और शोध सबकी प्रवृत्ति ही बन जाती है।

वि.प – देश में गणित की वर्तमान स्थिति के संबंध में आपके क्या विचार हैं?

जोशी – देखिये, गणित का क्षेत्र इतना व्यापक है कि हमें गणितज्ञों की हर स्थान पर आवश्यकता है अनुप्रयुक्त गणित (एप्लाइड मैथेमेटिक्स), वित्तीय गणित (फाइनेंशियल मैथैमेटिक्स) जैसे क्षेत्र असीम हैं। अन्तरिक्ष अनुसंधान के क्षेत्र में गणितज्ञ चाहिये। मिसाइल जैसा रक्षा उपकरण बनाने वालों को गणितज्ञ चाहिये। मैं तो कहता हूँ कि उद्योगों का विश्वविद्यालयों के साथ सीधा संबंध होना चाहिये। उद्योगों की आवश्यकता के अनुरूप विश्वविद्यालयों में शोध कार्य होना आज की मांग हैं।

वि.प – आप स्वयं गणित के क्षेत्र में कैसे आये?

जोशी – संयोग से तथा गुरुजनों की प्ररेणा से।

वि.प – आपका परिवार?

जोशी – पत्नी श्रीमती पुष्पा जोशी भौतिक विज्ञानी हैं तथा यहा मुंबई में एक महाविद्यालय में भौतिक विज्ञान प्राध्यापिका थीं। बेटी अमेरिका में हैं तथा उसने सेल बायोलॉजी में पीएच.डी. किया है।

वि.प – प्रो. जोशी! आपने अपने व्यस्त समय में से परिचर्चा के लिये समय निकाला इसके लिये परिचर्चा परिवार की ओर से आभारी हूँ।

जोशी – मैनें विज्ञान परिचर्चा के अंक देखे। आप विज्ञान लोकप्रियकरण का अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य कर रहे है। मेरी शुभकामनाएँ। मैं भी इसके लिये कुछ लिखने का प्रयास करूंगा।

मौसम विज्ञान केन्द्र, उत्तराखण्ड

भारत सरकार के पृथ्वी विज्ञान मन्त्रालय के अन्तर्गत भारत मौसम विज्ञान विभाग देश भर के मौसम की निगरानी करने का कार्य करता है। प्रत्येक राज्य में इसके मौसम विज्ञान केन्द्र हैं। वैसा ही उत्तराखण्ड राज्य की स्थापना होने के बाद सन् 2002 में इस राज्य का मौसम विज्ञान केन्द्र देहरादून में स्थापित हुआ। तब से डॉ. आनन्द शर्मा इस केन्द्र के निदेशक के रूप में कार्यरत हैं तथा उनके नेतृत्व में यह केन्द्र पूरी निष्ठा, तत्परता तथा लगन के साथ जनसेवा कर रहा है। विज्ञान संस्थान बहुत सारे होते हैं परन्तु उनमें से अधिकांश बंद कमरो में बहुधा वातानुकूलित प्रयोगशालाओं में, आम जनता से दूर विविध वैज्ञानिक अनुसंधान के ऐसे कार्य करते रहते हैं जिनके बारे में जनसाधारण को कोई विशेष जानकारी नहीं होती। परन्तु इसके विपरीत मौसम विज्ञान केन्द्र एक ऐसा प्रतिष्ठान है जो सीधे जनता के प्रति उत्तरदायी है।

एक पुरानी कहानी है कि कभी किसी क्षेत्र में अकाल पड़ा था। वर्षा ही नहीं हो रही थी। लोग बूंद–बूंद पानी के लिये तरस रहे थे। जमीन में दरारें पड़ गई थीं। नदियाँ क्षीण हो गई थीं। तालाब सूख गये थे। कुओं में पानी न के बराबर हो गया था। पशु मर रहे थे। मनुष्य तड़प रहे थे। ऐसे समय एक धर्मगुरु ने घोषणा की कि सारे लोग मिलकर यदि ईश्वर की प्रार्थना करें तो वर्षा होगी। इसलिये उसने सबसे आग्रह किया कि एक निश्चित समय पर निश्चित स्थान पर सब एकत्रित हो जायें। कार्यक्रम के अनुसार नियत स्थान पर भारी भीड़ जमा हो गई। धर्मगुरु भी आये। उच्च स्थान पर खड़े हुए और उन्होंने जनता की ओर ध्यान से देखा। फिर वे बोले कि इतने लोग यहाँ जमा हैं, पर किसी के पास भी छाता नहीं दिख रहा। आप बिना छाते के क्यों आये हैं? लोग आश्चर्यचकित हो गये। छाता? छाते का क्या काम? वर्षा का अता पता नहीं और छाता? लेकिन धर्मगुरु बोले कि आप छाता नहीं लाये अर्थात् आपको विश्वास नहीं है कि प्रार्थना करने के बाद वर्षा होगी। तो निश्चित मानिये कि हमारा प्रार्थना करना व्यर्थ होने वाला है। यदि मन में सच्ची श्रद्धा और विश्वास न हो तो सफलता कभी भी नहीं मिल सकती।

खैर, यह तो कहानी हुई तथा इसका तात्पर्य भी दूसरा है। लेकिन मौसम के मिजाज के बारे में आम जनता की धारणा को यह भली प्रकार व्यक्त करती है। मौसम की भविष्यवाणी लोग करते रहते हैं परन्तु उस पर विश्वास कोई नहीं रखता। ज्योतिषी हर वर्ष पंचांग बनाते हैं जिनमें लिखा होता है कि इस वर्ष का राजा कौन सा ग्रह है, मंत्री कौन है, वर्षा का स्वामी कौन है, कृषि का स्वामी कौन है, आदि आदि। इन सबके क्या फल होने वाले हैं यह भी लिखा रहता है। पर

उन भविष्यवाणियों पर आम लोगों का तो दूर स्वयं ज्योतिषियों का भी विशेष विश्वास नहीं होता, इसलिये वे गोल मोल भाषा का प्रयोग करते हैं। आधुनिक मौसम वैज्ञानिक भी मौसम की भविष्यवाणी करते थे। परन्तु हाल हाल तक उनकी बताई बातें भी आम जनता मजाक ही समझती थी। लोग कहते थे कि मौसम विभाग ने कहा है कि आसमान खुला रहेगा तो छाता जरूर रखो साथ में।

पर आज स्थिति बदल गई है। मौसम विज्ञान केन्द्र, देहरादून के डॉ. आनन्द शर्मा बताते हैं कि आज हमारा केन्द्र मौसम की जो भविष्यवाणियाँ करता है उनके बारे में उपभोक्ताओं से हमें प्रतिक्रिया मिलती है कि वे 99 प्रतिशत तक सही होती हैं। घोषित अनुमानों के सही या गलत होने के हमारे अपने पैमाने अत्यन्त कठोर हैं। हमने यदि 19° से ताप रहेगा ऐसा कहा और ताप 21° हो गया तो यह 2° का अन्तर भी आम उपभोक्ता भले ही ध्यान में लाये तो भी हमारे दृष्टिकोण से हमारी भविष्यवाणी को हम गलत करार देते हैं। इतने कठोर पैमाने पर भी जांचा जाय तो भी हमारी घोषणाएँ 90 प्रतिशत से अधिक सही होती हैं। इसलिये आज जनता का हम पर इतना दृढ़ विश्वास हो गया है कि जनता के सभी वर्ग हम से पूछ पूछ कर अपने कार्यक्रम निर्धारित करते हैं।

मौसम की भविष्यवाणी के अनेक मानक हैं। डॉ. शर्मा के नेत्तृत्व में इस केन्द्र की टीम उन मानकों के आधार पर सभी आँकड़ों का सतत विश्लेषण करती रहती है। 2002 में ही इस केन्द्र ने कृषि मौसम सलाह इकाई प्रारंभ की। प्रति सप्ताह मंगलवार तथा शुक्रवार को कृषि के संबंध में भविष्यवाणी का बुलेटिन जारी किया जाता है। आइ.आइ.टी. रुड़की, पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय तथा रानीचौरी कृषि विश्वविद्यालय में केन्द्र के एग्रोनेट फील्ड यूनिट हैं। केन्द्र द्वारा प्रेषित आंकड़ों के आधार पर ये केन्द्र वुलेटिन तैयार करते हैं जिन्हें मौसम विभाग समेकित करता है तथा जारी करता है। अधिक से अधिक पाँच दिन आगे तक का मौसम बताया जाता है। पाला, वर्षा, तापमान आदि के केन्द्र के संकेतों के आधार पर राज्य के कृषक अपने कार्य निर्धारण करते हैं। उदाहरणार्थ यदि फसलों पर किसान कीटनाशकों का छिड़काव करते हैं और तुरंत बारिश आ जाय तो सारी दवा बह जायेगी। इसलिये उन्हें इस प्रकार की भविष्यवाणी बहुत लाभदायक होगी। डॉ. शर्मा ने बताया कि लीची के लिये एक विशिष्ट तापक्रम चाहिये। यदि किसान पहले से ही जान जाय कि ताप कितना होने वाला है तो वह उस दृष्टि से तैयारी कर सकता है। राज्य में सात लाख एकड़ सिंचित भूमि है। यदि एक लाख एकड़ के मालिक किसानों ने भी केन्द्र के बुलेटिन सुने तो वे तैयार रह सकते हैं।

मौसम केन्द्र ने अपनी सही और सटीक भविष्यवाणीयों के कारण जनसामान्य में विज्ञान की सार्थकता तथा विश्वास बढ़ा दिये हैं। जिस प्रकार खून का ग्रूप, डी. एन. ए. टेस्ट जैसे वैज्ञानिक तथ्य जनसामान्य द्वारा स्वीकार किये जा चुके हैं वैसे ही मौसम की भविष्यवाणी भी अब एक पूर्ण स्वीकृत तथ्य है। मौसम केन्द्र ने विज्ञान को समाज से जोड़ दिया हैं, विज्ञान को आर्थिक स्थिति से जोड़ दिया है, विज्ञान को पर्यटन से जोड़ दिया है तथा इस प्रकार विज्ञान की समाज में विश्वसनीयता स्थापित कर दी है। केवल किसान ही नहीं जनता का हर वर्ग मौसम केन्द्र की सलाह मांगता दिखता है। विवाहोत्सव, किसी कार्यक्रम का आयोजन, खेल प्रतियोगिता, चार धाम जैसी यात्राएँ, भवन निर्माण अर्थात हमारे हर कार्यकलाप मौसम की सही भविष्यवाणियों से निर्धारित हो रहे हैं। अब मौसम केन्द्र भूस्खलन तथा दावाग्नि के संबंध में भी निर्णय लेने में शासन के लिये सहायक हो रहा है। भूस्खलन क्षेत्र तो पता किये जा सकते हैं परन्तु वे वर्षा के बाद सक्रिय हो उठते हैं। उसी प्रकार जंगल को आग लगने और उसे नियंत्रित करने में मौसम एक महत्वपूर्ण कारक होता है। डॉ. शर्मा ने बताया कि उत्तराखण्ड में अभी तक रडार की स्थापना नहीं हुई हैं। इसलिये हमें आकड़ों के लिये बाहरी स्रोतों पर निर्भर रहना पड़ता है। परन्तु उन स्रोतों से प्राप्त आकड़ों तथा तथ्यों का सही विश्लेषण कर ठीक ठीक पूर्वानुमान करने के लिये उच्च वैज्ञानिक ज्ञान तथा अनुभव ही काम आता है।

विज्ञान पहेलियाँ

1
जीवन में अत्यावश्यक जो, डी पी टी का टीका।
कौन रोग का प्रतिरोधी यह, किंचित तुमने सीखा?

2
रक्त संचरण था बतलाया, जिसने मनुज शरीर।
था प्रथम अन्वेषी कौन वह, सुधी वैज्ञानिक वीर?

3
अनंत काल से देखते हैं हम जल में मीन।
कब से यह हैं धरणी पर, बोलो अगर प्रवीन?

4
तीन रंग वे कौन है जिनसे टी वी रंगीन।
जिनके कारण दृश्य सब लगते गजब, हसीन?

5
तन में कार्बोहाइड्रेट्स् का, संग्रह हो किस रूप।
जो बतला दे है वही, हम सबमें प्रिय भूप?

6
ऐसा कारक कौन सा, जो ऑक्सीजन सरदार
ला, ले मानव देह का, बनता पहरेदार?

7
जिसने प्रतिपादित किया, 'ब्लैक होल सिद्धान्त'
कुशल वैज्ञानिक कौन वह, परमश्रेष्ठ पर शांत?

8
जिसके कारण हम करें हो मोबाइल फोन,
खोजी यह तकनीक थी, वह वैज्ञानिक कौन?

9
विद्युत धारा में रहे जो चुंबकी प्रभाव।
किसने खोजा प्रथमतः, वैज्ञानिक यह भाव?

10
जिसके कारण फैलता है पायरिया रोग।
कारक है वह कौन सा, कहो, करो सहयोग?

दिनेश चमोला 'शैलेश'
157, गढ़ विहार, देहरादून 248005

उत्तर इसी अंक में

बुलेट ट्रेन

राजेन्द्र पाल

हमारे आस–पास प्रतिदिन अनेक घटनाएं होती रहती हैं लेकिन हम उन्हें विशेष महत्व नहीं देते। 7–8 वर्ष का एक बच्चा चाय के लिए केटली में पानी गर्म होते देखता है, अचानक केटली का ढ़क्कन नीचे गिर जाता है। वो पुनः उसको केटली पर ढ़क देता है लेकिन उबलते पानी की भाप से ढ़क्कन फिर नीचे गिर जाता है। उस बच्चे को बड़ा विस्मय व कौतूहल होता है कि पानी की भाप में कितनी शक्ति है कि ढ़क्कन को बार–बार नीचे गिरा देती है। इस बच्चे ने भाप की शक्ति को पहचाना और एक अद्‌भुत खोज को जन्म दिया। इस बच्चे का नाम था जैम्स वाट और उसने सन् 1743 में वाष्प इन्जिन का आविष्कार किया। मानव जीवन में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन आया और इस खोज ने यातायात के साधन अनेक सुविधाओं के साथ उपलब्ध कराये।

सदियों पुरानी ये वाष्प इन्जिन की ट्रेन आज भी शान से मनुष्य की सेवा कर रही है। वाष्प इन्जिन से ड़ीजल इन्जिन और फिर विद्युत्त इन्जिन के विकास क्रम में तकनीकी प्रगति होती गयी और जहां ट्रेन की गति में बढ़ोतरी हुई वहीं मनुष्य की यात्रा आरामप्रद व अधिक सुरक्षित हो गयी। आज भारतीय रेल नेटवर्क विश्व में तीसरे स्थान पर है। 1,15,000 किमी रेलवे ट्रेक पर प्रतिदिन 2.5 करोड़ यात्री (लगभग आस्ट्रेलिया की पूरी जनसंख्या के बराबर) सफर करते हैं और 28 लाख मैट्रिक टन आवश्यक

चुम्बकीय चमत्कार :

चुम्बक के विषय में लगभग दो हजार वर्ष पहले लोगों को ऐसी जानकारी अवश्य थी कि कुछ पत्थर लोहे के टुकड़ों को अपनी ओर खींचते हैं। मेगनेटाइट नाम का खनिज जिसे आयरन आक्साइड़ भी कहते हैं, प्राकृतिक रूप से पृथ्वी में पाया जाता है जो लोहा, कोबाल्ट, निकिल आदि धातुओं (जिन्हे फेरोमेगनेटिक धातु कहते हैं) को अपनी ओर खींचता है। ड़ेनमार्क के भौतिक–वैज्ञानिक हेन्स क्रिसटियन ओर्स्टिड़ ने सन् 1820 में विद्युत और चुम्बक के सम्बंध में अति महत्वपूर्ण खोज की। कक्षा में विद्यार्थियों को एक प्रयोग कराते हुए उन्होंने पाया कि तांबे के तार में विद्युत–धारा प्रवाहित होने पर दिशा–सूचक यन्त्र (कम्पास) की सुई हिलने लगती है। ओर्स्टिड़ ने दिखाया कि तार में प्रवाहित विद्युत–धारा चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न करती है। सन् 1831 में एक अन्य वैज्ञानिक माईकल फैराड़े ने बताया कि जब एक चुम्बक को सुचालक धातु के पास लाते हैं तो धातु में धारा बहने लगती है और एक प्रेरित बल (इंड्यूस्ड़ बल) पैदा होता है जैसा कि चित्र–2 में दिखाया गया है। उस समय की इस महत्वपूर्ण खोज ने आगे आने वाले समय में मनुष्य के जीवन में अभूतपूर्व परिवर्तन ला दिया। आज के रेड़ियो, टीवी, टेलीफोन और कंप्यूटर आदि उपकरण विद्युत्त–चुम्बक की ही देन हैं ।

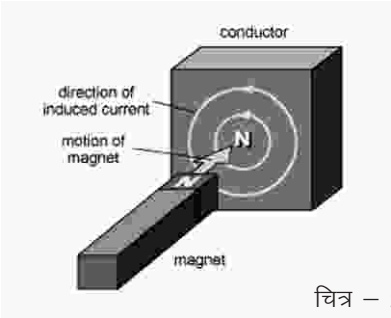

चित्र – 2

सामान ढ़ोया जाता है। भारतीय रेल की अधिकतम गति लगभग 125 किमी प्रति घन्टा है वहीं विश्व में इस प्रकार की रेल की अधिकतम गति 200 किमी प्रति घन्टा है। इस लेख के माध्यम से नवीनतम् तकनीकी पर आधारित 'हाई स्पीड़' ट्रेन के विषय में संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है ।

बुलेट ट्रेन से अभिप्राय तीव्र गति से चलने वाली ट्रेनों से है जिन की गति 500 किमी प्रति घंटे से भी आगे पहुंच गयी है। इस प्रकार की ट्रेन हवा में तैरती है अतः वायु के प्रतिरोध (घर्षण) को घटाने के लिये उन के आकार व शक्ल को बन्दूक की गोली जैसा रूप दिया जाता है, (देखिये चित्र –1)। विद्युत्त चुम्बकीय तकनीक पर आधारित इन ट्रेनों को मेगलेव (मेगनेटिक लेवीटेशन) के नाम से जाना जाता है।

चित्र – 1

आज जिस बुलेट ट्रेन की हम बात कर रहे हैं वो भी विद्युत–चुम्बक पर आधारित है। हम सभी ने भौतिक–विज्ञान की कक्षा में पढ़ा है कि चुम्बक के विपरीत ध्रुव एक दूसरे की ओर आकर्षित होते हैं और समान ध्रुव दूर भागते हैं। चुम्बकीय आकर्षण व प्रतिकर्षण के सिद्धांत पर चुम्बकीय पदार्थ को बिना किसी के सहारे हवा में लटका सकते हैं। लैटिन भाषा के शब्द 'लैविटास' से बना 'लैविटेशन' जिस का अर्थ है – किसी वस्तु को पृथ्वी के आकर्षण के विपरीत बाह्य सम्पर्क बिना हवा में लटकाना। मेगनेटिक–लेविटेशन (मेगलेव) में विद्युत्त–चुम्बक के द्वारा बुलेट ट्रेन को हवा में चलाया जाता है। यह आश्चर्यजनक है, यह अद्भुत है लेकिन असम्भव नहीं ।

अभी पिछले दिनों 14–15 जनवरी, 2013 में 'पहल' नाम की संस्था ने उत्तराखण्ड़ विज्ञान एवं तकनीकी परिषद (यूकोस्ट) के कार्यक्रम' प्रथम उत्तराखण्ड़ विज्ञान–अध्यापक कांग्रेस' का देहरादून में संयोजन किया। सौभाग्य से 'पहल' ने मुझे भी इस महत्वपूर्ण कार्यक्रम में उपस्थित होने का अवसर दिया। इसी के अन्तर्गत ड़ी.आर.ड़ी.ओ. स्कूल, रायपुर देहरादून के बच्चों ने एक वैज्ञानिक – प्रदर्शनी भी आयोजित की। मेगनेटिक–लेविटेशन (मेगलेव) पर आधारित कुछ प्रशंसनीय प्रोजेक्ट्स वहाँ पर दिखाये गये। मैं बच्चों को, उनके विज्ञान अध्यापक एवं आयोजकों को बधाई देता हूँ कि इन जटिल वैज्ञानिक सिद्धांतों को अति सरल तरीके से प्रस्तुत किया ।

मेगलेव ट्रेन :– मेगलेव ट्रेन मुख्यतः दो प्रकार से कार्य करती है –

1 इलेक्ट्रो मेगनेटिक सस्पेंशन : विद्युत चुम्बकीय आकर्षण–बल द्वारा हवा में लटकना (उठना)

2 इलेक्ट्रो ड़ाईनेमिक सस्पेंशन : विद्युत चुम्बकीय प्रतिकर्षण (गतिदायक) बल द्वारा हवा में लटकना (उठना)

विद्युत चुम्बकीय आकर्षण–बल द्वारा हवा में लटकना (उठना) :–

मेगलेव ट्रेन की संरचना अत्यन्त जटिल है और साधारण ट्रेन से पूर्णतया भिन्न है। ट्रेन का रेल–ट्रेक भी विशेष रचना व आकार का होता है जिस पर मीटर गेज अथवा ब्रोड़ गेज वाली कोई भी ट्रेन नहीं चल सकती। मेगलेव ट्रेन में लोहे के पहिये नहीं होते और न ही ड़ीजल या विद्युत्त इंजिन। मैट्रो ट्रेन की तरह पूरा रेलवे ट्रेक कंक्रीट के खम्बों की सहायता से जमीन के ऊपर उठा होता है दखिये चित्र –3। इस ट्रेन के ड़ब्बे भी सर्वथा अलग प्रकार के होते हैं। ड़ब्बे का लगभग एक तिहाई भाग रेल ट्रेक के बाजू में नीचे की तरफ होता है।

चित्र – 3

लेविटेशन, ऊपर उठने का चमत्कारः ड़ब्बे के दोनों ओर से अंग्रेजी के अक्षर 'सी' के आकार की भुजाएं निकली होती हैं जिनके निचले भाग के ऊपर लेविटेशन विद्युत चुम्बक लगी होती है देखिये चित्र –4

पूरा रेलवे ट्रेक चुम्बकीय धातु लोहे का बना होता है। चुम्बक में जब विद्युत धारा प्रवाहित होती है तो दोनों भुजाओं में शक्तिशाली चुम्बक बल उत्पन्न हो जाता है और पूरा ड़ब्बा रेलवे ट्रेक की ओर आकर्षित हो ऊपर हवा में उठ जाता है। कंप्यूटर द्वारा फीड़बैक पद्धति से ट्रेन को रेलवे ट्रेक से 10मीमी की दूरी पर रखा जाता है और आराम की स्थिति में भी ट्रेन हवा में उठी होती है। आकस्मिक विद्युत धारा टूटने पर ट्रेन में उपलब्ध बैटरी की सहायता से गाड़ी अगले स्टेशन तक जा सकती है। गाइड़ेंस चुम्बक ड़ब्बे को रेलवे ट्रेक के बीचों बीच रखता है।

प्रणोदन (प्रोपलसन) व्यवस्था : मेगलेव ट्रेन को गति प्रदान करने के लिये भी विशेष तकनीक प्रयोग में लायी जाती है।

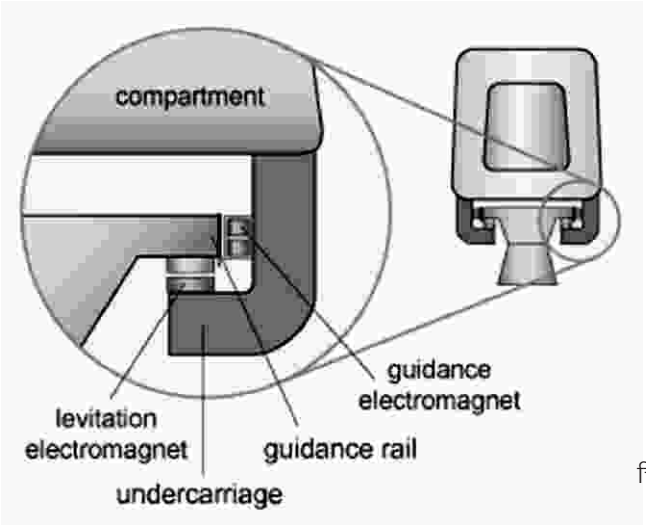

चित्र – 4

रेल ट्रेक के दोनों तरफ केबिल वाइंड़िंग बिछी होती हैं। इनमें जब विद्युत बहती है तो आल्टर्नेटिंग करैंट की तरंग पैदा होती है जिससे चुम्बकीय ध्रुव तेजी से बदलते हैं और ट्रेन को खींचने व धकेलने की क्रिया होती है और ट्रेन चलने लगती है जैसा कि चित्र –5 में दिखाया है। विद्युत धारा की शक्ति बढ़ाने व घटाने से ट्रेन की गति अधिक व कम की जा सकती है। इस क्रिया में रेल ट्रेक का वही भाग विद्युत से सक्रिय होता है जहां ट्रेन चलती है। इस से ऊर्जा का संरक्षण होता है। मेगलेव ट्रेन ने दिसम्बर 2003 में 581 किमी प्रतिघंटा की उच्च गति प्राप्त कर विश्व कीर्तिमान स्थापित किया। वर्तमान में जर्मनी, जापान, चीन, फ्रांस आदि 20–25 देशों में 300 किमी प्रतिघंटे या अधिक गति की मेगलेव ट्रेन चल रही है।

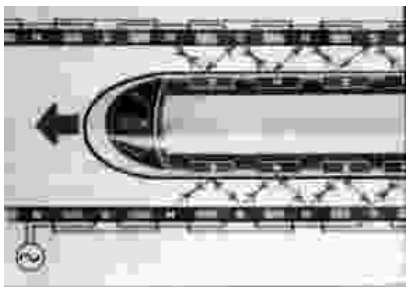

चित्र – 5

विद्युत्त चुम्बकीय प्रतिकर्षण (गतिदायक) बल द्वारा हवा में लटकना (उठना): जापान में इस तकनीक पर आधारित मेगलेव ट्रेन चल रही हैं। इस अति आधुनिक एवं अत्यन्त खर्चीली तकनीक में ट्रेन के ड़ब्बे में सुपर कानड़ेक्टिंग मेगनेट की सहायता से रेल ट्रेक पर प्रतिकर्षण बल के प्रयोग द्वारा ट्रेन को ट्रेक से 10 सेमी ऊपर हवा में उठा दिया जाता है जैसा कि चित्र –6 में देख सकते हैं। लगभग 4 इंच उठने से भूकम्प के कम्पन से खतरा कम हो जायेगा। यह ट्रेन पर्वतीय क्षेत्र में 10 ड़िगरी तक के ढ़लान पर चल सकती है जब दूसरी ट्रेन केवल 3 ड़िगरी ढ़लान तक सीमित हैं। प्रणोदन एवं गाइडेंस इलेक्ट्रो मेगनेटिक सस्पेंशन के समान है। इस तकनीक में ट्रेन को हवा में उठाने के लिए आवश्यक है कि ट्रेन की गति 75 किमी प्रतिघंटा से अधिक हो अतः इस ट्रेन में रबर के पहिये होते हैं जो वायुयान के पहियों की तरह गति बढने पर स्वतः ही ऊपर उठ जाते हैं ।

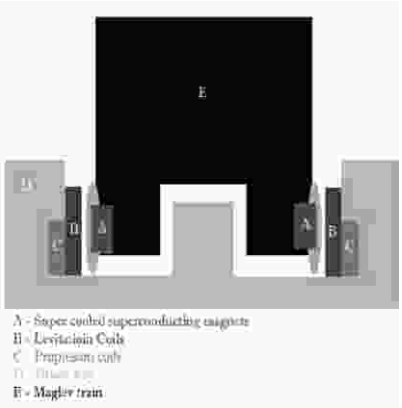

चित्र – 6

सुपर कन्ड़क्टर

तांबे के तार में जब विद्युत बहती है तो इस के अणु कंपन करने लगते हैं जिससे ऊष्मा

पैदा होती है। साधारण सुचालक धातु में तापतान घटने पर विद्युत का प्रतिरोध भी घटता है लेकिन समाप्त नहीं होता ।

लेकिन कुछ धातु जैसे नियोबियम-टाइटेनियम जब ठंड़े किये जाते हैं तो इनका अवरोध घटता चला जाता है और क्रिटीकल तापमान पहुंचने पर पूर्णतया समाप्त हो जाता है। इस प्रकार के धातु सुपर कन्ड़क्टर कहलाते हैं इनकी विशेषता यह है कि इन धातुओं में चुम्बक-क्षेत्र प्रवेश नहीं कर पाता और ये ड़ाइमेगनेटिक धातु की तरह व्यवहार करते हैं।

सुपर कन्ड़क्टर जिस चुम्बकीय क्षेत्र में रखे जाते हैं उसे पूरी तरह प्रतिकर्षित, रिपैल करते हैं। इसी सिद्धांत पर आधारित है इलैक्ट्रो ड़ाइनैमिक सस्पैन्स की मेगलेव ट्रेन ।

अल्युमिनियम, शीशा, टिन आदि 27 धातु अति निम्न तापमान पर सुपर कन्ड़क्टर बन जाते हैं। 35 कैलविन (–238 डिगरी सेलसियस) प्राप्त करने के लिये द्रवीकृत हीलियम प्रयोग में लायी जाती है जो अत्यन्त खर्चीली है। 130 कैलविन (–143 डिगरी सेलसियस) पर भी सुपर कन्ड़क्टर कार्य करते हैं जहां द्रवीकृत नाइट्रोजन प्रयोग करते हैं जिसे वायुमंडल से प्राप्त कर सकते हैं। यह सस्ती विधि है ।

मेगलेव ट्रेन की सच्चाई :

धन की आवश्यकता :– यह सत्य है की इस प्रकार की गाड़ी चलाने में प्रारम्भिक अवस्था में बहुत खर्च आयेगा। प्रथम तो वर्तमान में बिछी हुई पटरी पर मेगलेव नहीं चलेगी। इस के लिए रेलवे ट्रेक बिल्कुल नयी तकनीक पर आधारित और जमीन से उठा हुआ बनाना होगा। पूरी रेलवे ट्रेक पर तारों का जाल फैला होगा, बिजली की खपत भी अधिक होगी। ट्रेन का ड़ब्बा भी नयी तकनीक से बनेगा। अनुमान है कि केवल ट्रेक बनाने में 125 करोड़ प्रति किमी से अधिक धन की आवश्यकता होगी। ई ड़ी एस प्रणाली पर आधारित ट्रेन लगभग पांच गुना अधिक खर्चीली हैं क्योंकि सुपरकंड़क्टिंग चुम्बक को –238 डिगरी सैलसियस पर ठन्ड़ा करने के लिये अत्यन्त महंगी द्रवीकृत गैस हीलियम प्रयोग में लाते हैं।

वित्तीय प्रबन्धन सलाहकारों का मानना है कि बाद में धन की बहुत बचत होगी। अनुमान है कि जहां सड़क परिवहन में 30 सेन्ट प्रति टन मील खर्च होता है मेगलेव में केवल 7 सेन्ट प्रति टन मील होगा। मरम्मत में बहुत कम खर्च होगा क्योंकि मेगलेव हवा में चलती है अतः घर्षण बल से टूट–फूट व ऊष्मा पैदा होने से नुकसान नहीं होगा। रेल ट्रेक और ट्रेन 50 वर्षो से भी अधिक समय तक चलेगी।

ऊर्जा–सरंक्षण :– मेगलेव की कार्य कुशलता बहुत अच्छी है। मेगनेव वातानुकूलित से भी कम पावर लेती है। 450 किमी प्रति घन्टा की गति पर केवल 0.4 मेगाजूल प्रति यात्री प्रति मील खर्च होता है जब की पेट्रोल/ड़ीजल गाडियां 72 किमी प्रति घन्टा की गति पर 4 मेगा जूल प्रति यात्री प्रति मील ऊर्जा व्यय करते हैं। मेगलेव ट्रेन का विद्युत से वही भाग सक्रिय होता है जहां उस समय ट्रेन है।

पर्यावरण सुरक्षा :– मेगलेव में पैट्रोल/ड़ीजल प्रयोग नहीं होता अतः कार्बनडाइ आक्साइड़ का कोई उत्सर्जन नहीं होता। ध्वनि प्रदूषण भी 100 मीटर पर लगभग 69 डीबी होता है जबकि सामान्य ट्रेफिक में 100 मीटर पर 80 डीबी नापा गया।

मानव सुरक्षा :– मेगलेव में पैदा कम्पन मनुष्य की सहन शत्ति के स्तर से कम होते हैं। मानव सुरक्षा वायुयान यात्रा से 20 गुणा, साधारण ट्रेन से 250 गुणा व सड़क परिवहन से 700 गुणा सुरक्षित है। पैट्रोल/ड़ीजल का प्रयोग नहीं होता अतः आग लगने का खतरा नहीं। जमीन से उठे ट्रेक पर चलती है अतः पशु–प्राणी की दुर्घटना की सम्भावना नहीं है। पूरी व्यवस्था कंप्यूटर से संचालित है अतः मानव त्रुटि की सम्भावना भी नहीं होगी।

तकनीकी लाभ :– उच्च एवं समृद्ध तकनीक के प्रयोग से युवा वर्ग का परिचय होगा और भविष्य में रोजगार के अनेक नये आयाम खुलेंगे।

बुलेट ट्रेन का भारत में भविष्य :– जनवरी, 2013 के अन्तिम सप्ताह में भारतीय रेलवे इलेक्ट्रिकल इंजीनियर्स इंस्टीट्यूट की ओर से हाई स्पीड़ ट्रेनों पर दिल्ली में एक अन्तर्राष्ट्रीय सेमिनार हुआ। सेमिनार का उदघाटन करते हुए तत्कालीन रेल मन्त्री श्री पवन बंसल ने हाई स्पीड़ ट्रेन पर कोई उत्साहवर्धक टिप्पणी नहीं की। हां रेल राज्य मन्त्री श्री अधीर रंजन चौधरी ने कहा कि अभी तक हम ने छह कारीड़ोर की पहचान की है और 12वीं योजना में कई और कारीड़ोर की घोषणा की सम्भावना है ।

मुम्बई–अहमदाबाद हाई–स्पीड़ कॉरीड़ोर :– नवीनतम सूचना के आधार पर 14 फरवरी 2013 को दिल्ली में रेल मन्त्रालय और फ्रांस की राष्ट्रीय रेल कम्पनी एस एन सी एफ के साथ एक सहमति पत्र (एम ओ यू) पर हस्ताक्षर हुए जिस के अन्तर्गत इस परियोजना का संभाव्यता अध्ययन (फीजिबिलिटी स्टड़ी) कराया जायेगा जिसका पूरा खर्च फ्रांस सरकार वहन करेगी। 492 किमी लम्बे इस कॉरीड़ोर के निर्माण पर 63000 करोड़ रूपये का भारी–भरकम खर्च आयेगा। यह रेलवे ट्रेक एलीवेटिड होगा और इस पर 350 किमी/घंटे तक की तीव्र गति की मेगलेव ट्रेन वलेंगी।

से.नि. वैज्ञानिक, रक्षा अनुसंधान विकास संगठन,
मयूर विहार, देहरादून,
सदस्य, भारतीय विज्ञान लेखक संघ,
उत्तराखंड प्रभाग

जरबेरा

निशा वर्मा

जरबेरा एक व्यापारिक पौधा है जो कि कई तरह की जलवायु में उगाया जाता है। यह दक्षिण अफ्रीका का पौधा है। इसे साउथ अफ्रीकन डेजी, ट्रान्सवाल डेजी तथा बरबरटॉन डेजी भी कहते हैं। जरबेरा के पौधे में बहुत ही आर्कषक पुष्प आते हैं। इसके फूलों को लोग घरो में सजावट के लिये लगाते हैं, क्योंकि फूल पानी में रखने पर कई दिनों तक खराब नहीं होते। इनके फूलों के पुष्प गुच्छ अर्थात गुलदस्ते तैयार किये जाते हैं। आजकल जरबेरा व्यापार का मुख्य स्रोत है। गुलाब, गुलदाउदी, कारनेशन तथा ट्यूलिप के साथ ही यह एक महत्वपूर्ण सजावटी पौधा हैं।

जरबेरा की लगभग चालीस स्पीशीज हैं, जो कि अफ्रीका, एशिया तथा दक्षिण अमेरिका में पाई जाती हैं। जरबेरा की मुख्य स्पीशीज जरबेरा जेमसोनाई, जरबेरा एसपेटेनीफोलिया, जरबेरा अरेन्सिया, जरबेरा कुजीयाना तथा जरबेरा विरिडीफोलिया हैं। जरबेरा का नाम जर्मन पर्यावरणविद ट्रागॉट जरबर के नाम पर पड़ा जिन्होने जरबेरा स्पीशीज को बरबरटॉन डिस्टिक से प्राप्त किया।

यह एस्टरेसी कुल का पौधा है। इसमें कई रंग के पुष्प आते हैं जैसे पीला, क्रीम, गुलाबी, मैरून, लाल तथा नारंगी इत्यादि। क्रीम क्लीमेन्टाइन (नारंगी), फ्लेमिंगो (हल्का पीला), टी क्वीन (गुलाबी), डस्टी (लाल) वेलेन्टाइन (गुलाबी), फ्रेडोरेला (लाल), डेल्फी (सफेद) तथा यूरेनस (पीला) जरबेरा के मुख्य कल्टी वार्स हैं।

फ्लावर हेड के आधार पर जरबेरा को सिंगल, सेमीडबल तथा डबल कल्टीवार में विभाजित किया जाता है। फ्लावर हेड एक कैपिटुलम होता है जो कि वास्तव में बहुत से पुष्पों का एक समूह होता है तथा दिखने में यह एक अकेले पुष्प की भाँति प्रतीत होता हैं।

वास्तव मे जरबेरा के पुष्प कुछ ही रंग के होते हैं परन्तु संकरण विधि से इसके बहुत से रंग के पुष्प बनाये जा सकते हैं। नर्सरी तथा प्रयोगशाला में लगातार नये हाइब्रिड एवम् कल्टीवार बना कर बाजार में प्रेषित किये जा रहे हैं। जरबेरा पूरे साल में कभी भी लगाया जा सकता है परन्तु सितम्बर तथा अक्टूबर का महीना उचित रहता है।

जरबेरा में सीडलिंग की अवस्था एक महीने तक, जुवेनाइल अवस्था चार–पाँच महीने तक तथा रिप्रोडक्टिव अवस्था कई वर्षो तक रहती है। पौधे को लगाने के दो साल तक उसे अच्छी तरह विकसित होने देना चाहिये, उस पौधे से नये पौधे नहीं बनाने चाहिये।

जरबेरा को सेक्सुअल तथा एसेक्सुअल दोनो प्रकार से उगाया जा सकता है लेकिन इसके पौधे में बीज परिपक्व नहीं होते हैं। इन बीज से यदि पौधा विकसित भी हो जाये तो फूल आने में काफी समय लग जाता है अतः नये पौधे बीज से न बना कर वेजिटेटिव प्रोपॉगेशन से बनाये जाते हैं जैसे–डिवीजन, कटिंग एवम् एइक्रोप्रोपॉगेशन। डिवीजन विधि में बड़े–बड़े क्लम्प को छोटे क्लम्प में विभाजित कर मिट्टी में लगा दिया जाता है। छोटे क्लम्प को लगाने से पहले उसकी जड़ों, पत्तियों तथा सकर्स को थोड़ा काट दिया जाता है। क्लम्प को रोपने के समय पौधे का कुछ भाग मिट्टी की सतह से कुछ ऊपर रखना चाहिये।

कटिंग विधि द्वारा भी जरबेरा के पौधे तैयार किये जा सकते हैं। इस विधि में पौधे को तीन हफ्ते तक बिना पानी के रखा जाता है तथा जब पौधे में जड़े निकल आती हैं तब उसे पीट सॉइल में लगा दिया जाता है। कटिंग विधि द्वारा पौधे तैयार करते समय आर्द्रता 80 प्रतिशत होनी चाहिये।

यद्यपि जरबेरा बीज कटिंग तथा डिवीजन विधि के द्वारा उगाया जाता हैं परन्तु यह तरीका कॉर्मशियल स्तर पर पौधे उगाने के लिये उचित नहीं होता है क्योंकि नये पौधे बनने में बहुत समय लेते हैं। कम समय में अधिक संख्या में पौधे बनाने के लिये ऊतक संवर्धन विधि (टिश्यू कल्चर तकनीकी) का इस्तेमाल किया जाता है। इस विधि से हम पौधे बनाने की संख्या को कई गुना तक बढा सकते हैं।

ऊतक संवर्धन विधि में सबसे पहले एक्सप्लान्ट की आवश्यकता होती हैं जिससे पौधे को विकसित किया जा सकता है। पौधे के किसी वर्धी भाग को एक्सप्लान्ट की तरह प्रयोग कर सकते है जैसे–तने का वर्धी ऊपरी भाग, कलिका अथवा पुष्पक्रम। एक्सप्लान्ट को निर्जमित कर उसे निर्जमित मीडियम में रखते हैं।

ऊतक संवर्धन के लिये बहुत से मीडियम उपलब्ध हैं जैसे–व्हाइट्स मीडियम तथा एम एस मीडियम। मुराशिग तथा स्कूज मीडियम जरबेरा के संवर्धन के लिये उपयुक्त होता है। ऊतक संवर्धन विधि में तना , पत्ती एवम् जड़ को बनाने के लिये पादप हार्मोन जैसे–आई ए ए (इण्डोल एसीटिक एसिड) आई बी ए (इण्डोल ब्यूटॉरिक एसिड) तथा काइनेटिन की विभिन्न सांन्द्रतायें मीडियम में मिला दी जाती हैं। संर्वधन से सम्बंधित सभी कार्य को प्रयोगशाला के अन्दर सूक्ष्म जीवाणु रहित वातावरण में किया जाता है।

जरबेरा के एक्स्प्लांट को निर्जमित कर के निर्जमित मीडियम के अन्दर प्रयोगशाला में रख दिया जाता है। कुछ दिनों पश्चात एक्स्प्लांट से पूर्ण पौधा विकसित हो जाता है। पूर्ण पौधा बनने के पश्चात पौधे को मीडियम से निकाल कर पॉट ट्रे में लगा दिया जाता है। ट्रे में मिट्टी, रेत तथा एफ वाई एम का अनुपात 1:1:1 होना चाहिये। ट्रे को पहले हार्डेनिंग चेम्बर तथा फिर पाली हाऊस में रखते हैं। कुछ दिनों पश्चात पौधे को सामान्य जलवायु में लगा दिया जाता है।

हल्की न्यूट्रल तथा हल्की क्षारीय मिट्टी जरबेरा के उत्पादन के लिये उत्तम होती है। मिट्टी का तापमान 18–20° से होना चाहिये तथा पी एच 5.5–7.0 होना चाहिये। ग्रीन हाउस में दिन का तापमान 22–25° तथा रात में 20–22° जरबेरा के लिये उत्तम रहता है। आपेक्षिक आर्द्रता 80–85 होनी चाहिये।

अधिक पुष्पों के लिये फास्फोरस तथा पोटाश की आवश्यकता होती है। इनका उपयोग पौधे की पत्तियाँ बड़ी करने में सकर्स बनाने में तथा पुष्पों का आकार बढाने में सहायता करता हैं।

उष्ण कटिबन्धीय जलवायु में यह खुले में लगाया जाता है लेकिन समशीतोष्ण जलवायु में इसे पाले से बचाने के लिये ग्रीन हाउस में लगाते हैं। जाड़ों में जरबेरा को खुले की तथा गर्मी में इन्हें हल्की छाया की आवश्यकता होती हैं। पूर्ण सूर्य के प्रकाश में पुष्पों की प्रचुरता रहती है।

पुष्पों को तब काटना चाहिये जब डिस्क फ्लावर की पंक्ति पुष्प वृत्त के लम्बवत हो। पुष्पों के वृत्त को राइजोम के पास से मरोड़ कर के तोड़ना चाहिये। पुष्पों को तोड़ कर प्रिजरवेटिव सॉल्यूशन में रखना चाहिये। इसके लिये हाइपोक्लोराइट के सिल्वर नाइट्रेट का प्रयोग सॉल्यूशन में बैक्टीरियल संक्रमण को रोकता है।

पुष्पों को प्लास्टिक के कप के आकार के कवर में रखा जाता है तथा एक ही लम्बाई के फूलों को छिद्र युक्त डिब्बे में पैक कर के बाजार में भेज दिया जाता है। जरबेरा के पुष्प की वास लाइफ लगभग 10–14 दिन तक होती है।

स्वस्थ पौधे पर कई तरह के रोग लगने तथा कीड़े लगने की संभावना होती है। फंगस तथा रॉट के संक्रमण से बचाव के लिये पुरानी पत्तियों को हटा देना चाहिये तथा पौधे को ओवर वाटरिंग से बचाना चाहिये।

जरबेरा में लगने वाले रोग – रूट रॉट – यह पीथियम इरेगुलरली तथा राइजोक्टोनिया फंगस के द्वारा होता है। इसकी वजह से पौधे की वृद्धि रुक जाती है। अंततः पूरा पौधा सूख जाता है। इस रोग को रोकने के लिये मृदा को निर्जमित कर लेना चाहिये।

ब्लाइट–यह रोग बॉट्राइटिस सिनेरिया के द्वारा फैलता है जो कि पौधे के नये ऊतकों को नष्ट कर देता है जिसके कारण पौधे पर काले रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिये थिरम या कैप्टन का छिड़काव करना चाहिये।

पाउडरी मिल्ड्यू – जरबेरा के पौधे पर यह रोग एरिसाइफी स्पीशीज के द्वारा फैलता है। इस रोग में पौधे की पत्तियों पर पाउड़र की एक पतली परत बन जाती है। माइल्डेक्स फंजीसाइड के प्रयोग से पौधे को बिना नुकसान पहुँचाये इसकी रोकथाम की जा सकती है।

लीफ स्पॉट – यह रोग अलटरनेरिया स्पीशीज के द्वारा फैलता है तथा इस रोग की रोकथाम के लिये बॉरडेक्स मिश्रण का छिड़काव करना चाहिये।

बैक्टीरियल ब्लाइट – जीवाणु के द्वारा होने वाले इस रोग में पौधे की पत्तियों पर बड़े गोलाकार तथा काले भूरे रंग के वृत्त बन जाते है।

विषाणु रोग – मोजेक रोग एक विषाणु के द्वारा फैलने वाला रोग है जो कि पौधे की मोल्टिंग करता है

कीट–जरबेरा के पौधे को ग्रीन हाउस लाई, लीप माइनिंग लाई, माइट्रस तथा एफिड के द्वारा भी नुकसान पहुँचता है। इसके लिये उचित रसायन जैसे–मलाथियान, एसीफेट तथा एण्डोसल्फॉन का छिड़काव करना चाहिये।

नीमैटोड – जरबेरा में मिलेडोगाइन स्पीशीज के द्वारा रूट नॉट रोग होता है। इसके कारण पौधे की जड़े विकसित नहीं हो पाती हैं। इसकी रोकथाम के लिये पौधे को लगाने से पहले वाइडेट से ट्रीट कर लेना चाहिये।

जरबेरा में कभी–कभी तत्वों की अपूर्णता के कारण रोग लग जाते हैं जिन्हें डिफिशन्सी डिजीज कहते हैं। यह मुख्यतः लोह, मैग्नीशियम तथा मैगनीज की कमी के कारण होते हैं।

लोह तथा मैगनीज की कमी के कारण पत्तियाँ पीली हो जाती हैं तथा पत्ती की शिरायें हरी रहती हैं।लोह तथा मैग्नीशियम की कमी से किनारे पीले हो जाते हैं तथा पत्ती सामान्य से मोटी हो जाती है। आयरन तथा मैगनीज की कमी को चीलेट्रस के माध्यम से उपचारित किया जाता है तथा मैग्नीशियम की कमी के लिये मैग्नीशियम सल्फेट का छिड़काव करते हैं।

असिस्टेंट प्रोफेसर
वनस्पति विज्ञान विभाग
राजकीय महाविद्यालय,
बिलासपुर, जि. रामपुर (उ.प्र.)

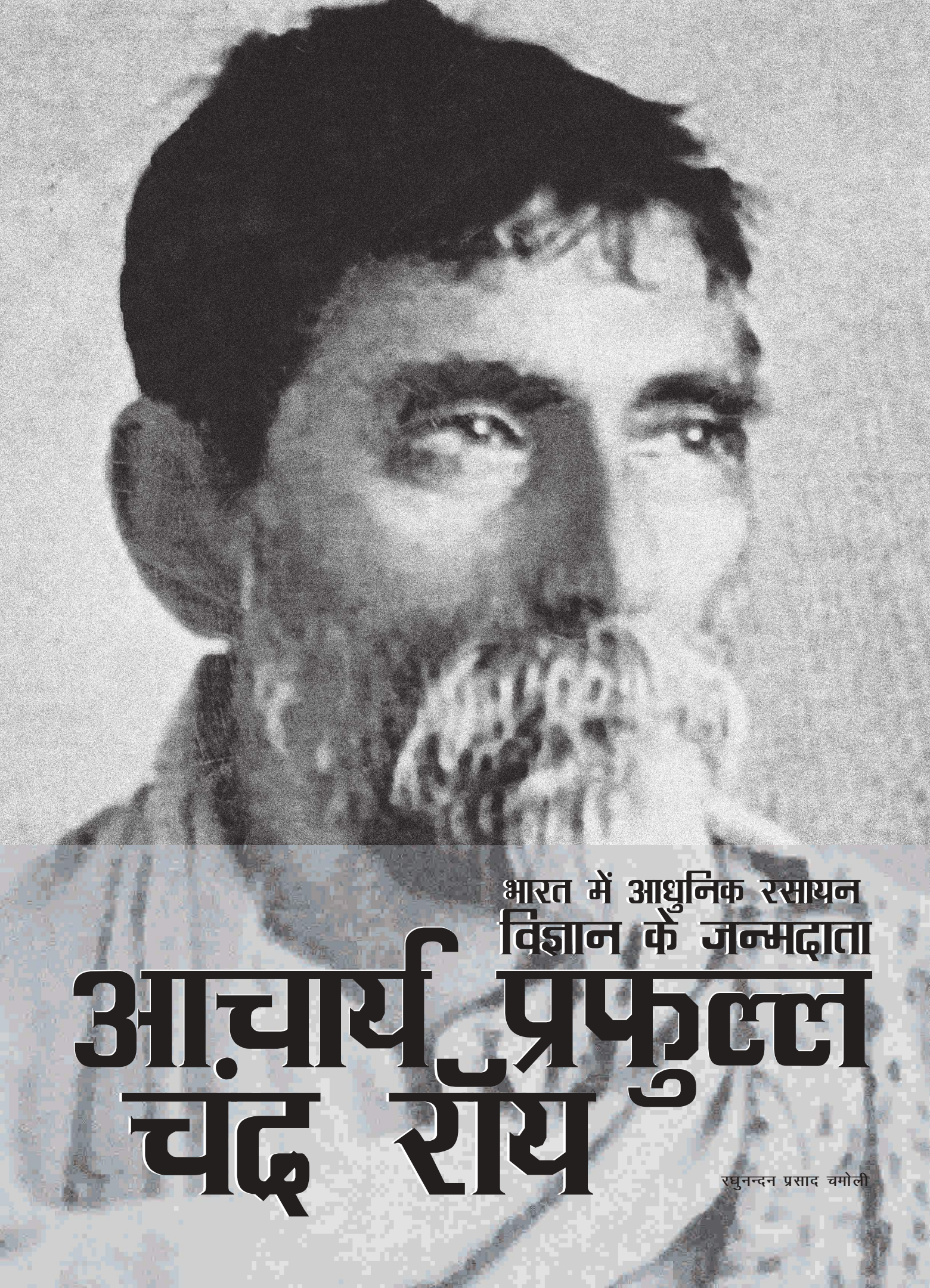

भारत में आधुनिक रसायन विज्ञान के जन्मदाता

आचार्य प्रफुल्ल चंद्र रॉय

रघुनन्दन प्रसाद चमोली

आदिकाल से ही भारत की पावन धरती पर अनेक महान विभूतियाँ जन्म लेती रही हैं, जिनकी सांस्कृतिक एवं वैज्ञानिक उपलब्धियों पर हर भारतीय को गर्व है। आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र राय एक ऐसी ही महान् विभूति थे, जिन्होंने भारत में आधुनिक रसायन विज्ञान को जन्म देकर, विज्ञान के क्षेत्र में देश का गौरव बढ़ाया है। आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र रॉय का जन्म 2 अगस्त, 1861 को अविभाजित भारत के पूर्वी बंगाल के जैसोर (बाद में इसका नाम खुलना हो गया, और अब यह बांगलादेश में है) जिले के अन्तर्गत रूड़ौली गांव में एक सुशिक्षित और सुसंस्कृत जमींदार परिवार में हुआ था। उनके पिता का नाम श्री हरिशचन्द्र रॉय और माता का नाम श्रीमती भुवन मोहिनी देवी था। उनके पिता अंग्रेजी, फारसी और बंगला भाषाओं के अच्छे ज्ञाता थे, और तत्कालीन समाज सुधारकों ईश्वर चंद्र विद्यासागर आदि का उन पर अच्छा प्रभाव था। वे अपने गांव में एक प्राथमिक विद्यालय का संचालन भी करते थे। आचार्य प्रफुल्ल चंद्र के जन्म–काल में भारत एक कठिन दौर से गुजर रहा था। प्रथम स्वतंत्रता संग्राम या भारतीय सैन्य द्रोह को ईस्ट इण्डिया कंपनी के प्रशासकों ने निर्ममता से कुचल दिया था। संपूर्ण राष्ट्र घोर अपमान, निर्दयता, प्रताड़ना और निराशा से ग्रस्त था। यह एक चमत्कार ही था कि देश को इस संकट से उबारने के लिये सन् 1860 से 1870 के मध्य के दशक में आचार्य प्रफुल्ल चंद्र के साथ कुछ अन्य महान विभूतियों का अवतरण हुआ, जिन्होंने देश की राजनीतिक, साहित्यिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक चेतना को प्रस्फुटित कर दबी–कुचली जनता को सर्वांगीण विकास की रहा दिखा दी। इन महान सपूतों में प्रमुख थे पंडित मोती लाल नेहरू, स्वामी विवेकानन्द, लाला लाजपत राय, महात्मा गांधी, रवीन्द्र नाथ टैगोर और सर जगदीश चंद्र बसु। देश की कठिन घड़ी में एक साथ एक दशक के अंतर्गत कई महापुरुषों का जन्म हमें भगवद्गीता की इस उक्ति का स्मरण कराता है:

यदा यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृज्याम्यहम्।।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।।

आचार्य प्रफुल्ल चंद्र रॉय ने प्रारम्भिक शिक्षा अपने गांव में अपने पिता द्वारा स्थापित विद्यालय में ही ग्रहण की और अग्रेतर पढ़ाई के लिये उन्होंने कलकत्ता के हेयर स्कूल में प्रवेश लिया था। इस स्कूल की स्थापना सन् 1817 में राजा राम मोहन रॉय और डेविड हेयर नामक अंग्रेज ने मिलकर की थी। यह उस जमाने का प्रतिष्ठित अंग्रेजी स्कूल था। परन्तु पेचिश की गंभीर बीमारी के कारण प्रवेश के दो वर्ष बाद ही आचार्य रॉय को स्कूल छोड़ना पड़ा। वे घर पर रह कर ही अध्ययन करने लगे। उनको विभिन्न विषयों की पुस्तकों से बेहद लगाव था। साहित्य, इतिहास तथा जीवन–कथा संबंधी पुस्तकें पढ़ने में जुट जाते थे। उन्होंने "चैंबर" का "जीवन चरित्र संग्रह" अनेक बार पढ़ा। इसके अतिरिक्त न्यूटन, गैलीलियो, सर विलियम जोन्स, लीडन और बेंजामिन फ्रैंकलिन की जन्म–कथाओं ने उन्हें अत्यधिक प्रभावित किया। जोन्स की माता का यह उपदेश–"पढ़ते रहो, तुमको ज्ञान हो जायेगा" उनके जीवन का मूल मंत्र था। बेंजामिन फ्रैंकलिन की जीवनी आचार्य प्रफुल्ल चंद्र राय को बचपन से ही प्रिय थी। अमेरिका के पेंसिलवेनियां का निवासी फ्रैंकलिन किस प्रकार अपने जीवन का प्रारम्भ एक अल्प वेतन–भोगी कंपोजिटर के रूप में कार्य करते हुये केवल अपने उत्साही और अथक परिश्रम के बल पर देश का महान व्यक्ति बन गया था, यह तथ्य हमेशा उनके लिये शिक्षा और प्रेरणा का स्रोत रहा।

एक साल के अंतराल के बाद सन् 1874 में आचार्य रॉय ने ब्रह्म समाज के संस्थापक केशव चंद्र सेन के अलबर्ट स्कूल में प्रवेश लिया और सन् 1879 में इंट्रेस (हाईस्कूल) की परीक्षा उत्तीर्ण की। तत्पश्चात उन्होंने ईश्वर चन्द्र विद्यासागर द्वारा स्थापित मेट्रोपॉलिटन कॉलेज (वर्तमान में विद्यासागर कॉलेज) में प्रवेश लेकर एफ. ए. की पढ़ाई आरम्भ कर दी। अब रसायन विज्ञान में उनकी रुचि बढ़ने लगी थी। उस समय प्रेसिडेंसी कॉलेज में प्रसिद्ध शिक्षक एलेक्जेंडर पेडलर रसायन शास्त्र पढ़ाते थे। समय निकालकर आचार्य रॉय उनके व्याख्यान सुनने के लिये प्रेसिडेंसी कॉलेज भी जाते थे। पेडलर के व्याख्यानों ने ही उन्हें रसायन विज्ञान के अध्ययन के लिए प्रथम प्रेरणा प्रदान की। रसायन विज्ञान की जो भी पुस्तक उन्हें प्राप्त होती थी, उसे पूरा पढ़ने के बाद ही उन्हें चैन मिलता था।

सन् 1882 में आचार्य प्रफुल्ल चंद्र रॉय गिलक्राइस्ट छात्रवृत्ति परीक्षा उत्तीर्ण कर एडिनबरा विश्वविद्यालय में प्रवेश लेने के लिये इंग्लैंड पहुंचे। वहां पर उनकी मुलाकात सर जगदीश चंद्र बसु से हुई। तब से लेकर जीवन पर्यन्त इन दोनों वैज्ञानिकों की प्रगाढ़ मित्रता कायम रही। आचार्य प्रफुल्ल चंद्र रॉय ने एडिनबरा विश्वविद्यालय में बी.एससी. की कक्षा में रसायन विज्ञान, जन्तु विज्ञान तथा वनस्पति विज्ञान विषय लेकर प्रवेश लिया था। रसायन विज्ञान का अध्ययन उन्होंने प्रो. एलेक्जेंडर क्रम–ब्राउन के निर्देशन में किया। सन् 1885 में उन्होंने बी.एससी. की उपाधि प्राप्त की और उसके बाद उन्होंने डी.एससी. की उपाधि हेतु कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। उनकी थिसिस का विषय था, "डॅबल सल्फेट्स ऑफ कॉपर, कोबाल्ट, पोटेसियम ऐंड एलाइड सब्सटांसेज"। सन् 1887 में उन्हें डी. एससी. की उपाधि भी प्राप्त हो गई ओर साथ ही उन्हें होप प्राइज छात्रवृत्ति भी प्रदान की गई, जिसके कारण एक वर्ष और वे इंग्लैण्ड में रुक सके। वर्ष 1887–1888 के लिये वे एडिनबरा विश्वविद्यालय की केमिकल सोसायटी के उपाध्यक्ष चुने गये थे। एक भारतीय के लिये यह एक बहुत बड़ा सम्मान था। एडिनबरा विश्वविद्यालय में अध्ययन के दौरान उन्होंने वहां पर "भारत गदर के पहले और बाद में" विषय पर आयोजित निबंध प्रतियोगिता में भाग लिया। अदम्य साहस का परिचय देते हुये आचार्य रॉय ने इस निबंध प्रतियोगिता में अंग्रेजों की भारतीयों के प्रति दुर्भावनापूर्ण नीतियों पर तीखा प्रहार किया था। एक वैज्ञानिक की देश–भक्ति और निष्ठा का यह अनोखा उदाहरण था।

सन् 1888 में आचार्य प्रफुल्ल चंद्र रॉय भारत लौट आए। वे भारतीय शिक्षा सेवा में जाना चाहते थे, परन्तु उन दिनों भारतीयों को उच्च पदों पर नियुक्त नहीं किया जाता था। अतः जुलाई 1889 में प्रेसिडेंसी कॉलेज में जूनियर प्रोफेसर के

पद पर रू० 250/– प्रति माह वेतन पर नियुक्ति स्वीकार कर वे पूर्ण निष्ठा और लगन से अध्यापन, शोध और अन्वेषण के कार्य में जुट गये। आचार्य प्रफुल्ल चंद्र रॉय चाहते थे कि रसायन विज्ञान का लाभ जन–साधारण तक भी पहुंचे, इसलिये सबसे पहले उनका ध्यान खाद्य–पदार्थों में मिलावट की तरफ गया। उन्होंने तीन वर्ष तक अथक परिश्रम कर भारतीय घी और तेल में मिलावट ज्ञात करने के लिए उनका विश्लेषण किया।

सन् 1891 में प्रेसिडेंसी कॉलेज में उनके प्रथम शोध कार्य का विषय था, "कंज्यूगेटेड सल्फेट्स ऐंड आइसोमॉरफस मिक्सचर ऑफ द कापर–मैग्नीसियम ग्रुप"। उनकी सबसे बड़ी शोध उपलब्धि मरक्यूरस नाइट्राइट का संश्लेषण है। सन् 1895 में मरकरी एवं तनु नाइट्रिक अम्ल की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप उन्होंने मरक्यूरस नाइट्राइट को पीले रंग के क्रिस्टलीय ठोस के रूप में प्राप्त किया। उन्होंने इस यौगिक का विधिवत विस्तृत अध्ययन किया और देखा कि यह पानी में घुलने पर मरकरी तथा मरक्यूरिक नाइट्राइट में विच्छेदित हो जाता है, जैसे कि समीकरण 1. में प्रदर्शित किया गया है।

$$Hg_2(NO_2)_2 \rightleftharpoons Hg + Hg(NO_2)_2$$

मरक्यूरस नाइट्राइट मरकरी मरक्यूरिक नाइट्राइट

मरक्यूरस नाइट्राइट का संश्लेषण नाइट्राइट रसायन के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण खोज थी। इंग्लैण्ड तथा जर्मनी के अनेक तत्कालीन रसायनज्ञों ने इस खोज की पुष्टि अपनी प्रयोगशालाओं में की और आचार्य रॉय की इस उपलब्धि की प्रशंसा की । इसके बाद आचार्य राय ने मरक्यूरिक हाइपोनाइट्राइट तथा एल्केलाइन अर्थ्स के नाइट्राइटों का संश्लेषण किया। सन् 1895 के बाद वे अनेक धात्विक नाइट्राइटों, अमोनियम नाइट्राइट एवं ऐमीन नाइट्राइटों का संश्लेषण सफलतापूर्वक करते रहे। जर्मनी के प्रसिद्ध भौतिक रसायन शास्त्री डा० हैंस पिक ने समीकरण 1. में प्रदर्शित मरक्यूरस नाइट्राइट – मरक्यूरिक नाइट्राइट साम्य पर व्यापक अध्ययन किया, जोकि उस समय भौतिक रसायन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण शोध कार्य माना गया था।

आचार्य प्रफुल्ल चंद्र रॉय ने अपने शिष्यों प्रो० एस० सी० मुखर्जी तथा प्रो० नील रतन धर के सहयोग से नाइट्राइटों के विलयनों के भौतिक गुणों यथा हिमांक अवनमन, चालकता आदि का विस्तृत अध्ययन किया। इन प्रयोगों ने ही भारत में भौतिक रसायन में शोघ कार्य को जन्म दिया। बाद में आचार्य रॉय ने प्लेटिनम, गोल्ड, मरकरी के विभिन्न कार्बनिक यौगिकों को प्राप्त किया एवं उनके गुणों का भी अध्ययन किया। अपने शोध कार्य के अंतिम दिनों में उन्होंने कई फ्लोरिनेटेड यौगिकों का संश्लेषण किया। इनमें मेथिल फ्लोरोफोर्मेट, एथिल फ्लोरोफोर्मेट, फ्लोरोएसिटोन और फलोरोएसिटल प्रमुख है। उनका शोध–कार्य केवल अकार्बनिक एवं विश्लेषणात्मक रसायन के क्षेत्र तक ही सीमित नहीं था। कार्बनिक रसायन एवं भौतिक रसायन के क्षेत्र में भी उन्होंने उच्च कोटि का योगदान किया है। उनके नेतृत्व में ही भारत में रसायन विज्ञान के अध्ययन एवं शोध की प्रथम पाठशाला अस्तित्व में आई और यह हमारे देश में विज्ञान, तकनीकी एवं औद्यौगिक विकास की कहानी का आगाज था। आचार्य रॉय ने सादा जीवन जीते हुये त्याग, तपस्या और कठिन परिश्रम से भारत में रसायन विज्ञान के अध्ययन और शोध की नींव रखी। निम्नलिखित उक्ति उन पर भी चरितार्थ होती है।

Chemists are a strange class of mortals who seek their pleasures among soot and flame, poisons and poverty, yet among all these evils, I seem to live so sweetly that I may die if I would change places with the Persian king.

- Becher (1625-1682)

प्रेसिडेंसी कॉलेज में नियुक्ति के पश्चात शीघ्र ही आचार्य प्रफुल्ल चंद्र रॉय ने बंगाल केमिकल ऐंड फार्मास्युटिकल वर्क्स की स्थापना की। उनका उद्देश्य था कि बेराजगार युवकों को रोजगार मिल सके। वे नहीं चाहते थे कि पढ़े–लिखे युवक छोटी–मोटी नौकरियों के लिये इधर–उधर भटकते रहें। उन्होंने कुछ अन्य रसायन उद्योगों को भी विकसित करने का निश्चय किया। सोडपुर सल्फ्यूरिक ऐसिड वर्क्स, कलकत्ता पॉटरी वर्क्स, बंगाल एनैमिल वर्क्स, बंगीय नेवीगेशन कंपनी तथा बंगलक्ष्मी मिल्स के संचालन में उनकी अहम् भूमिका थी।

आचार्य प्रफुल्ल चंद्र रॉय के प्रकाशित शोध–पत्रों की संख्या लगभग 160 है। शोध–पत्रों के अतिरिक्त उन्होने कई अन्य उपयोगी लेख और पुस्तकें भी प्रकाशित की थीं। उनकी पुस्तक "द हिस्ट्री ऑफ हिंदू केमिस्ट्री" का प्रथम खंड 1902 में तथा द्वितीय खंड 1908 में प्रकाशित हुआ था। इस पुस्तक में उन्होंने प्राचीन काल में भारतीयों के उच्च स्तरीय रसायन शास्त्र के ज्ञान एवं अन्वेषणों का वर्णन किया है। विश्वभर के वैज्ञानिकों ने इस कृति का स्वागत किया और इसे विज्ञान के इतिहास में अद्वितीय योगदान माना। इस पुस्तक को सन् 1956 में इंडियन केमिकल सोसायटी ने "हिस्ट्री ऑफ केमिस्ट्री इन एनशेंट एंड मेडिवल इंडिया" शीर्षक से पुनः प्रकाशित किया। आचार्य प्रफुल्ल चंद्र रॉय ने अपनी आत्म–कथा भी लिखी जो कि 1925 में "लाइफ ऐंड इक्सपीरियन्स ऑफ ए बंगाली केमिस्ट" के नाम से प्रकाशित हुई। सन् 1911 में डॉ० रॉय को ब्रिटिश सरकार ने 'सर' की उपाधि से सम्मानित किया।

प्रेसिडेंसी कॉलेस से रसायन विज्ञान के प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष के पद से सेवानिवृत्त होने के बाद सन् 1916 में कुलपति सर आशुतोष मुखर्जी के अनुरोध पर उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय के यूनिवर्सिटी कॉलेज ऑफ साइन्स में पलित प्रोफेसर के पद पर नियुक्ति स्वीकार की और जीवन–पर्यंत वे इस पद पर बिना किसी वेतन या मानदेय के कार्य करते रहे। वे अपने पूरे वेतन को विश्वविद्यालय को ही दान में देते थे और पूर्व सेवा की पेंशन से ही अपना खर्चा चलाते थे। आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र रॉय को सन् 1920 में इंडियन साइंस कांग्रेस का अध्यक्ष चुना गया था। सन् 1924 में इंडियन केमिकल सोसायटी की स्थापना हुई और आचार्य रॉय इसके प्रथम अध्यक्ष चुने गये थे। आचार्य रॉय एक आदर्श शिक्षक थे। अपने छात्रों से उन्हें अगाध स्नेह था। वे सादगी और त्याग की प्रतिमूर्ति थे। फिजूलखर्ची एवं दिखावे से उन्हें नफरत थी। आवश्यकता पड़ने पर समाज सेवा के कार्यों में भी वे सदैव सक्रिय रहते थे। समाज में व्याप्त विभिन्न

कुरीतियों को दूर करने एवं अकाल, बाढ़ आदि प्राकृतिक आपदाओं के समय पीड़ित लोगों को राहत पहुंचाने में भी उन्होंने उल्लेखनीय कार्य किया था।

एक महान रसायन शास्त्री होने के साथ–साथ आचार्य रॉय एक महान देश भक्त भी थे। वे विज्ञान की अपेक्षा देश की आजादी को अधिक महत्वपूर्ण मानते थे। एक बार उन्होंने कहा था "विज्ञान इंतजार कर सकता है, परन्तु देश की आजादी इंतजार नहीं कर सकती"। यद्यपि सरकारी सेवा में होने के कारण आजादी के लिये चल रहे आंदोलनों में वे भाग नहीं ले सकते थे। परन्तु गोपनीय रूप से वह कई आंदोलनों में सक्रिय रहे। सन् 1921 से 1931 के मध्य उन्होंने देश के विभिन्न भागों में जाकर खादी का प्रचार किया और छुआ–छूत के उन्मूलन हेतु आंदोलन चलाया। आचार्य राय ने खुलना, दिनाजपुर, कटक आदि शहरों में आयोजित कांग्रेस की सभाओं की अध्यक्षता निर्भीक होकर की। गांधी जी तथा गोपाल कृष्ण गोखले के साथ उनके मैत्रीपूर्ण संबंध थे। कलकत्ता में गांधी जी की प्रथम सभा का आयोजन 19 जनवरी, 1902 को उन्होंने ही किया था। उनके सरल जीवन से प्रभावित होकर एक बार गांधी जी ने कहा था कि यह विश्वास करना कठिन है कि भारतीय लिबास और सरल व्यवहार वाला यह व्यक्ति इंग्लैण्ड के एडिंबरा विश्वविद्यालय से डी.एससी. की डिग्री प्राप्त महान वैज्ञानिक एवं प्रोफेसर है।

अपने जीवन के उत्तरार्द्ध में आचार्य रॉय कलकत्ता विश्वविद्यालय के यूनिवर्सिटी कालेज ऑफ साइंस में एक साधारण से कमरे में रहते थे। इस अवधि में उन्होंने अपनी संपूर्ण आय विश्वविद्यालय को दान कर दी थी। इस दान से उन्होंने भारत के प्राचीन रसायन शास्त्री नागार्जुन एवं सर आशुतोष मुखर्जी के नाम से पुरस्कार एवं छात्रवृत्तियां देने की व्यवस्था कर दी। अपने जीवन में आचार्य रॉय खुले दिल से निर्धन तथा मेधावी छात्रों की सहायता करते रहे। 6 जुलाई, 1944 को इस महान कर्मयोगी का पार्थिव शरीर पंचतत्व में विलीन हो गया। आज शारीरिक रूप से आयार्य प्रफुल्ल चंद्र रॉय हमारे मध्य नहीं है। परन्तु भारत में आधुनिक रसायन विज्ञान का यह जन्मदाता विज्ञान के इतिहास में सदैव अमर रहेगा और वर्तमान तथा आने वाली पीढ़ियों को उच्च कोटि का शिक्षण एवं शोध कार्य करने के लिये प्रेरित करता रहेगा। किसी शायर ने ठीक ही कहा है:

हजारो साल नरगिस, अपनी बेनूरी पे रोती है।
बड़ी मुश्किल से होता है, चमन में दीदावर पैदा।।

प्राचार्य (से.नि.)
उच्च शिक्षा, उत्तराखण्ड शासन
मकान नं. 10 लेन नं. 2,
आशीर्वाद एन्क्लेव, देहरादून – 248001
उत्तराखण्ड

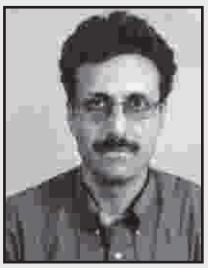

डॉ. आनन्द शर्मा उत्कृष्ट शोध पत्र के लिये पुरस्कृत

मौसम केन्द्र, उत्तराखण्ड के निदेशक डॉ. आनन्द शर्मा को दि. 22 मार्च, 2013 को विश्व जल दिवस के अवसर पर भारत सरकार के पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय द्वारा आयोजित कार्यक्रम में सर्वोत्कृष्ट शोध पत्र प्रस्तुत करने के लिये पुरस्कृत किया गया। उनका यह शोध पत्र 'जलवायु के सन्दर्भ में समुद्र की भूमिका' विषय पर था। डॉ. शर्मा को यह पुरस्कार इसके पूर्व भी दो बार प्राप्त हो चुका है। एक श्रेष्ठ विज्ञानी के रूप में स्थापित डॉ. शर्मा उत्तराखण्ड के गौरव हैं। इस क्षेत्र में आपका अनुभव व्यापक है। जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय से पढ़े डॉ. शर्मा ने क्रेन्दीय लोक सेवा आयोग के माध्यम से भारत मौसम विज्ञान विभाग में 1989 में प्रवेश किया। 1990–1996 तक वे एग्रोमेट रिसर्च यूनिट, बैंगलूरू के प्रमुख रहे। 1996 से 1998 तक सिक्किम मौसम केन्द्र के तथा 1998 से 2002 तक बाढ़ मौसम कार्यालय, दिल्ली के निदेशक रहे। 2002 से वे उत्तराखण्ड मौसम विज्ञान केन्द्र के निदेशक तथा वैज्ञानिक–ई के पद पर है। जलवायु विज्ञान में आपने संयुक्त राज्य अमेरिका तथा फ्रांस में विशेष प्रशिक्षण प्राप्त किया है। जलवायु विज्ञान के अत्तिरिक्त, कृषि विज्ञान, वन विज्ञान तथा भूविज्ञान में भी आपने प्रशिक्षण प्राप्त किया है। वे लाल बहादूर शास्त्री ऐकेडमी, मसूरी, उत्तराखण्ड प्रशासन ऐकेडमी, नैनीताल, वन अनुसन्धान संस्थान विश्वविद्यालय, देहरादून, दून विश्वविद्यालय, देहरादून जैसे अनेक शिक्षण संस्थाओं के सम्माननीय प्राध्यापक हैं। प्रदेश के विभिन्न विद्यालयों में नई पीढ़ी को मौसम विज्ञान की बारीकियों से परिचित कराने में आपकी विशेष रुचि है। आपको दूर रत्नवीर केसरी पर्यावरण संरक्षण पुरस्कार, उत्तराखण्ड गौरव सम्मान जैसे सम्मानों से अलंकृत किया गया हैं। समय समय पर उत्तराखण्ड तथा भारत सरकारों के विभागों, अधिकारियों, मुख्यमंत्रियों आदि के द्वारा आप अपनी सटीक भविष्यवाणियों तथा सूचनाओं के लिये प्रशंसित हुए हैं। आप भारतीय विज्ञान लेखक संघ, उत्तराखण्ड प्रभाग के सक्रिय सदस्य हैं। विज्ञान परिचर्चा परिवार डॉ. आनन्द शर्मा का उनकी उपलब्धियों के लिये अभिनन्दन करता है तथा कामना करता है कि वे अपने अध्यवसाय द्वारा क्षेत्र के तथा देश के किये भविष्य में भी सदैव प्रयत्नशील रहेगें।

औषधि गुणों से युक्त वनस्पति श्वेतार्क, सफेद मदार अथवा आक

बाबूलाल शर्मा

'मंदार पुष्प बहुपुष्प सुपूजिताय,
तस्मै मकाराय नमः शिवाय'

– शिव पंचाक्षरी स्तोत्र

इस प्रकार भगवान् शंकर को अत्यन्त प्रिय माने जाने वाला यह पौधा मंदार या आक केवल सांस्कृतिक दृष्टि से ही नहीं वरन् आयुर्वेदीय शास्त्रीय दृष्टि से भी अत्यन्त उपयोगी एवं लाभदायक है। शिव के साथ–साथ यह श्री गणेश पूजन में भी प्रयुक्त होता है। अन्य पौधे जहाँ बरसात में विशेष रूप से पल्लवित होते हैं वही जवास नामक घास और मदार (आक) प्रचण्ड गर्मी और शीत ऋतु में हरे भरे होते हैं परन्तु वर्षा ऋतु में मुरझा कर क्षीण प्राय हो जाते हैं। इसीलिये गोस्वामी तुलसीदास जी ने लिखा कि

'अर्क जवास पात बिन भयऊ
जस सुराज खल उद्यम गयऊ'

–रामचरितमानस / किष्किंधाकाण्ड / दोहा 14–15 के बीच

भारतवर्ष में प्रायः सर्वत्र, विशेषकर बेकार खाली पड़ी भूमि, सड़कों के किनारे, खण्डहरों, कब्रिस्तानों, रेलवे लाइनों के किनारों तथा ऊसर, शुष्क, काली मिट्टी वाली भूमि पर झाड़ीनुमा आकृति वाला, 1 से 5 मीटर या कभी–कभी इससे अधिक ऊँचा, लंबा, पतला जिसके तने की गोलाई 30 सेमी के आसपास होती है, बहुशाखीय यह मदार पौधा दक्षिण–मध्य भारत, बंगाल, उत्तर प्रदेश तथा उत्तराखण्ड के शिवालिक क्षेत्र में पाया जाता है। श्वेतार्क या आक को सफेद मदार कहते हैं। परन्तु इसकी एक और जाति होती हैं लाल मदार।

श्वेतार्क को संस्कृत में अर्क या अलर्क; हिंदी में मदार, गणरूप, सफेद आक, अकवन और सदापुष्प; आसामी में अकौन, बंगला में श्वेत आकन्द; मराठी में पांढरी रुई; गुजराती में अकाडो; कन्नड़ में येक्का; मलयालम में इरक्कु; तमिल में अर्कम्, तेलुगु में जिल्लेदु तथा अंग्रेजी में मिल्की श्रब कहते हैं। इसका वानस्पतिक नाम *कैलोट्रोपिस गाइगेण्डिया* है। उसी प्रकार लाल मदार को संस्कृत में स्क्तार्क; हिंदी में लाल आक, रक्त पुष्प; बंगला में आकन्द; मराठी में तांबड़ी रुई और गुजराती में रातो आंकड़ो कहते हैं। इसका वानस्पतिक नाम *कैलोट्रोपिस प्रोसेरा* है।

श्वेतार्क की छाल हल्के पीले रंग की या सफेद, कॉर्की तथा मोटी होती है। इसका काष्ठ सफेद, कोमल तथा हल्का होता है। इस वनस्पति की शाखाएँ लम्बी तथा पतली होती हैं। इसमें कोई एक तना न होकर सभी शाखाएँ स्वतन्त्र रूप से तने की तरह लम्बी, पतली होकर बढ़ती हैं। शाखाओं, पत्तों को तोड़ने पर उसमें से दूध जैसा चिचचिपा, कड़ुवा, तीखा गोंद जैसा द्रव निकलता है जो औषधि के रूप में प्रयोग में लाया जाता है। इसकी कोमल शाखाएँ धुनी हुई रूई की भांति घने लोम से आवृत रहती हैं। पत्ते 10 से 20 सेमी लंबे, दीर्घाकार, हल्के हरे रंग के होते हैं जिन पर सफेद धूल जैसी पर्त पड़ी रहती है। आकार व आकृति में ये पत्ते बरगद के पत्तों से मिलते जुलते होते हैं। रुई की तरह पतली बहुत घने लोमों की तहों के कारण पत्तों का पिछला भाग सफेद दिखाई देता है। इसके पुष्प भी सफेद ही होते हैं इसीलिये

इसे सफेद मदार कहा जाता है।

श्वेतार्क या सफेद मदार आयुर्वेदिक दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी है। आयुर्वेदिक ग्रंथों में इसके गुणों का विस्तृत वर्णन मिलता है। वात, कोढ़, खुजली, विष, प्लीहा, गुल्म, बवासीर, कफ, उदररोग और मलकृमि को नष्ट करता है। श्वेत और लाल दोनों ही प्रकार के आक दस्तावर हैं।

आक का दूध कडुवा, गर्म, चिकना, हल्का, कोढ़, गुल्म तथा उदर रोग नाशक है और विरेचन कराने में अति उत्तम है। बिच्छू तथा अन्य कीटों द्वारा काटे जाने पर आक के दूध का कटे स्थान पर लेप दाह और वेदना को शान्त कर देता है।

श्वेत आक के पुष्प वीर्यवर्द्धक, हल्के, अग्नि को दीपन करने वाले (भूख बढ़ाने वाले), पाचक, अरुचि, कफ, बवासीर, खाँसी तथा श्वास रोग में लाभप्रद हैं। इसके पत्ते दर्द और सूजन में लाभप्रद हैं। शूलवत् वेदना में उदर में तत्काल आक का पत्ता बांध लेने से शांति प्राप्त होती है। इस वनस्पति की नई छाल गठिया रोग में थोड़ी मात्रा में प्रयोग करने से नसों को ताकत देती है।

औषधि उपयोग के अतिरिक्त श्वेतार्क अन्य अनेक रूपों में प्रयोग में लाया जाता है। इसके फल पकने पर सूख कर चटक जाते हैं और उनके भीतर भरे हुए बीज जो सफेद मुलायम रेशों से ढके होते हैं हवा में उड़ कर इधर–उधर बिखरने लगते हैं। इन रेशों की बनी रुई बहुत कोमल, चिकनी और चमकीली होती है। इसे तकियों में भरा जाता है। सामान्य कपास की रुई की अपेक्षा मदार की रुई बहुत कोमल और स्पर्श सुख देने वाली होती है। इसकी तासीर गर्म होती है अतः ये तकिये जाड़ों में ही काम आते हैं, गर्मियों में नहीं।

इस प्रकार श्वेतार्क या मदार अत्यन्त उपयोगी तथा प्राचीन काल से प्रयुक्त वनस्पति है परन्तु औषधि के रूप में इसका प्रयोग अनुभवी चिकित्सक के परामर्श के बिना नहीं किया जाना चाहिये।

सेवानिवृत्त
वन अनुसंधान संस्थान, देहरादून

विज्ञान वर्ग पहेली – 7 का हल (विज्ञान परिचर्चा, वर्ष 3, अंक 1 में प्रकाशित)

	1 चा		2 क		3 स	त्या	4 प	न
5 ने	प	च्यू	नि	य	म		त्ती	
			ष्ठि		त			6 व
7 नी	8 हा	रि	का		9 ल	घु	10 अ	क्ष
	य						ना	
11 मो	ल	र	12 ता		13 धू	स	र	ता
म			प		म			
	14 यं		15 मा	ई	के	ल	16 स	न
17 सं	ग	ल	न		तु		म	

आज मानव अपने आपको एक चौराहे पर खड़ा पाता है। वैसे विज्ञान ने मानव जाति को बहुत से लाभ दिये हैं लेकिन उस लाभ के साथ–साथ उसने कुछ ऐसे खतरे पैदा कर दिये हैं जो पहले इस रुप में मानव के सामने पहले कभी नहीं थें। कभी–कभी तो ऐसा लगता है कि विज्ञान का यह प्रभाव भारत के ऊपर भी छा जाने वाला है और वह समूचे भारतवर्ष को यही नहीं बल्कि सारे संसार को भी खतरे में डालने जा रहा है। मैंने देश विदेशों का भ्रमण किया है और मैंने देखा है कि जो गरीब देश हैं वे तो दुःखी हैं ही पर जो अमीर देश हैं वे भी दुःखी हैं। जब हम गरीब देश को देखते हैं तो वास्तव में लगता है कि इनके पास दिक्कते हैं, अभाव हैं, परन्तु फिर भी वे कुछ सन्तुष्ट से मालूम पड़ते हैं। पर जिनके पास भौतिक सम्पदा की कमी नहीं, कोई भौतिक अभाव नहीं वे तो बड़े ही असन्तुष्ट और विक्षुब्ध दिखाई देते हैं। वास्तव में इस विशाल मानव समाज के समुद्र का मन्थन हो रहा है। मानव प्रचीनता को छोड़ रहा है और नवीनता की खोज में जूझ रहा है। वह अपने आपको अतीत और भविष्य के बीच में पाता है। पिछला जन मर रहा है और अगले ने अभी जन्म नहीं लिया और हम अपने को इन दोनों के बीच में पाते हैं। ऐसी स्थिति में प्रश्न उठता हैं कि हम प्रेरणा कहाँ से ग्रहण करें?

एक विचारधारा तो यह है कि हमें अपनी प्राचीन संस्कृति को त्याग कर पुरानी सब मान्यताओं को छोड़कर आगे बढ़ने की कोशिश करनी चाहिये। लेकिन हम यह भी देखते हैं कि जो देश ऐसा करते हैं उनकी स्थिति कोई अच्छी नहीं हैं, उन्हें भी बहुत कष्ट सहना पड़ रहा हैं। दूसरी विचारधारा कहती है कि हम क्यों न पहले जैसा ही रहें, अपनी प्राचीन परम्परा के गीत गाते रहें। उसीसे हमारा निर्वाह हो जायेगा। पर ऐसी दशा में यह भी विचार मन में उठता है कि यदि हम युग के अनुरूप समय की रफ्तार के साथ नहीं चलेंगे तो हम एक नया देश नहीं बना सकेंगे।

इस पृष्ठभूमि में विचार करने पर प्रतीत होता है कि हमें अतीत और भविष्य, प्राचीन और नवीन, परा विद्या और अपरा विद्या, ज्ञान और विज्ञान का समन्वयपूर्ण उज्वल स्पंदन चाहिये।

डॉ0 कर्ण सिंह
(श्री रामकिंकर लिखित पुस्तक मानस मंथन में प्रकाशित उद्घाटन भाषण से, 1981

काली शंकर

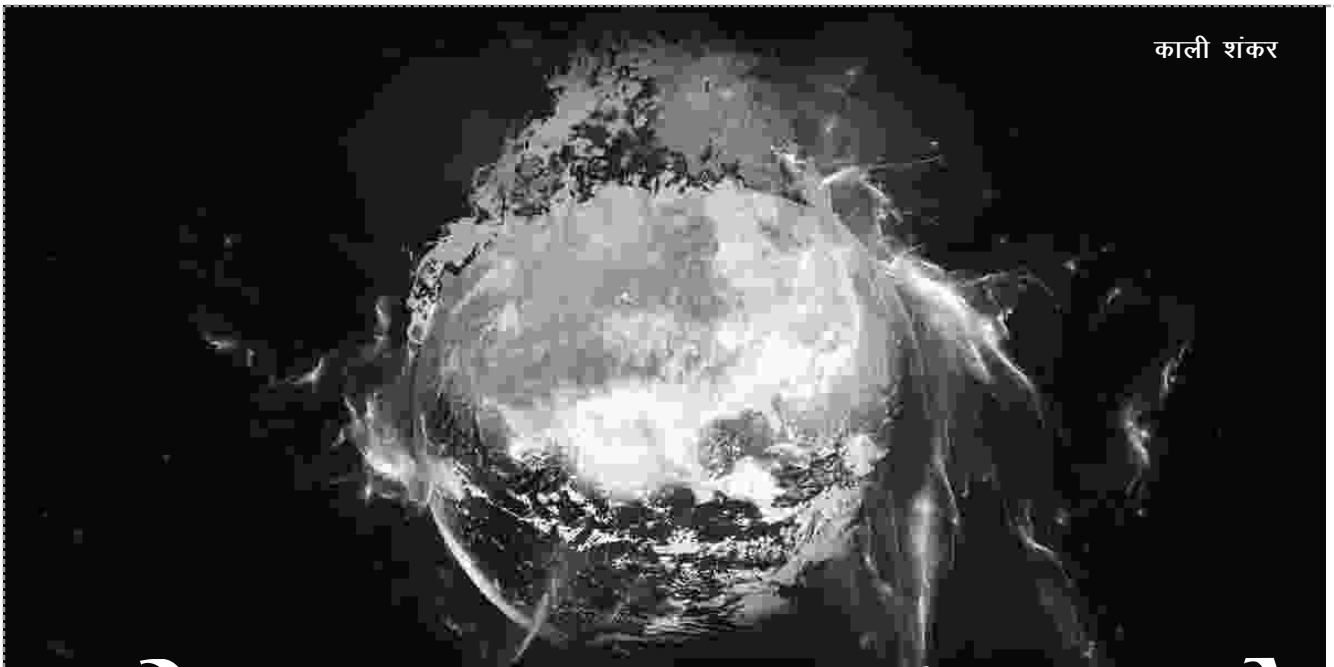

सौर प्रज्वाल एवं इनके विध्वंसक स्वरूप

सौर प्रज्वाल को अंग्रजी में 'सोलर फ्लेयर' कहते हैं जो सूर्य की सतह के ऊपर अचानक चमक को दर्शाता है जिसका तकनीकी स्पष्टीकरण यह है कि इसके द्वारा ऊर्जा की विशाल मात्रा (61025 जूल तक) को मुक्त किया जाता है। इस ऊर्जा की विशालता का आलम यह है कि यह सूर्य के द्वारा प्रति सेकेण्ड निकाली जाने वाली ऊर्जा का एक-छठा हिस्सा या 160,000,000,000 मेगाटन टी एन टी के समतुल्य होती है। इस ऊर्जा को ऐसे भी समझा जा सकता है कि यह 1994 में पुच्छलतारा शूमेकर लेवी-९ और वृहस्पति ग्रह के बीच हुए टकराव से निकली ऊर्जा का 25000 गुना हो सकती है। सौर प्रज्वाल के साथ साथ एक परिघटना और भी जुड़ी रहती है जिसे 'कोरोनल मास इजेक्शन' (सी एम ई) कहते हैं। 'कोरोनल मास इजेक्शन' सौर पवनों और चुम्बकीय क्षेत्रों का एक विशालकाय प्रस्फोट होता है जो सूर्य के कोरोना के ऊपर उठता है अथवा यह अंतरिक्ष में विमुक्त कर दिया जाता है। इसे इस तरह भी परिभाषित किया जा सकता है कि यह सूर्य से होने वाला विशालकाय प्लाज्मा का उत्सर्जन होता है जो सौर पवनों के प्रवाह को बाधित कर देता है।

सौर प्रज्वाल सूर्य के कोरोना के माध्यम से अंतरिक्ष में इलेक्ट्रान, आयन और परमाणुओं के विशाल बादलों का उत्सर्जन करता है। ये बादल सौर प्रज्वाल की परिघटना के एक या दो दिन बाद पृथ्वी पर पहुँचते हैं। इस शब्दावली का अन्य तारों में भी इस प्रकार की समान घटनाओं के लिए प्रयोग में लाया जाता है जिनके के लिए तारकीय प्रज्वाल शब्दावली प्रासंगिक हो।

सौर प्रज्वाल सौर वायुमंडल (फोटोमंडल, क्रोमोमंडल और कोरोना) की सभी परतों को प्रभावित करता हैं जब माध्यम के रूप में प्जाज़्मा को कई लाख केल्विन तापमान तक गर्म किया जाता है तथा इलेक्ट्रान, प्रोटान और भारी आयनों को प्रकाश की गति के समतुल्य त्वरण प्राप्त होता है। सौर प्रज्वाल विद्युत चुम्बकीय स्पेक्ट्रम के आर पार सभी तरंग दैर्घ्यों पर (रेडियो तरंगों से गामा किरणों तक) विकिरण पैदा करता है यद्यपि अधिकांश ऊर्जा उन आवृत्तियों पर होती है जो दृष्टिगोचर आवृत्ति रेंज से बाहर होती हैं तथा यही कारण है कि अधिकांश सौर प्रज्वाल नंगी आँख से नहीं देखे जा सकते हैं। उन्हें विशेष प्रकार के उपकरणों के द्वारा ही प्रेक्षित किया जा सकता है। प्रज्वाल सूर्य धब्बों (सनस्पॉट) के इर्द गिर्द सक्रिय क्षेत्रों में होते हैं जहाँ पर तीव्र चुम्बकीय फील्ड फोटोमंडल का भेदन करके कोरोना को सौर अन्तः से जोड़ देती है। इस प्रक्रिया में वही ऊर्जा का रिलीज़ 'कोरोनल मास इजेक्शन' पैदा करता है। यह दूसरी बात है कि 'कोरोनल मास इजेक्शन' और प्रज्वालों के बीच किसी प्रकार का सम्बन्ध आज तक स्थापित नहीं किया जा सका है।

सौर प्रज्वाल के द्वारा उत्सर्जित एक्स–किरण एवं अल्ट्रावायलेट विकिरण पृथ्वी के आयनमंडल को प्रभावित करता है तथा लम्बी दूरी के रेडियो संचार को बाधित करता है। डेसीमेट्रिक तरंग दैर्ध्य

पर कार्य करने वाला सीधा रेडियो उत्सर्जन रेडार एवं अन्य युक्तियों को प्रभावित और बाधित कर सकता है जो इन तरंग दैर्ध्यों पर कार्य करते हैं। सूर्य के ऊपर सौर प्रज्वाल का प्रेक्षण पहली बार रिचर्ड क्रिस्टोफर कैरिंग्टन के द्वारा तथा अलग तरीके से स्वतंत्र रूप से 1859 में रिचर्ड होडसन के द्वारा सन स्पाट ग्रूप के अन्तर्गत लघु क्षेत्रों में स्थानीय दृष्टिगोचर चमक के रूप में किया गया था। तारकीय प्रज्वालों का प्रेक्षण कुछ अन्य स्टारों के ऊपर भी किया गया है।

सौर प्रज्वालों के घटित होने का क्रम (प्रत्येक दिन अनेक से) परिवर्तित होता रहता है जब सूर्य विशेष रूप से (प्रत्येक सप्ताह एक बार जब सूर्य शांत रहता है) 11–वर्षीय चक्र (सोलर साइकल) का अनुकरण करता है।

सौर प्रज्वाल का कारण

सौर प्रज्वाल की घटना तब सम्पन्न होती है जब त्वरण प्राप्त आवेशित कण (मुख्य रूप से इलेक्ट्रान) प्लाज्मा माध्यम से अभिक्रिया करते हैं। वैज्ञानिक अनुसंधान बतलाते हैं कि चुम्बकीय पुनः सम्बन्धन (रीकनेक्शन) प्रक्रिया आवेशित कणों के त्वरण के लिए उत्तरदायी है। सूर्य में चुम्बकीय रीकनेक्शन चुम्बकीय बल लाइनों के लूपों पर सम्पन्न हो सकती हैं। रीकनेक्शन में अचानक ऊर्जा का रिलीज कण त्वरण का मूल अंग होता है। सौर प्रज्वाल सूर्य के सक्रिय क्षेत्रों से निकलते हैं जहाँ पर औसत रूप में चुम्बकीय क्षेत्र काफी शाक्तिशाली होता है।

यद्यपि सौर प्रज्वाल के कारणों के ऊपर सामान्य एकमतता है लेकिन इनके विस्तृत विवरण अब भी ठीक से पूरी तरह से नहीं ज्ञात हैं। अब भी यह स्पष्ट नहीं है कि किस तरह चुम्बकीय ऊर्जा कण गतिज ऊर्जा (पार्टिकल काइनेटिक एनर्जी) में परिवर्तित होती है तथा किस तरह कणों को इतना त्वरण प्राप्त हो जाता है कि उनकी ऊर्जा 10 मेगा इलेक्ट्रान वोल्ट या उससे भी ज्यादा हो जाती है। त्वरण प्राप्त कणों की कुल संख्या पर भी अभी मतभेद हैं जो कभी कभी कोरोनल लूप के कुल कणों की संख्या से ज्यादा होते हैं। इसीलिए आज भी हम सौर प्रज्वाल के विषय में कोई भी भविष्यवाणी करने की स्थिति में नहीं हैं।

सौर प्रज्वालों का वर्गीकरण

सौर प्रज्वालों का वर्गीकरण ए,बी,सी, एम और एक्स के रूप में उनकी चरम लक्स सीमा (वाट प्रति वर्ग मीटर) के रूप में 100 से 800 पीकोमीटर तरंग दैर्ध्य के बीच में किया जाता है। वाट प्रति वर्ग मीटर लक्स सीमा के अन्तर्गत ये वर्गीकरण हैं– ए (10^{-7} से कम), बी(10^{-7} से 10^{-6}), सी (10^{-6} से 10^{-5}), एम(10^{-5} से 10^{-4}) तथा एक्स (10^{-4} से अधिक)।

सौर प्रज्वाल के खतरे

सौर प्रज्वाल पृथ्वी के समीप के स्थानीय अन्तरिक्ष मौसम को प्रभावित करते हैं। वे सौर पवन में उच्चतम ऊर्जामय कणों को उत्पन्न कर सकते हैं जिन्हें सौर प्रोटान घटना अथवा 'कोरोनल मास इजेक्शन' कहते हैं। ये कण पृथ्वी के चुम्बकमंडल को आघात दे सकते हैं तथा अन्तरिक्ष यानों और अन्तरिक्ष यात्रियों को विकिरणों के खतरों से हानि पहुँचा सकते हैं। कभी कभी ये 'कोरोनल मास इजेक्शन' भू चुम्बकीय तूफानों को भी उत्तेजित कर सकते हैं जो विद्युत पावर तंत्र को लम्बे अर्से तक बाधित कर सकते हैं।

एक्स वर्ग के सौर प्रज्वाल की एक्स–किरणें पृथ्वी के ऊपरी वायुमंडल का आयनीकरण बढ़ा देती हैं तथा इस प्रक्रिया से शार्ट–वेव रेडियो संचार बाधित होता है। यह बाह्य वायुमंडल को गर्म कर देता है तथा इससे अन्तरिक्ष की कक्षा में घूम रहे उपग्रहों पर कर्षण बढ़ता है और उनकी कक्षीय उँचाई घटती है। चुम्बकमंडल में पहुँचने वाले ऊर्जामय कण ध्रुवीय ज्योतियों (अरोरा बोरेलिस और अरोरा आस्ट्रेलिस) को उत्पन्न करते हैं। हार्ड एक्स–किरण के रूप में ऊर्जा अन्तरिक्षयानों के इलेक्ट्रानिकी हार्डवेयर को क्षति पहुँचा सकती है।

'कोरोनल मास इजेक्शन' से जनित विकिरण खतरे मंगल ग्रह अथवा चन्द्र अथवा अन्य ग्रहों की मानवयुक्त उड़ानों के लिए अहम मुद्दा बन जाते हैं। ऊर्जामय प्रोटान मानव शरीर के अन्दर से गुजर कर जैव–रासायनिक क्षति पहुँचा सकते हैं तथा इस तरह अंतरिक्ष यात्रियों के लिए अन्तराग्रहीय उड़ानों में खतरा पैदा कर सकते हैं। इसके लिए अंतरिक्ष यात्रियों के बचाव हेतु एक प्रकार की भौतिक अथवा चुम्बकीय शील्डिंग (कवच) की आवश्यकता पड़ेगी। अधिकांश प्रोटान तूफान दो घन्टे का समय लेते हैं। 20 जनवरी 2005 को एक सौर प्रज्वाल ने अब तक मापित प्रोटानों की सबसे अधिक इष्टतम संकेन्द्रण (कन्सेन्ट्रेशन) धारा दर्ज कराई। प्रेक्षण के बाद ये प्रोटान 15 मिनट में पृथ्वी पर पहुँच गये। इनकी गति प्रकाश की गति की लगभग एक तिहाई थी। इस घटना के दौरान अंतरिक्ष यात्रियों को अपनी सुरक्षा के लिए शेल्टर तक पहुँचने के लिए मात्र 15 मिनट उपलब्ध थे।

सौर प्रज्वालों का प्रेक्षण

सौर प्रज्वाल सम्पूर्ण विद्युत चुम्बकीय स्पेक्ट्रम में विभिन्न तीव्रता वाले विकिरण पैदा करते हैं। सफेद प्रकाश के ऊपर वे ज्यादा तीव्र नहीं होते हैं लेकिन कुछ खास परमाण्वीय लाइनों पर वे काफी चमकीले होते हैं। सामान्यतया सौर प्रज्वाल एक्स किरण और रेडियो तरंगों पर सिंक्रोटान जैसे विशिष्ट विकिरण पैदा करते हैं।

कुछ ऐतिहासिक तथ्य

प्रकाशिकी प्रेक्षणः रिचर्ड कैरिंग्टन ने 1 सितम्बर 1859 को पहली बार एक सौर प्रज्वाल का प्रेक्षण किया तथा यह प्रेक्षण एक प्रकाशिकी दूरबीन के द्वारा बिना फिल्टरों की मदद से किया गया था। यह एक असाधारण तीव्र सफेद प्रकाश वाला प्रज्वाल था। चूँकि प्रज्वाल एच अल्फा स्पेक्ट्रम पर प्रचुर मात्रा में विकिरण पैदा करता है इसलिए प्रकाशिकी दूरबीन से प्रेक्षण के समय यदि उसके केन्द्र में एक पासबैन्ड फिल्टर लगा दिया जाय तो एक छोटी दूरबीन के द्वारा भी प्रज्वाल (जो बहुत अधिक चमकीला नहीं होता) का प्रेक्षण सम्भव हो जाता है। काफी वर्षों तक 'एच अल्फा' सौर प्रज्वाल की सूचना के तौर पर प्रमुख स्रोत (यदि अकेला ही नहीं) हुआ करता था।

रेडियो प्रेक्षणः 25 और 26 फरवरी 1942 को विश्व युद्ध–II के दौरान ब्रिटिश रेडार प्रचालकों ने एक विशेष प्रकार का विकिरण प्रेक्षित किया जिसके

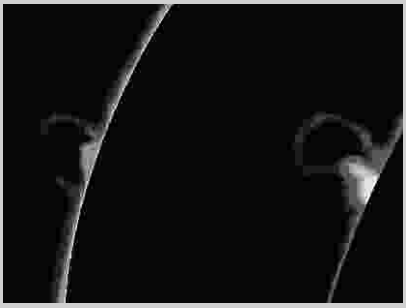

सौर प्रज्वाल परिघटना के दो लगातार फोटो। इन चित्रों में सौर डिस्क को बेहतर अवलोकन की दृष्टि से ब्लॉक कर दिया गया था।

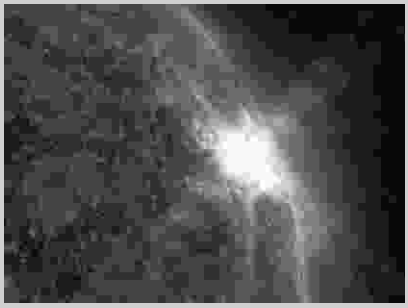

चित्र–2: 1 अगस्त, 2010 को सूर्य से सी 3 –श्रेणी का सौर प्रज्वाल निकला।

सौर प्रज्वाल का एक भीषण दृष्य।

बारे में स्पष्टीकरण देते हुए स्टैनली हे ने यह बतलाया कि यह सौर उत्सर्जन था। उनकी खोज तब तक सार्वजनिक नहीं की गई जब तक कि इस पर मतभेद नहीं दूर हुए। उसी वर्ष साउथवर्थ ने भी सूर्य का प्रेक्षण रेडियो आवृत्ति पर किया लेकिन हे की भाँति उनके प्रेक्षणों की जानकारी 1945 के बाद ही मालूम पड़ी। वर्ष 1943 में ग्रोट रेबर प्रथम खगोलशास्त्री थे जिन्होंने 160 मेगाहर्त्स आवृत्ति पर सूर्य के रेडियोखगोलिकी प्रेक्षण की रिपोर्टिंग की। रेडियो खगोलिकी के तीव्र विकास ने सौर सक्रियता से सम्बन्धित अनेक नई नई बातों, जैसे तूफान और प्रस्फोट, का खुलासा किया जो सौर प्रज्वाल से सम्बन्धित थीं। आज भू आधारित रेडियो दूरबीनें सूर्य का प्रेक्षण लगभग 400 मेगाहर्त्स से 400 गीगाहर्त्स (1 गीगाहर्त्स = 1000 मेगाहर्त्स) आवृत्ति तक कर सकती हैं और कर रही हैं।

अन्तरिक्ष दूरबीनें: अन्तरिक्ष अन्वेषण युग के प्रारंभ से ही दूरबीनें भी अन्तरिक्ष में स्थापित की गईं जहाँ पर वे पराबैंगनी तरंग दैर्ध्य के नीचे वाली आवृत्तियों पर काम करती हैं जो पृथ्वी के वायुमंडल के द्वारा पूर्ण रूप से अवशोषित कर ली जाती है जब कि सौर प्रज्वाल बहुत चमकीले हो सकते हैं। वर्ष 1970 से गोज़ श्रृंखला के भू–स्थिर उपग्रह सूर्य का प्रेक्षण साट एक्स–किरणों पर कर रहे हैं तथा इन उपग्रहों के प्रेक्षण सौर प्रज्वाल के मानक बन गये तथा इससे 'एच अल्फा' महत्ता घट गई। हार्ड एक्स किरणों का प्रेक्षण अनेक विभिन्न उपकरणों के द्वारा किया जाता है तथा उनमें आज सबसे महत्वपूर्ण उपकरण हैं रेवन रैमटी सौर स्पेक्ट्रोस्कोपिक प्रतिबिम्बक। इसके बावजूद आज के अल्ट्रावायलेट प्रेक्षण सौर प्रतिविम्बन के लिए काफी महत्वपूर्ण हैं जो काफी सूक्ष्म विवरण देते हुए सौर कोरोना की जटिलता की भी जानकारी देते हैं। अन्तरिक्ष यानों के द्वारा भेजे गये रेडियो संसूचक (बहुत लम्बी तरंग दैर्ध्य पर जैसे कुछ कि0मी0) भी काफी उपयोगी पाये गये हैं।

1. प्रकाशिकी दूरबीनें

क) बिग बियर सौर प्रेक्षणशाला: कैलीफोर्निया के पास बिग बियर लेक क्षेत्र में स्थित तथा न्यू जर्सी इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलोजी के द्वारा प्रचालित एवं अनेक उपकरणों से लैस यह दूरबीन पूर्णरूपेण सौर प्रेक्षण के लिए समर्पित है तथा 'एच अल्फा' प्रतिबिम्बों का इसमें विशाल डाटा बैंक है।

ख) स्वीडिश 1–मीटर सौर दूरबीन: स्वीडन के सौर भौतिकी संस्थान द्वारा प्रचालित यह स्पेन के लॉ पाल्मा में स्थित हैं।

ग) मैकमैथ: पियर्स सौर दूरबीन अरिजोना के किट पीक नेशनल आब्जर्वेटरी के प्रांगण में स्थित है तथा यह विश्व की सबसे बड़ी सौर दूरबीन है।

2) रेडियो दूरबीनें

क) नैन्सी रेडियोहीलियोग्राफ एक व्यतिकरणमापी (इन्टरफेरोमीटर) है जिसमें 48 एन्टेना लगे हैं जो मीटर–डेसीमीटर तरंग दैर्ध्य पर प्रेक्षण करते हैं। रेडियोहीलियोग्राफ फ्रान्स के नैन्सी रेडियो प्रेक्षणशाला के प्रांगण में स्थित है।

ख) ओवेन्स वैली सौर एरे भी एक रेडियो व्यतिकरणमापी है जिसका प्रचालन न्यू जर्सी इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलोजी के द्वारा किया जा रहा है। इसमें 7 एन्टेना लगे हुए हैं जो बाएँ और दायें वृत्तीय ध्रुवण के साथ 1 से 18 गीगाहर्त्स पर कार्य करते हैं। यह सौर एरे कैलीफोर्निया की ओवेन्स घाटी में स्थित है तथा अब इसमें कुछ सुधार किये जा रहे हैं और एन्टेना की संख्या 15 की जा रही है।

ग) नोबेयामा रेडियोहीलियोग्राफ भी एक व्यतिकरणमापी है जो जापान की नोबोयामा रेडियो प्रेक्षणषाला के प्रागंण में स्थित है। इसमें 84 लघु आकार के एन्टेना लगे हैं तथा एक साथ 17 गीगाहर्त्स एवं 34 गीगाहर्त्स पर (बाएँ और दायें हाथ ध्रुवण के साथ) एक साथ अभिग्रहण करने वाले रिसीवर लगे हैं।

घ) नोबोयामा रेडियो पोलैरीमीटर रेडियो दूरबीनों के एक सेट हैं जो नोबेयामा रेडियो प्रेक्षणशाला प्रागंण में स्थित है तथा ये 1, 2, 3, 7.5, 9.4, 17, 35 और 80 गीगाहर्त्स आवृत्ति पर सम्पूर्ण सूर्य का प्रेक्षण करते हैं।

च) सौर सब–मिलीमीटर दूरबीन एक अकेली डिश दूरबीन है जो 212 एवं 405 गीगाहर्त्स पर लगातार सूर्य का प्रेक्षण करती है। यह अर्जेन्टाइना में स्थित है। इसमें एक फोकल एरे लगा है जिसमें 212 गीगाहर्त्स पर 4 किरणपुंज (बीमा) तथा 405 गीगाहर्त्स पर 2 किरणपुंज हैं इसलिए यह उत्सर्जक स्रोत की स्थिति

का आसानी से पता लगा सकती है।

अन्तरिक्ष यान

निम्नलिखित अंतरिक्षयान मिशनों का प्रमुख लक्ष्य सौर प्रज्वाल का प्रेक्षण हैः–

क) योहकोहः इसका प्रारंभिक नाम 'सोलर ए' था जो एक अंतरिक्षयान है जिसने सूर्य का प्रेक्षण 1991 से वर्ष 2001 तक अनेक उपकरणों के माध्यम से किया। इस मिशन के द्वारा प्रेक्षणों में शामिल अवधि थी एक सौर मैक्सिमम से अगले सौर मैक्सिमम तक तथा प्रज्वाल प्रेक्षण के लिए इसमें दो विशिष्ट उपकरण थे– सॉफ्ट एक्स किरण दूरबीन (एस एक्स टी) और हार्ड एक्स–किरण दूरबीन (एच एक्स टी)।

ख) विन्डः यह अंतरिक्षयान अन्तराग्रहीय माध्यम के अध्ययन के लिए समर्पित है। चूँकि सौर पवन इसका प्रमुख चालक है इसलिए सौर प्रज्वाल प्रभाव को इस अंतरिक्षयान में लगे उपकरण तुरंत पता कर लेते हैं।

ग) 'गोज': ये अन्तरिक्षयान एक प्रकार के उपग्रह हैं जो पृथ्वी की भू स्थिर कक्षा (पृथ्वी से 36000 कि0मी0 दूर) में घूमते हैं तथा इनके द्वारा 1970 के मध्य से सूर्य से निकलने वाले एक्स किरण लक्स का मापन किया जाता रहा है।

च) रेवन रैमटी उच्च ऊर्जा सौर स्पेक्ट्रमी प्रतिबिम्बकः यह सौर प्रज्वाल का प्रतिबिम्बन साट एक्स किरण से गामा किरण (20 मेगाइलेक्ट्रान वोल्ट तक) तक कर सकता है।

प) सोहोः सोहो मिशन यूरोपीय अंतरिक्ष संस्था और नासा के बीच का पारस्परिक सहयोग मिशन है तथा यह वर्ष 1995 से प्रचालन में है। यह मिशन पृथ्वी–सूर्य के एल–1 बिन्दु (लेगरैंज बिन्दु एल–1) पर हैलो कक्षा में है।

फ) ट्रेसः यह एक नासा का मिशन है जिसका प्रमुख उद्देश्य सौर कोरोना का प्रतिबिम्बन करना है

ब) सौर गतिजता प्रेक्षणशाला (एस डी ओ): यह सौर अध्ययन के लिए नासा का मिशन है तथा फरवरी 2010 से कार्यशील है।

भ) हिनोडेः इसका प्रारंभिक नाम 'सोलर बी' था तथा सितम्बर 2006 में इसका प्रमोचन जापान की अंतरिक्ष संस्था के द्वारा सौर प्रज्वाल के प्रेक्षण के लिए किया गया था।

म) ऐसः एडवान्स्ड कम्पोजीशन एक्सप्लोरर मिशन का प्रमोचन 1997 में किया गया था (हैलो कक्षा में, पृथ्वी–सूर्य एल–1 बिन्दु पर)। इसमें सौर पवन के विश्लेषण के लिए कई उपकरण लगे हैं।

सौर प्रज्वालों के कुछ उदाहरण

1859 में रिचर्ड कैरिंगटन तथा रिचर्ड हडसन द्वारा प्रेक्षित किये गये सौर प्रज्वाल अब तक के सर्वाधिक शक्तिशाली प्रज्वाल हैं जिन्हें 'सोलर स्टॉर्म ऑफ 1859 भी कहा जाता हैं। इसे ''कैरिंग्टन इवेन्ट'' भी कहते हैं। यह प्रज्वाल नंगी ऑख से (सफेद प्रकाश में) दृष्टिगोचर हुआ था तथा इसने आश्चर्यजनक ध्रुवीय ज्योतियाँ ट्रापिकल अक्षांशो पर क्यूबा और हवाई के ऊपर पैदा कीं तथा इससे कुछ टेलीग्राफ तंत्रों में आग लग गई। इस प्रज्वाल ने ग्रीनलैन्ड की बर्फ में नाइट्रेट और 'बेरीलियम–10' के रूप कुछ अवशेष में छोड़े।

वर्तमान समय में सबसे बड़ा सौर प्रज्वाल 4 नवम्बर 2003 को मापित किया गया। इस घटना ने 'गोज' उपग्रह के संसूचकों (डिटेक्टर) को संतृप्त कर दिया तथा इसके कारण इसका वर्गीकरण केवल अन्दाजन ही लग पाया था। जो अन्य विशाल सौर प्रज्वाल सम्पन्न हुए उनकी तिथियाँ थीं – 2 अप्रैल 2001, 28 अक्टूबर 2003, 7 सितम्बर 2005, 17 फरवरी 2011, 9 अगस्त 2011, 7 मार्च 2012 तथा 6 जुलाई 2012।

सौर प्रज्वाल का पूर्वानुमान

सौर प्रज्वाल के पूर्वानुमान का वर्तमान तरीका समस्यापूर्ण है तथा इस सन्दर्भ में कोई निश्चित तौर पर यह दिशा निर्देश नहीं किया जा सका है कि सूर्य के सक्रिय क्षेत्र में कोई प्रज्वाल पैदा होगा। लेकिन यह भी सत्य है कि सौर धब्बों और सक्रिय क्षेत्रों के अनेक गुण प्रज्वाल परिघटना से संबंध रखते हैं।

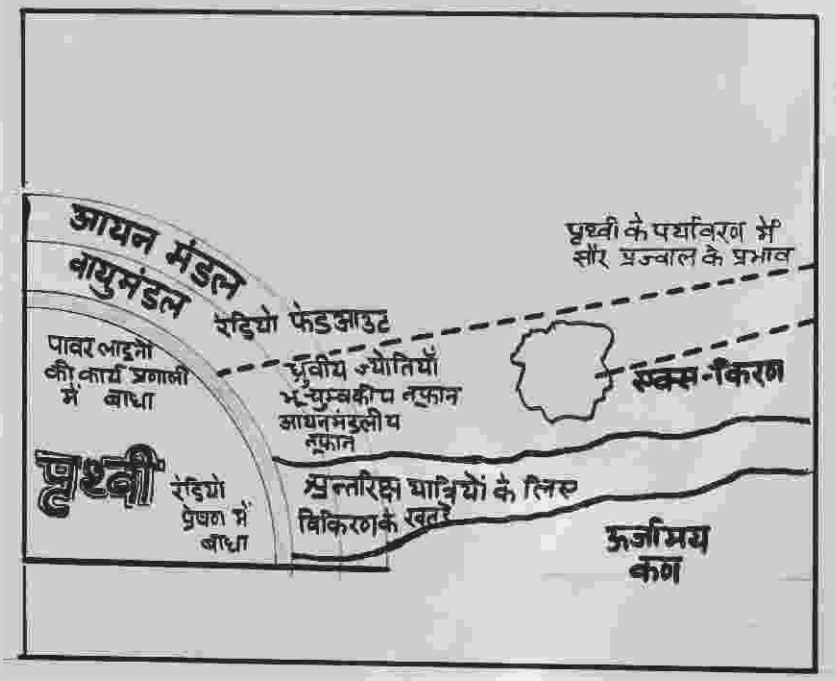

सौर प्रज्वाल के प्रभाव।

बहुमूल्य पौधे–आर्किड

पल्लवी पाल एवं नीलम नेगी

प्राचीन काल से आर्किड अपने रंगीन व आकर्षक पुष्पों के कारण जाने जाते हैं। भारतीय चिकित्सा पद्वति में अर्किड का अत्याधिक महत्व है। हमारे प्राचीन ग्रंथ जैसे चरक संहिता, भाव प्रकाश, निघन्टु आदि में इनका विवरण दिया गया है। प्राचीन पुस्तक अथर्ववेद में रिषभक (माईक्रोस्टालियस वैलचीय) के औषधीय गुणों के विषय में बताया गया है। अन्य आर्किड प्रजातियां जैसे – *डनेड्रौबियम, बैन्डाटैसटेसिया, रिनकोस्टाइलियस रैटयूसा, नरविलिया, हैबेनेरिया, लूसिया जेनालिका* आदि औषधीय गुणों से परिपूर्ण हैं। इसके अतिरिक्त आर्किड का उपयोग सौदर्य प्रसाधनों, खाद्य सामग्री तथा सजावट में भी किया जाता है। मानवीय गतिविधियाँ जैसे वनों का कटान, जंगल की आग, सड़क निर्माण, प्रदूषण आदि आर्किड प्रजातियों को विलुप्तता की ओर ले जा रहे हैं। जैव प्रौद्योगिकी तथा अन्य विकसित तकनीकों से इन्हें सुरक्षित व संरक्षित रख सकते हैं।

आर्किडेसी विश्व की सबसे बड़ी एन्जियोस्पर्मिक (आवृतबीजी) पादप फैमिली है। लगभग 25,000 – 30,000 प्रजातियाँ हैं, जिनमें से 13,00 प्रजातियाँ भारतवर्ष में पायी जाती हैं। हिमालय, उत्तर–पूर्व क्षेत्र तथा अंड़मान निकोबार द्वीप आर्किड के मुख्य आवास हैं।

आर्किड बारहमासी शाक (हर्ब) होते हैं। यह मुख्यतः तीन रूपों में पाये जाते हैं – भूमिगत (टेरीस्ट्रियल), एपीफिटिक (अन्य वृक्षों पर) तथा चट्टानों की सतह पर। आर्किड के बीच सूक्ष्म तथा संचित भोजन रहित होते है, अतः बीज का अंकुरण फफूंदी अथवा कवक के सहजीवी संबंध से होता है।

उपयोगिता

1. सजावट : आर्किड का पुष्प रंगीन, सुगंधित व अति सुदंर होता है। इन्हीं विशेषताओं के कारण इसका उपयोग सजावट आदि में किया जाता है। सिमाबिडियम इसका एक प्रमुख उदाहरण हैं।

2. औषधीय गुणः आर्किड़ का प्रत्येक भाग औषधीय गुणों से भरपूर होता है।

अ) राइजोम (कन्द): राइजोम का प्रयोग विभिन्न रोगों के उपचार में किया जाता है। *बिलिटियला स्टीरियटा* के राइजोम का प्रयोग रोग जैसे टी.बी., गैस्ट्रिक अलसर, रक्तस्राव, कटी–फटी त्वचा आदि के लिए किया जाता है।

ब) जड़ः *रिनकोस्टाइलिस रेट्यूसा* की जड़ों का उपयोग अस्थमा, पथरी, टी.वी. आदि के उपचार हेतु किया जाता है। *डैनड्राबियम* की जड़ें दर्द निवारक व जलन से राहत दिलाने के लिए इस्तेमाल की जाती हैं। *कैलन्था ट्रिपिलिकेटा* की जड़ें डायरिया आदि के उपचार में प्रयोग की जाती हैं।

स) पत्तियांः *वैन्डा टेसटिसिया* की पत्तियों को सरसों के तेल में गर्म करके सूजे अंगो पर लगाया जाता है। पत्तियों के रस को शरीर पर लगाने से बुखार जल्द ही उतर जाता है।

द) पुष्पः *कैलन्था ट्रिपिलिकेटा* के पुष्पों का रस दर्द निवारक के रूप में प्रयोग करते हैं।

3. खाद्य साम्रागी व सौंदर्य प्रसाधनः औषधीय गुणों के अतिरिक्त आर्किड जैसे *वनीला पलैनिफोलिया* का रस चाकलेट, साबुन, शैम्पू, इत्र तथा आईसक्रीम आदि में इस्तेमाल होता है।

संरक्षण

फैमिली आर्किडेसी की कुछ प्रजातियाँ रेड डाटा बुक में अंकित हैं। बढ़ती हुई जनसंख्या, प्रदूषण, वनों का कटान, ग्लोबल वार्मिंग, औद्योगीकरण आदि मनुष्य गतिविधियां है, जिसके फलस्वरूप यह सुदंर, बहुमूल्य ईश्वरीय उपहार विलुप्त होने की कगार पर है।

निम्नलिखित सुझावों से हम इन्हें संरक्षित कर सकते हैंः–

1. साधारण जन को इनके महत्व व गुणों से अवगत करायें तथा उन्हें जागरूक करें।
2. जंगली आर्किड प्रजाति को सुरक्षित करें क्योकि वन कटान व आग आदि से इन्हें हानि हो सकती है।
3. टिश्यू कल्चर तकनीक से विलुप्त हो रही आर्किड की प्रजातियों को सरंक्षित रखा जा सकता है।

आर्किड की औषधीय व अन्य गुणों की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए हमें इन बहूमूल्य पौधों को विलुप्त होने से रोकना चाहिए तथा इनके संरक्षण के लिए उपयुक्त कदम उठाना चाहिए।

जैव प्रौद्योगिकी व सूक्ष्मजीव विज्ञान विभाग
डी.बी.एस. (पीजी) कॉलेज, देहरादून

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग

समाचार-पत्रक
जनवरी - मार्च 2013

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद

महानिदेशक की कलम से

परिषद के प्रकाशन 'विज्ञान परिचर्चा' का वर्ष 2013 का प्रथम अंक आपके सम्मुख है। त्रैमास (जनवरी–मार्च, 2013) की अवधि विभिन्न वैज्ञानिक गतिविधियों व महत्वपूर्ण आयोजनों से परिपूर्ण थी जो कि वैज्ञानिक जगत व विद्यार्थियों के लिए अत्यधिक ज्ञानवर्धक सिद्ध हुई है।

100वीं इंडियन सांइस कांग्रेस का आयोजन कोलकाता में दिनांक 3–7 जनवरी, 2013 को अत्यंत भव्यता के साथ हुआ, जिसमें उत्तराखण्ड को सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शिनी के लिए 'प्राइड ऑफ इंडिया एक्सपो' की ट्राफी दी गयी। राष्ट्रीय विज्ञान दिवस को बड़ी ही सफलतापूर्वक मनाया गया जिसमें विभिन्न विद्यालयों के 8 छात्र–छात्राओं को इस अवसर पर आयोजित निबंध प्रतियोगिता में पुरस्कृत किया गया। जनवरी माह में प्रथम विज्ञान शिक्षक कांग्रेस का आयोजन किया गया जिसमें शिक्षकों के द्वारा 120 मॉडल प्रस्तुत किये गये। साथ ही युवा महोत्सव का आयोजन भी किया गया।

इस त्रैमास में एडवासंड मटिरियल्स फॉर एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग नामक अन्तर्राष्ट्रीय कार्यशाला, पक्षी अवलोकन कैम्प, बायोडाइवर्सिटी पर प्रशिक्षण कार्यशाला, कांसेप्ट ऑफ फिजिक्स नामक कार्यशाला एवं मिट्टी के पोषक तत्वों पर जानकारी आदि कार्यक्रम विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से आयोजित किए गये।

आगामी अवधि में परिषद द्वारा अनेक कार्यक्रम प्रस्तावित हैं। पाठकों के सुझाव व सम्मतियों का स्वागत है।

डा0 राजेन्द्र डोभाल
महानिदेशक

इस संस्करण में

- राज्य स्तरीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी युवा महोत्सव का आयोजन
- विज्ञान शिक्षक कांग्रेस
- 100वीं इंडियन साइंस कांग्रेस का आयोजन उत्तराखण्ड को प्रथम पुरस्कार
- एडवांसड मटिरियल्स फॉर एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स नामक अन्तर्राष्ट्रीय कार्यशाला
- बायोडाइवर्सिटी पर प्रशिक्षण कार्यशाला
- राष्ट्रीय विज्ञान दिवस–2013
- पहल को राष्ट्रीय विज्ञान पुरस्कार से नवाजा
- पक्षी अवलोकन कैम्पों का आयोजन
- चतुर्थ राज्य स्तरीय नेचर गाइड प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन
- वेस्ट टू एनर्जीः एनवारयमेंट फ्रेंडली टेक्नोलॉजीज नामक कार्यशाला का आयोजन
- कांसेप्ट ऑफ फिजिक्स नामक कार्यशाला का आयोजन
- 17 वार्षिक नेशनल कन्वेंशन ऑफ सोसाइटी ऑफ फार्माकोलॉजी एण्ड इंटरनेशनल सिम्पोजियम आन हर्बल कौस्मेटिक्स एण्ड न्यूट्रासूटिक्लस
- इनोवेशन इन बॉयोलाजिकल एण्ड केमिकल साइंस
- फॉर सोसाइटल बेनीफिट्स नामक कार्यशाला का आयोजन
- द फिसिक्स एण्ड मैथेमेटिक्स ऑफ द यूनिवर्स नामक कार्यशाला का आयोजन
- मिट्टी के पोषक तत्वों को बचाना जरूरी
- रोल ऑफ मैथेमिटिक्स एण्ड इट्स एपलिकशंस इन डेवलप्मेंट ऑफ सांइस एण्ड टैक्नोलॉजी नामक कार्यशाला का आयोजन
- उत्तराखण्ड राज्य शिक्षा एवं अनुसंधान केन्द्र (यूसर्क)

राज्य स्तरीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी युवा महोत्सव का आयोजन

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद द्वारा विगत 24 से 28 फरवरी, 2013 को कुमाऊं विश्वविद्यालय में द्वितीय राज्य स्तरीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी युवा महोत्सव का आयोजन किया गया। महोत्सव का विषय "Uttarakhand -A modern Science State" था। इस अवसर पर विभिन्न जिलों के लगभग 130 युवा छात्र/छात्राओं ने प्रतिभाग किया। इस कार्यक्रम में पोस्टर प्रतियोगिता, चेस प्रतियोगिता, पावर प्वाइंट प्रस्तुतीकरण प्रतियोगिता के अलावा मॉडल प्रस्तुति का आयोजन भी किया गया। महोत्सव के प्रति युवाओं का उत्साह एवं उत्सुकता देखने को मिली। प्राप्त प्रतिक्रियाओं में प्रतिभागियों एवं अन्य ने आयोजन को सफल एवं उपयोगी बताया।

विज्ञान शिक्षक कांग्रेस

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद के सहयोग से पीपुल्स एसोसिएशन आफ हिल एरिया लांचर्स (पहल) द्वारा दिनांक 14 जनवरी, 2013 को राजीव गांधी नवोदय विद्यालय ननूरखेड़ा में पहली बार दो दिवसीय शिक्षक विज्ञान कांग्रेस का आयोजन किया गया। इस आयोजन में प्रदेश के शिक्षकों द्वारा 120 मॉडल प्रस्तुत किए गए। कांग्रेस के प्रथम सत्र में 95 शोध पत्र प्रस्तुत किये गये, जिनमें से 15 उत्कृष्ट शोधपत्रों को पुरस्कृत किया गया। इस अवसर पर रक्षा अनुसंधान विद्यालय के 35 छात्रों ने सस्ती दर पर तैयार विज्ञान मॉडल भी प्रस्तुत किए। आयोजन के उद्घाटन सत्र में उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद के महानिदेशक, डॉ राजेन्द्र डोभाल ने अपने सम्बोधन में कहा कि राज्य और देश के विकास के लिए छात्रों में विज्ञान और शोध के प्रति रुचि पैदा करना जरूरी है। विज्ञान के माध्यम से उनमें नई समझ पैदा होगी, नए विचार आएंगे जो आविष्कार को जन्म देंगे। उन्होंने कहा कि विज्ञान कांग्रेस विज्ञान के प्रति शिक्षक व छात्रों में शोध की आवधारणा बनाने में सहायक होगी। कांग्रेस में विशिष्ट अतिथि पद्मश्री प्रो. एन एन पुरोहित ने प्राचीन व वर्तमान शिक्षा पद्धति का तुलनात्मक विश्लेषण किया। विज्ञान शिक्षक कांग्रेस आयोजन के प्रति प्रतिभागियों द्वारा प्रदर्शित रुचि एवं इस आयोजन को मिली प्रशंसा के परिप्रेक्ष्य में आयोजन अपने उद्देश्यों की पूर्ति में सफल रहा है।

100वीं इंडियन साइंस कांग्रेस का आयोजन
उत्तराखण्ड को प्रथम पुरस्कार

कोलकाता में 3–7 जनवरी, 2013 तक आयोजित राष्ट्रीय विज्ञान कांग्रेस–2013 की 100वीं जयन्ती पर एक राष्ट्रीय प्रदर्शनी, प्राईड आफ इंडिया–13 का आयोजन किया गया था। इस अवसर पर उत्तराखण्ड सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के दो प्रमुख संस्थानों उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद (यूकॉस्ट) तथा उत्तराखण्ड अन्तरिक्ष उपयोग केन्द्र (यूसैक) ने प्रदर्शनी में विभाग के विभिन्न कार्यक्रमों, गतिविधियों, परियोजनाओं तथा उनकी उपलब्धियों का प्रदर्शन किया। प्रदर्शनी में यूकॉस्ट द्वारा प्रकाशित विभिन्न पुस्तकों, सन्दर्भ पुस्तकों, लीफलेट तथा उत्तराखण्ड पर्यावरण रिपोर्ट– 2012 का भी विशेष प्रदर्शन किया गया, जिसकी सर्वाधिक सराहना हुई। इसके साथ ही परिषद के उद्यमिता विकास कार्यक्रम (ई0डी0पी0) के अन्तर्गत स्पैक्स संस्था द्वारा बांस के बने एल0ई0डी0 लाइट युक्त नाइट लैम्पों का भी प्रदर्शन किया गया, जिसमें अनेक उद्यमियों ने अपनी रुचि दिखाई व बड़े स्तर पर निर्माण व सप्लाई हेतु आग्रह किया। प्रदेश के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के इस प्रतिनिधिमण्डल का नेतृत्व यूकॉस्ट के महानिदेशक डॉ0 राजेन्द्र डोभाल ने किया व डॉ0 डी0 पी0 उनियाल, वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी ने समन्वयन किया तथा परिषद के वैज्ञानिकों ने प्रतिभाग किया।

100वीं राष्ट्रीय विज्ञान कांग्रेस का उद्घाटन डॉ0 प्रणव मुखर्जी, भारत के महामहिम राष्ट्रपति तथा अध्यक्षीय सम्बोधन डॉ0 मनमोहन सिंह, मा0 प्रधानमंत्री, भारत सरकार ने किया। इस अवसर पर आयोजित 'प्राइड आफ इंडिया एक्सपो–13 में 200 से अधिक राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनियों व संस्थानों ने भाग लिया तथा 10,000 से अधिक प्रतिभागियों व दर्शकों ने अपनी उपस्थिति दर्ज की। विज्ञान कांग्रेस के समापन के अवसर पर विशेष प्रदर्शन व प्रदर्शनी स्थल पर प्रदेश के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के प्रतिनिधिमण्डल से आयोजकों की ज्यूरी द्वारा विभिन्न स्तरों पर किये गये मूल्यांकन के पश्चात इस कडी प्रतिस्पर्धा में उत्तराखण्ड राज्य को सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शनी के लिए प्राइड आफ इंडिया एक्सपो की ट्राफी भेंट की गयी। यह पुरस्कार समापन समारोह के अवसर पर श्री एम0के0 नारायण, महामहिम राज्यपाल, पश्चिम बंगाल द्वारा प्रदान किया गया। डॉ0 राजेन्द्र डोभाल ने 'सर्वश्रेष्ठ विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी प्रदर्शिनी' पुरस्कार' प्राप्त करने के अवसर पर कहा कि यूकॉस्ट अपनी शोध व अनुसंधान को और उच्च स्तर प्रदान करने के साथ–साथ अधिक सहायता उपलब्ध करायेगा। डॉ0 डी0 पी0 उनियाल, वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी, डॉ0 आशुतोष मिश्रा, वैज्ञानिक अधिकारी, डॉ0 कैलाश न0 भाट्टवाज, कनिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी तथा डा0 प्रशांत सिंह, एसोसिएट प्रोफेसर, डी.ए.वी. पी.जी. कालेज, देहरादून, डा0 रोकश सिंह एसिस्टेंट प्रो0 डी.बी.एस. पी. जी. कालेज, देहरादून द्वारा उपरोक्त आयोजन में प्रतिभाग किया गया।

एडवांसड मटिरियल्स फॉर एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स नामक अन्तर्राष्ट्रीय कार्यशाला

परिषद तथा केन्द्रीय भवन अनुसंधान संस्थान, रूड़की के संयुक्त तत्वाधान में Advanced Materials for Energy Efficient buildings (AME2B-2013) विषय पर तीन दिवसीय कार्यशाला का आयोजन, दिनांक 13–15 फरवरी, 2013 को इण्डिया हैबीटैट सेन्टर, नई दिल्ली में किया गया। कार्यशाला में 11 विभिन्न विषयों पर तकनीकी सत्रों का आयोजन किया गया जिसके अन्तर्गत 65 शोध पत्र प्रस्तुत किए गये। कार्यशाला में नार्थ वेर्स्टन यूनिर्वस्टी, यू0एस0ए0 के प्रो0 सुरेन्द्र पी0 शाह एवं सी0बी0आर0आई0 रूड़की के निदेशक, प्रो0 एस0के0 भट्टाचार्य द्वारा Keynote व्याख्यान दिया गया। इसके अलावा आई0आई0टी0 कानपुर के निदेशक, प्रो0 इन्द्रानेल माना, ईकोल सुपरईयोर (Ecole Superieure), फ्रांस के निदेशक (रिसर्च), प्रो मार्क ईल, हांग कांग पोलीटैक्नीक यूनिर्वस्टी के प्रो0 ची–सुन पून, आदित्य बिरला ग्रुप के हैड (शोध एवं विकास), डा0 एस0 चौधरी, यूनिवर्सिटी ऑफ विस्कोंसिन–मिलवोकी (Wisconsin-Milwaukee), यू0एस0ए0 के डा0 के0 सोबोलेव एवं प्रो0 प्रदीप के0 रोहतागी, आई0आई0टी0 दिल्ली के डा0 बी0 भटट्एर्जी, आई0आई0एस0सी0 बैंगलोर के प्रो0 ए0 रामास्वामी, हांग कांग यूनिवर्सिटी ऑफ साइंन्स एण्ड टैक्नोलॉजी, हांग कांग के डा0 लाई जांगलिन, इतेनावुल टैक्नीकल यूनिवर्सिटी, तुर्की के डा0 बेकिर वाई0 पेकमेसी, बी0एम0टी0पी0सी0, नई दिल्ली के अधिशासी निदेशक, डा0 शैलेश के0 अग्रवाल, ईस्टन मिशिगन यूनिर्वस्टी, यू0एस0ए0 के प्रो0 विजय एम. मन्नारी, सी0बी0आर0आई0, रूड़की के डा0 बी0 सिंह, डा0 ए0के0 मिनोचा एवं श्री अशोक कुमार आदि प्रतिष्ठित अंतर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय विद्वान विशेषज्ञों ने प्रतिभाग किया। वर्तमान परिवेश में आवासीय निर्माण मे प्रयुक्त अत्यधिक उर्जा उपभोग हेतु चर्चा की गई। आदर्श आवासीय निर्माण हेतु नैनो तकनीकी की भुमिका तथा स्वास्थ्य एंव टिकाऊ निर्माण हेतु शोध पत्र प्रस्तुत किये गये।

बायोडाइवर्सिटी पर प्रशिक्षण कार्यशाला

जैव विविधता को लेकर पैदा हो रहे संकट को दूर करने के मकसद से उत्तराखण्ड विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद और द एनर्जी एंड रिसोर्सेज इंस्टीट्यूट के संयुक्त तत्वावधान में राजपुर रोड स्थित एक होटल में प्रशिक्षण कार्यशाला का आयोजन दिनांक 21 फरवरी, 2013 को किया गया। कार्यशाला का शुभारंभ यूकॉस्ट के महानिदेशक डॉ0 राजेन्द्र डोभाल ने किया। उन्होंने कहा कि जैव विविधता पर आ रहे संकट से निपटने के लिए योजनाबद्ध तैयारी जरूरी है। उत्तराखण्ड बायोडाइवर्सिटी बोर्ड के पूर्व अध्यक्ष डा0 बी0एस0 बरफाल ने जैव विविधता और सतत विकास पर प्रकाश डाला। कार्यशाला में विषय विशेषज्ञों डॉ0 अवधेश गंगवार, प्रोग्राम डाइरेक्टर, सी0ई0ई0, डॉ0 डी0पी0 उनियाल, वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी, प्रो0 जे0के0 शर्मा, डीन, स्कूल ऑफ इंवायरमेंट एण्ड नेचरल रिसोर्सेस, दून यूनिविर्सिटी, डॉ0 प्रशांत सिंह, एसोसियेट प्रोफेसर, डी0ए0वी0 पीजी कालेज, देहरादून एवं डॉ0 हरीश गुलरिया ने जैव विविधता के विभिन्न पहलुओं पर व्याखान प्रस्तुत किया। टेरी की लिवलीन कहलोन ने बताया कि कार्यशाला का मकसद उत्तराखण्ड और दूसरे राज्यों में शिक्षा क्षेत्र में जैव विविधता को और बेहतर तरीके से शामिल करना है। इसमें उत्तराखण्ड के सांस्कृतिक और सामाजिक पहलुओं को भी शामिल किया गया जो कि जैव विविधता का भाग है।

राष्ट्रीय विज्ञान दिवस–2013

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद (यूकॉस्ट) की ओर से ओ0एन0जी0सी0 एकेडमी के नेहरू आडिटोरियम में दिनांक 28 फरवरी, 2013 को आयोजित किया गया। वर्तमान वर्ष में इस आयोजन हेतु कार्यक्रम की थीम थी 'जेनेटिकली मोडिफइड क्राप्स एवं फूड सिक्योरिटी' कार्यक्रम के मुख्य अतिथि श्री एन0के0 वर्मा, निदेशक, ओ0एन0जी0सी0 थे।

इस अवसर पर निबंध प्रतियोगिता के विजेताओं को सम्मानित किया गया जिसमें प्रथम श्रेणी में, प्रथम पुरस्कार – अनुज कुमार, द्वितीय पुरस्कार – आस्था जोशी, तृतीय पुरस्कार – अजय सिंह नेगी को व सांत्वाना पुरस्कार में प्रथम पुरस्कार – साकीर व द्वितीय पुरस्कार मेधा अग्रवाल तथा द्वितीय श्रेणी में प्रथम पुरस्कार – सोनाली गौड़ द्वितीय पुरस्कार – शिवांगी ठाकुर व तृतीय पुरस्कार – अन्नु पंवार को दिया गया जिसमें प्रथम पुरस्कार में 05 हजार, द्वितीय पुरस्कार में 03 हजार, तृतीय को 02 हजार पुरस्कार नकद दिए गए। इस अवसर पर छात्र/छात्राओं को सम्बोधित करते हुए डॉ0 राजेन्द्र डोभाल, महानिदेशक, यूकास्ट ने कहा कि परिषद द्वारा विभिन्न जिलों में नियुक्त जिला समन्वयकों द्वारा भी इस प्रकार की गतिविधियां आयोजित कर विज्ञान लोकव्यापीकरण से छात्रों को जागरूक कराया जाता है।

पहल को राष्ट्रीय विज्ञान पुरस्कार से नवाजा

आम जनमानस में विज्ञान लोकप्रियकरण एवं विद्यार्थियों में वैज्ञानिक सोच पैदा करने के विगत लगभग 20 वर्षों के प्रयासों का सम्मान करते हुए राष्ट्रीय विज्ञान दिवस – 2013 के अवसर पर

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद, देहरादून द्वारा नामित राज्य की समाजिक एवं वैज्ञानिक संस्था पीपुल्स एसोसियेशन ऑफ हिल एरिया लॉन्चर्स ''पहल'' को नई दिल्ली में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय, भारत सरकार के ''रमन ऑडिटोरियम'' में देश के विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं भूगर्भ विज्ञान मंत्री श्री एस0 जयपाल रेड्डी द्वारा विज्ञान के क्षेत्र में दिए जाने वाले एकमात्र राष्ट्रीय विज्ञान पुरस्कार से नवाजा गया। राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान करते हुए श्री रेड्डी ने कहा कि पहल संस्था ने वर्ष 1994 से अनवरत् रूप से समाज में विज्ञान लोकप्रियकरण, वैज्ञानिक अभिगम्यता एवं विद्यार्थियों में वैज्ञानिक सोच पैदा करने के प्रयासों में उल्लेखनीय कार्य किया है।

पक्षी अवलोकन कैम्पों का आयोजन

परिषद तथा वन विभाग की ईकोटूरिज्म विंग उत्तराखण्ड द्वारा संयुक्त रूप से उत्तराखण्ड पक्षी अवलोकन कार्यक्रम के अर्न्तगत राज्य में बर्ड वॉचिंग को बढ़ावा देने के उद्देश्य से दो पक्षी अवलोकन कैम्पों का आयोजन किया गया। प्रथम कैम्प 8–10 फरवरी, 2013 को रामनगर वन प्रभाग के सीताबनी क्षेत्र में आयोजित किया गया जिसमें 19 प्रतिभागियों को जानकारी एवं प्रशिक्षण दिया गया। तीन दिवसीय फील्ड ट्रिप के दौरान प्रतिभागियों को 100 प्रकार के पक्षियों की पहचान करायी गयी। द्वितीय कैम्प सारी, देवरियाताल में दिनांक 22–24 मार्च, 2013 को आयोजित किया गया जिसमें 21 प्रतिभागियों को जानकारी एवं प्रशिक्षण दिया गया। पक्षी अवलोकन कैम्प में लगभग 100 विभिन्न प्रकार की पक्षी जातियो का अवलोकन किया गया। जिनमे मुख्य रुप से हिमालयन बुलबुल टिट बाबलर जंगली परिनिया कैचर इगल पराकीट इत्यादि थे।

चतुर्थ राज्य स्तरीय नेचर गाइड प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन

परिषद एवं ईकोटूरिज्म विंग उत्तराखण्ड द्वारा राज्य में पारिस्थितिकीय पर्यटन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से चतुर्थ राज्य स्तरीय नेचर गाइड प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन दिनांक 08–28 फरवरी, 2013 को सेन्टर फॉर ईकोटूरिज्म एंड सस्टेनेबल लाइवलीहुड, चूनाखान, रामनगर, नैनीताल द्वारा संयुक्त रूप से किया गया। प्रशिक्षण कार्यक्रम के अर्न्तगत राज्य के संरक्षित क्षेत्रों में कार्यरत 17 वन कर्मी तथा स्थानीय नेचर गाईड/ईको विकास समिति/ग्रामीण पर्यटन से जुड़े 13 सदस्यो सहित कुल 30 प्रतिभागियों को प्रशिक्षण दिया गया। प्रशिक्षण के दौरान 75 व्याख्यानों एवं 05 फील्ड भ्रमण का आयोजन किया गया।

वेस्ट टू एनर्जी: एनवारयमेंट फ्रेंडली टेक्नोलॉजीज नामक कार्यशाला का आयोजन

परिषद तथा यूनिर्वस्टी ऑफ पेट्रोलियम एण्ड एनर्जी स्टडीज, देहरादून के संयुक्त तत्वाधान में Waste to Energy-Environment Friendly Techniques with special emphasis on E-Waste Management नामक दो दिवसीय कार्यशाला का आयोजन, दिनांक 22–23 फरवरी, 2013 को देहरादून में किया गया। कार्यशाला में डा0 राम हमसागर, डा0 लक्ष्मी रघुपति, डा0 टी0के0 जोशी, डा0 एस0पी0 गोयल, डा0 नितिन इण्डले, डा0 अंकुर कन्सल एवं 30 प्रतिभागियों ने प्रतिभाग किया। कार्यशाला मे अपशिष्ट पदार्थ से उर्जा विकास तथा इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट का वैज्ञानिक विधि से निस्तारण पर चर्चा की गई।

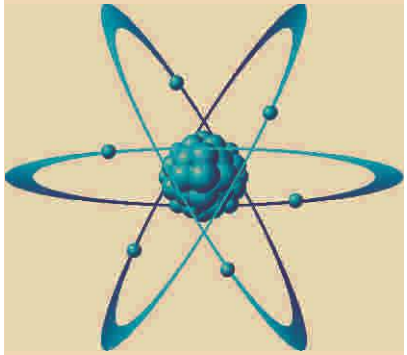

कांसेप्ट ऑफ फिजिक्स नामक कार्यशाला का आयोजन

परिषद तथा राजकीय पी0जी0 कॉलेज गोपेश्वर के संयुक्त तत्वाधान में Concept of Physics: Popular Lectures, Demons and Low Cost Experiments विषय पर दो दिवसीय कार्यशाला का आयोजन, दिनांक 17–18 फरवरी, 2013 को गोपेश्वर में किया गया। कार्यशाला का उद्घाटन श्रीदेव सुमन विश्वविद्यालय के प्रथम कुलपति, डा0 यू0एस0 रावत ने किया। अपने संबोधन में उन्होंने कहा कि किसी भी क्षेत्र में होने वाले शोध तभी सार्थक है जब वह शोध समाज के अंतिम व्यक्ति के हित के साथ ही क्षेत्रिय जरूरतों को पूरा करता हो। उन्होंने पहाड़ी क्षेत्रों को ध्यान में रखते हुए सस्ते दर की भौतिक प्रयोगशालाएं विकसित करने पर भी बल दिया। कार्यक्रम में ए0आर0आई0ई0एस0 नैनीताल के डा0 नरेंद्र बर्त्वाल, गढ़वाल विश्वविद्यालय के डा0 के0डी0 पुरोहित समेत 56 प्रतिभागियों ने प्रतिभाग किया। कार्यशाला में दैनिक जीवन मे भौतिकी का उपयोग तथा कम लागत मे भौतिकी के विभिन्न आयामो पर भी सार्थक चर्चा हुई।

17 वार्षिक नेशनल कन्वेंशन ऑफ सोसाइटी ऑफ फार्मकोलॉजी एण्ड इंटरनेशनल सिम्पोजियम आन हर्बल कौस्मेटिक्स एण्ड न्यूट्रासूटिक्लस

परिषद तथा ज्ञानी इन्दर इन्स्टीटूयट ऑफ प्रौफेशनल स्टडीस, देहरादून के संयुक्त तत्वावधान में "17th Annual National Convention of Society of Pharmacognosy and International Symposium on Herbal Cosmetics and Nutraceutical" विषय पर दो दिवसीय कार्यशाला का आयोजन, दिनांक 23–24 फरवरी, 2013 को देहरादून में किया गया। कार्यक्रम में प्रो0 सी0के0 कोकाट, प्रो0 वी0के0 दीक्षित, कुलपति, के0एल0ई0 यूनिवर्सिटी, श्री मंजीत सिंह सागर, चेयरमैन, जी0आई0एस0आई0पी0एस0, श्रीमती सुरेन्द्र कौर, श्रीमती नीतू कैंथ, प्रो0 अनुपम पाठक, डा0 ए0एन0 कालिया, डा0 एन0एम0 पटेल समेत 400 शोधार्थी एवं छात्र–छात्राएं उपस्थित रहे। उक्त संगोष्ठी मे प्रदेश में मौजूद हर्बल जैवविविधता का वैज्ञानिक दोहन तथा विभिन्न हर्बल पादपो का औषधीय विश्लेषण कर असाध्य रोगो का उपचार करना प्रमुखता से रहा।

इनोवेशन इन बॉयोलाजिकल एण्ड केमिकल साइंस फॉर सोसाइटल बेनीफिट्स नामक कार्यशाला का आयोजन

परिषद तथा एल0एम0एस0 राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पिथौरागढ़ के संयुक्त तत्वाधान में "Innovations in Ethnopharmacology, Recent Developments in Biological & Chemical Sciences for Societal Benefit" नामक दो दिवसीय कार्यशाला का आयोजन, दिनांक 01–03 मार्च, 2013 को पिथौरागढ़ में किया गया। कार्यशाला का उद्घाटन इलाहाबाद विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति प्रो0 एच0आर0 सिंह ने किया। उन्होंने अपने संबोधन मे कहा कि जैव विविधता का संरक्षण बेहद जरूरी है। भविष्य को सुरक्षित रखने के लिए जन्तुओं और पौधों के संरक्षण का कार्य किया जाना चाहिए। प्रो0 सी0एस0 मथेला ने हिमालय के पारम्परिक सघन पादपों की उपयोगिता तथा उनके व्यवसायीकरण पर अपना शोध पत्र प्रस्तुत किया। प्रो0 बी0आर0 कौशल ने जैव विविधता पर पड़ने वाले जलवायु परिवर्तन के बारे में विस्तार से बताया। कार्यशाला में डा0 ए0के0 डोबरियाल, प्रो0 कर्नल हेमा, कमांडेट रणवीर सिंह, डा0 डी0के0 उप्रेती, डा0 राम दास चटर्जी, डा0 अक्षय आंनद, प्रो0 बी0आर0 कौशल, डा0 अंजू विष्ट, डा0 अशोक पंत, डा0 अजय शुक्ला उपस्थित रहे। जैव एवं रासानिक विज्ञान का सामाजिक विकास मे योगदान विषय प्रमुखता से लिया गया जिसके अंतर्गत जैव विविधिता पर मौसम परिवर्तन का असर, एंटीडिपरेशन औषधि निर्माण मे लिपिड सैकैराइड का महत्व तथा जानवरों में अंर्तजातीय वार्तालाप सूक्ष्म जीव एंव पारिस्थिकीय विषयों पर चर्चा की गई।

द फिजिक्स एण्ड मैथेमेटिक्स ऑफ द यूनिवर्स नामक कार्यशाला का आयोजन

परिषद तथा गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार के संयुक्त तत्वावधान में "The Physics and Mathematics of the Universe" नामक दो दिवसीय कार्यशाला का आयोजन, दिनांक 11–12 मार्च, 2013 को हरिद्वार में किया गया। कार्यशाला में प्रो0 जी0 डैट, आई0एम0एस0सी0 चेन्नई, प्रो0 राम सागर, निदेशक, एरीज, नैनीताल, प्रो0 पी0के0 रैना, आई0आई0टी0, रूपर, प्रो0 एस0 पांडा, एच0आर0आई0 इलाहाबाद, प्रो0 ए0 मिश्रा, आई0आई0टी0 रूड़की, डा0 एच0 चांद, एरीज नैनीताल, डा0 आर चन्द्रा, बी0आर0ए0 यूनिर्वस्टी, लखनऊ एवं 176 प्रतिभागियों ने प्रतिभाग किया। कार्यशाला में ब्रहमाण्ड विषय पर विस्तृत रुप से चर्चा की गई। भौतिकी तथा गणितीय अध्ययन के आधार पर ब्रहमाण्ड के रहस्यो के बारे मे जानकारी दी गई।

मिट्टी के पोषक तत्वों को बचाना जरुरी

सोसायटी ऑफ पॉल्यूशन एंड एन्वायरमेंटल कंजरवेशन साइंटिस्ट (स्पैक्स) तथा यूकॉस्ट के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित तीन दिवसीय प्रशिक्षण कार्यशाला का शुभारंभ दिनांक 15 मार्च, 2013 को हुआ। चकराता रोड स्थित एक निजी इंस्टीट्यूट में मिट्टी के मूल सिद्धांत प्रबंधन व परीक्षण विषयक कार्यशाला का उद्घाटन यूकोस्ट के महानिदेशक डॉ0 राजेन्द्र डोभाल ने किया। इस अवसर पर उन्होंने मिट्टी की गुणवत्ता को बनाए रखने पर जोर दिया। उन्होंने कहा कि मिट्टी ही कृषि का मुख्य आधार है। मिट्टी में मौजूद पोषक तत्व पौधों की स्वस्थय वृद्धि में सहायक होते है। मिट्टी में पाए जाने वाले इन पोषक तत्वों को बचाए रखने की जरूरत है। उन्होंने कहा कि मृदा के मूल सिद्धांत, पोषण, संरक्षण व नमूना एकत्रीकरण की जानकारी किसानों को दी जानी चाहिए।

रोल ऑफ मैथेमिटिक्स एण्ड इट्स एपलिकशंस इन डेवलपमेंट ऑफ सांइस एण्ड टैक्नोलॉजी नामक कार्यशाला का आयोजन

परिषद तथा राजकीय पी0जी0 कॉलेज लैंसडौन जयहरीखाल, पौड़ी गढ़वाल के संयुक्त तत्वावधावन में Role of Mathematics and its applications in development of Science and Technology नामक दो दिवसीय कार्यशाला का आयोजन, दिनांक 21–22 मार्च, 2013 को लैंसडौन में किया गया। कार्यशाला का शुभारंभ श्री देव सुमन उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय के कुलपति, डा0 यू0एस0 रावत ने किया। कार्यशाला को संबोधित करते हुए डा0 रावत ने कहा कि ये मंथन का विषय है कि वर्तमान परिपेक्ष्य में छात्रों को तमाम सुविधाएं मिलने के बावजूद वे अपेक्षित मुकाम हासिल करने में सफल नहीं हो रहे है। कार्यशाला में आई0आई0टी रूड़की से डा0 वी0के0 कटियार, एन0एस0एस0 के राज्य समन्वयक अधिकारी, श्री आनंद सिंह उनियाल, एच0एन0बी0 गढ़वाल विश्वविद्यालय के डा0 एस0एस0 रावत, महाविद्यालय के

प्राचार्य, डा0 आर0के0 गुप्ता, डा0 हेमंत विष्ट, डा0 संजय कुमार, डा0 भोला नाथ, डा0 अनिता सिंह, डा0 के0सी0 दुदपुड़ी, डा0 वी0के0 अग्रवाल, डा0 हेमत विष्ट, डा0 सत्येंद्र, डा0 एम0के0 सिंह आदि उपस्थित रहे।

उत्तराखण्ड राज्य शिक्षा एवं अनुसंधान केन्द्र (यूसर्क)

"यूसर्क व्याख्यानमाला - 2013" कार्यक्रम का शुभारम्भ

प्रदेश में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विकास, संवर्धन एवं ज्ञान के आदान प्रदान तथा आधुनिक शोधों की नवीनतम जानकारियों से प्रदेश के वैज्ञानिकों, शोधार्थियों, विद्यार्थियों तथा जनमानस को अवगत कराने के उद्देश्य से उत्तराखण्ड विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान केन्द्र (यूसर्क) ने अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय एवं राज्यस्तरीय लब्ध प्रतिष्ठित वैज्ञानिकों द्वारा 'यूसर्क लेक्चर सीरीज – 2013' कार्यक्रम के अन्तर्गत व्याख्यान करवाने का निर्णय किया है।

यूकास्ट के महानिदेशक डा0 राजेन्द्र डोभाल द्वारा "विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी" विषय पर प्रथम व्याख्यान देकर इस नये कार्यक्रम का शुभारम्भ किया गया। अपने व्याख्यान में डा0 डोभाल ने भारत की विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी से संबंधित एजेन्सियों तथा उनकी कार्यप्रणालियों के सबंध में उपस्थित वैज्ञानिकों एवं तकनीशियनों को अवगत कराया। उन्होंने इस बात पर भी प्रकाश डाला कि किस प्रकार विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के द्वारा आम जनमानस को कृषि, ऊर्जा, स्वास्थ्य एवं प्राकृतिक संसाधनों के उचित शोध, विकास एवं उपयोग द्वारा लाभान्वित किया जा सकता है।

डा0 डोभाल ने सूचना प्रौद्योगिकी एवं जैव प्रौद्योगिकी का उदाहरण देते हुए वैज्ञानिकों से अपने प्रदेश में इस प्रकार की तकनीकियों का उद्भव एवं विकास करने का आवाहन किया जिसमें कम लागत से अधिकतम परिणाम प्राप्त किया जा सकें।

यूसर्क व्याख्यानमाला सीरीज–2013 के क्रम में डा0 बी. आर. अरोड़ा भूतपूर्व निदेशक वाडिया इन्टीट्यूट ऑफ हिमालयन जियोलोजी द्वारा द्वितीय व्याख्यान "अर्थक्वेक, सोसाइटी एण्ड साइंस" विषय पर दिनांक 18 मार्च 2013 को यूसर्क के कान्फ्रेन्स हाल में दिया गया। उक्त व्याख्यान में डा0 अरोड़ा ने भूकम्प विषय से संबंधित छोटे–छोटे किन्तु वैज्ञानिक दृष्टि से अति महत्वपूर्ण बिन्दुओं का स्पष्टीकरण किया। उन्होंने आयाम, तीव्रता, एपीसेन्टर, हाइपो सेन्टर की जो विभिन्न परिभाषायें प्रयोग की जाती है तथा जो भूकम्प द्वारा निष्कासित ऊर्जा से संबंधित है उसके बारे में बताया।

जैवविविधता संरक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम में प्रतिभाग

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग नई दिल्ली के द्वारा जैवविविधता एवं संरक्षण विषय पर एक सप्ताह प्रशिक्षण कार्यक्रम महिला वैज्ञानिकों हेतु दिनांक 18–22 फरवरी, 2013 तक वाइल्ड लाइफ इन्टीट्यूट आफ इन्डिया, देहरादून में सम्पन्न किया गया। प्रशिक्षण के दौरान अलग–अलग राज्यों से 30 महिला वैज्ञानिकों ने प्रतिभाग किया। प्रशिक्षण कार्यक्रम के अर्न्तगत जैव विविधता के विभिन्न पहलुओं जैसे पारिस्थितिकीय सेवायें, वातावरणीय बदलाव, वैट लैन्ड, विज्ञान एवं तकनीकी में महिलायें एवं प्राकृतिक संसाधनों का सतत प्रबन्धन विषय पर चर्चा एवं व्याख्यान दिये गये। उत्तराखण्ड विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान केन्द्र से डा0 मन्जू सुन्दरियाल एवं उत्तराखण्ड राज्य प्रौद्योगिकी एवं तकनीकी परिषद् से डा0 कीर्ति जोशी द्वारा प्रतिभाग किया गया।

"एक्वीफर इनफारमेशन सिस्टम एन्ड एक्वीफर मेनेजमेन्ट प्लान" विषय पर प्रशिक्षण

राजीव गांधी नेशनल ग्राउंड वाटर ट्रेनिंग एन्ड रिसर्च इन्टीट्यूट, रायपुर के तत्वावधान में केन्द्रीय भूमि जल परिषद, उत्तराखण्ड रीजन, देहरादून द्वारा "एक्वीफर इनफारमेशन सिस्टम एन्ड एक्वीफर मेनेजमेन्ट प्लान" विषय पर आयोजित एक सप्ताह के प्रशिक्षण कार्यक्रम में यूसर्क के वैज्ञानिकों डा0 भवतोष शर्मा तथा डा0 ओम प्रकाश नौटियाल द्वारा 01 से 05 मार्च, 2013 तक प्रशिक्षण प्राप्त किया गया। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम में हाइड्रोजिओलोजी के मूलभूत सिद्धान्तों, भूजल के सतत प्रबन्धन में एक्वीफर मापन की महत्वपूर्ण भूमिका, भारत में भूजल के विकास और पर्वतीय क्षेत्रों में जल के प्रबंधन, उत्तराखण्ड के भूजल का परिदृश्य, भूजल के स्तर को नियंत्रित करने वाले कारक, उत्तराखण्ड में पीने योग्य जल की आपूर्ति संबंधी योजनाओं से जुड़े बिन्दु एवं समस्यायें, जलस्रोतों के प्रबंधन में रिमोट सेंन्सिग और जीआईएस की भूमिकाः टिहरी जलाशय का अध्ययन, भूजल के क्षेत्रों के निरीक्षण का महत्व आदि विषयों पर केन्द्रीय भूमि जल परिषद के निदेशक डा0 आर0सी0 जैन, वरिष्ठ वैज्ञानिक डा0 आर0पी0 सिंह, रवि कल्याण बूसा, डी0 बागची, अनुराग खन्ना एवं उत्तराखण्ड जल संस्थान की अधीक्षण अभियन्ता श्रीमती नीलिमा गर्ग द्वारा व्याख्यान दिये गये।

हममें से अनेक लोग ऐसा मानते हैं कि वैज्ञानिक अपने आसपास की बातों तथा उनकी विविधताओं को समझने तथा उनके पीछे छुपे सत्य को प्रकट करने के मामले में अन्य व्यक्तियों से अधिक श्रेष्ठ होते हैं। वैज्ञानिकों का इस प्रकार गौरवीकरण अनावश्यक है। जो वास्तविक वैज्ञानिक होते हैं वे सदैव विनम्र व्यक्ति होते हैं। वे अपने सिद्धन्तों तथा मतों पर निश्चित रूप से दृढ़ होते हैं परन्तु साथ ही साथ अन्यों की कल्पनाओं और विचारों को ग्रहण करने के लिये तत्पर रहते हैं और किसी के भी प्रति कभी भी असम्मान की भावना नहीं रखते हैं। हाँ, यह सच है कि वैज्ञानिक भी सामान्य व्यक्ति ही हैं और वैसे ही गलतियाँ कर सकते है जैसे कोई और। यह सहज संभव है कि अनेक महान् प्रतिभाशाली व्यक्ति हो सकते हैं जो परिभाषा के अनुसार वैज्ञानिक कहे जाये या अनेक ऐसे मान्यताप्राप्त वैज्ञानिक भी हो सकते हैं जिन्होंने बड़ी ईमानदारी और लगन से बड़ा परिश्रम किया हो परन्तु कोई बहुत महत्वपूर्ण रचनात्मक कार्य न किया हो। वास्तविकता यह है कि बौद्धिक योग्यता और भावनिक बुद्धिमत्ता एक हीं सिक्के के दो पहलू नहीं होते।

प्रो एस.पी. मुखर्जी
एनरीमैन्स साईज (अगस्त–सिंतम्बर, 2004) के संम्पादकीय से

विज्ञान पहेलियों के उत्तर

1. डिप्थीरिया
2. विलियम हार्वे
3. 45 करोड़ वर्ष
4. लाल, नीला, हरा
5. ग्लूकोस
6. हीमोग्लोबिन
7. एस. चंद्रशेखर
8. डॉ. जोइल अंजेल
9. आर्सटेंड
10. एंटासिबा हिस्टोलिटिका

पहल

पहल के समाचार

भारतीय विज्ञान कांग्रेस में उत्तराखण्ड के बाल वैज्ञानिकों का अभिदर्शन

इस वर्ष 3 से 7 जनवरी 2013 को कोलकाता विश्वविद्यालय में आयोजित भारतीय विज्ञान कांग्रेस के 100वें अधिवेशन में उत्तराखण्ड के 2 बाल वैज्ञानिकों को वैज्ञानिक अभिदर्शन का सुअवसर प्राप्त हुआ। भारतीय विज्ञान कांग्रेस के इस अधिवेशन के दौरान आयोजित किशोर वैज्ञानिक सम्मेलन में बोक्सा जनजाति कृशक इण्टर कॉलेज–शीशमबाड़ा, देहरादून के बाल वैज्ञानिक मुकुल कुमार तथा विवेकानन्द विद्यामंदिर–अल्मोड़ा के बाल वैज्ञानिक संकर्शण जोशी द्वारा राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के अन्तर्गत प्रस्तुत शोध परियोजनाओं को उक्त अधिवेशन में देश के प्रख्यात वैज्ञानिकों के सम्मुख प्रस्तुत किया गया। इस अवसर पर इन बाल वैज्ञानिकों को देश के वरिष्ठ एवं प्रख्यात वैज्ञानिकों से रू–ब–रू होने एवं राष्ट्रीय स्तर पर हो रहे शोध परिदृश्य को देखने एवं समझने का सुअवसर प्राप्त होना इनके लिए सौभाग्य का विषय रहा। इन बाल वैज्ञानिकों को उक्त अधिवेशन में प्रतिभाग करवाने हेतु डॉ0 बी0सी0 पाण्डेय एवं श्री निर्मल रावत ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया। राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के राज्य समन्वयक डॉ0 अशोक कुमार पन्त ने बताया कि प्रतिवर्श राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस से 2 उत्कृष्ट परियोजनाओं को भारतीय विज्ञान कांग्रेस हेतु भेजा जाता है।

राष्ट्रीय विज्ञान दिवस पर कार्यक्रमों का आयोजन

राष्ट्रीय विज्ञान दिवस के अवसर पर 'पहल' द्वारा राज्य के समस्त जनपदों में रा0बा0वि0 कांग्रेस के नेटवर्क के माध्यम से विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन करवाया गया। इन कार्यक्रमों के अन्तर्गत विज्ञान क्विज, भाषण, निबन्ध, वाद–विवाद प्रतियोगिताओं के साथ–साथ विज्ञान प्रदर्शनियों का भी आयोजन किया गया। जनपद पिथौरागढ़ में संस्था के मुख्यालय के तत्वावधान में एक वृहद कार्यक्रम जे0बी0 मैमोरियल मानस एकेडमी में किया गया जिसमें विज्ञान प्रदर्शनी का विषय ''आओ विज्ञान की राह चलें'' पर जनपद के कई स्कूलों के विद्यार्थियों ने सहभागिता की। उत्कृष्ट प्रतिभागियों को संस्था द्वारा पुरस्कृत किया गया।

'पहल' को यू–कॉस्ट द्वारा सम्मानित किया गया

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय भारत सरकार द्वारा राज्य के समाज वैज्ञानिक संगठन ''पीपुल्स एसोशिएशन ऑफ हिल एरिया लॉन्चर्स पहल'' को बच्चों में वैज्ञानिक सोच पैदा करने हेतु उल्लेखनीय कार्य हेतु प्रदान किये गए वर्ष 2012 के भारतीय विज्ञान पुरस्कार की खुशी में उत्तराखण्ड विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् (यूकॉस्ट) देहरादून द्वारा एक विशेष समारोह मे 'पहल' की अध्यक्ष श्रीमती कमला पन्त को सम्मानित किया गया। देहरादून के सुरभि होटल में 17 मई 2013 को आयोजित एक विशेष समारोह में यू–कॉस्ट के महानिदेशक डॉ0 राजेन्द्र डोभाल एवं भारत सरकार की सचिव श्रीमती विनीता शर्मा द्वारा 'पहल' के कार्यों की प्रशंसा की गयी तथा आशा व्यक्त की गयी कि भविष्य में संस्था इसी तरह विद्यार्थियों में वैज्ञानिक सोच के अपने अभियान को जारी रखेगी। उल्लेखनीय है कि उपरोक्त राष्ट्रीय पुरस्कार हेतु यू–कॉस्ट द्वारा ही भारत सरकार को संस्तुति की गयी थी। समारोह में 'पहल' की अध्यक्ष श्रीमती कमला पन्त ने संस्था को प्रदान किये गए सहयोग हेतु सभी का आभार व्यक्त किया।

पहल के आगामी कार्यक्रम

- राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी दिवस– 11 मई, 2013
- स्टीरियस परियोजना के अन्तर्गत ग्रामीणों का प्रशिक्षण एवं अभिदर्शन कार्यक्रम।
- राष्ट्रीय शिक्षक विज्ञान कांग्रेस की ब्रेन स्टॉर्मिंग कार्यशाला का आयोजन– 05–06 मई, 2013
- राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस की राज्य स्तरीय शिक्षक अभिमुखीकरण कार्यशाला का आयोजन– 11–12 मई, 2013
- विश्व जैव विविधता दिवस का आयोजन– 22 मई, 2013
- विश्व पर्यावरण दिवस का आयोजन– 05 जून, 2013

उत्तराखण्ड शिक्षक विज्ञान कांग्रेस

माध्यमिक स्तर पर अध्यापन से जुड़े शिक्षकों को उनके नवाचारी शिक्षण प्रयासों, अभिनव प्रयोगों, प्रभावी शिक्षण विधाओं के प्रस्तुतीकरण एवं उन्हें वैज्ञानिक अभिदर्शन कराने के उद्देश्य से राज्य में पहली बार 'पहल' संस्था द्वारा एक नई पहल की गयी तथा उत्तराखण्ड विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् (यूकॉस्ट) के उत्प्रेरण एवं सहयोग से उत्तराखण्ड शिक्षक विज्ञान कांग्रेस का आयोजन किया गया। दिनाँक 14 एवं 15 जनवरी 2013 को राजीव गाँधी नवोदय विद्यालय में आयोजित प्रथम उत्तराखण्ड शिक्षक विज्ञान कांग्रेस हेतु ब्रेन स्टोर्मिंग कार्यशाला अक्टूबर 2012 में ही पिथौरागढ़ में आयोजित की जा चुकी थी जिसमें प्रथम उत्तराखण्ड शिक्षक विज्ञान कांग्रेस हेतु विषय निम्नवत् चयनित किये गए–

मुख्य विषय

बेहतर जीवन हेतु विज्ञान शिक्षा

उप विषय

1. प्रभावी कक्षा विज्ञान शिक्षण।
2. विज्ञान शिक्षण एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास।
3. विज्ञान शिक्षा हेतु पाठ्यचर्या एवं शिक्षण विधा।
4. विज्ञान शिक्षाः परम्परागत विज्ञान एवं आधुनिक विज्ञान।
5. सन्दर्भ सामग्री एवं विज्ञान शिक्षा में उनका प्रभावी प्रयोग।
6. नवाचारी विज्ञान शिक्षण कार्यक्रमम।

उपरोक्त उप विषयों में शोध पत्र प्रस्तुत करने हेतु राज्य के शिक्षकों से उनके शोध पत्र आमंत्रित किये गए थे। उत्तराखण्ड शिक्षक विज्ञान कांग्रेस के संयोजक डॉ0 अशोक कुमार पन्त ने बताया कि पोस्टर, ब्रोशर, मीडिया आदि के माध्यम से तथा राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के जनपद/ब्लॉक समन्वयकों के माध्यम से कार्यक्रम का व्यापक प्रचार–प्रसार किया गया तथा इस कार्य

हेतु विशिष्ट पैनल द्वारा 105 शोध पत्रों को प्रस्तुतीकरण हेतु चयनित किया गया तथा इन चयनित शिक्षक–शिक्षिकाओं द्वारा अपने–अपने शोध पत्र प्रस्तुत किये गए।

प्रथम उत्तराखण्ड शिक्षक विज्ञान कांग्रेस का उद्घाटन उत्तराखण्ड विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् के महानिदेशक डॉ0 राजेन्द्र डोभाल ने दीप प्रज्वलित कर किया। इस अवसर पर प्रो0 ए0एन0 पुरोहित, श्री जी0के0 शर्मा, श्री एन0के0 बहुगुणा, प्रो0 एन0एस0 भण्डारी, डॉ0 बी0पी0 पुरोहित, डॉ0 डी0पी0 उनियाल, डॉ0 आर0पी0 बमोला, डॉ0 अरूण कुकसाल श्रीमती कमला पन्त आदि उपस्थित थे।

समारोह में शिक्षकों को सम्बोधित करते हुए डॉ0 राजेन्द्र डोभाल ने शिक्षकों का आह्वान किया कि आज शिक्षकों से अपेक्षा है कि आज वे विद्यार्थियों के लक्ष्य निर्धारण एवं उस लक्ष्य तक पहुँचाने हेतु प्रभावी भूमिका का निर्वहन करें। डॉ0 डोभाल ने कहा कि बेसिक साइन्सेज में विद्यार्थियों की कमी चिन्ता का विषय है, इस ओर विद्यार्थियों को प्रेरित करने की अति आवश्यकता है। डॉ0 डोभाल ने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विकास का अन्तर्राष्ट्रीय विहंगम परिदृश्य प्रस्तुत किया। उल्लेखनीय है कि डॉ0 डोभाल द्वारा यह घोषणा की गयी कि आगामी वर्षों से शिक्षक विज्ञान कांग्रेस उत्तराखण्ड विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् का एक हिस्सा बनेगी ताकि माध्यमिक स्तर के शिक्षकों को व्यापक अवसर प्राप्त हो सके। प्रो0 ए0एन0 पुरोहित द्वारा आधार भाशण प्रस्तुत कर शिक्षकों से व्यावहारिक तौर पर विज्ञान शिक्षण करने का आह्वान किया गया। समारोह को श्री एन0के0 बहुगुणा अपर निदेशक (शिक्षा) द्वारा भी सम्बोधित किया गया। श्री बहुगुणा ने कहा कि 'पहल' द्वारा की गयी यह पहल उत्तराखण्ड में विज्ञान शिक्षकों हेतु अनूठी पहल है तथा अधिकतम विज्ञान शिक्षकों को इसमें सहभागिता करनी चाहिये। समारोह की अध्यक्षता वरिष्ठ वैज्ञानिक श्री जी0के0 शर्मा ने की। प्रो0 एन0एस0 भण्डारी ने सभी आगन्तुकों का स्वागत किया तथा 'पहल' की अध्यक्ष श्रीमती कमला पन्त द्वारा आभार ज्ञापित किया गया। समारोह

का संचालन डॉ0 अशोक कुमार पन्त द्वारा किया गया। इस अवसर पर प्रथम संस्था द्वारा विद्यार्थियों के माध्यम से एक प्रदर्शनी भी लगाई गई।

तकनीकी सत्रों के संचालन हेतु 18 वैज्ञानिकों का एक पैनल गठित किया गया जिनके द्वारा समस्त प्रस्तुतियों का गहनता से मूल्यांकन किया गया। दो दिवसीय शिक्षक विज्ञान कांग्रेस में कुल 105 शोध पत्र प्रस्तुत किये गये। उत्कृष्टता के आधार पर 21 शोध पत्रों को उत्कृष्ट शोध पत्र के रूप में चयनित कर शिक्षकों को सम्मानित किया गया। इस अवसर पर 4 विशेष प्लैनरी सत्रों का भी आयोजन किया गया था। डॉ0 कमल महेन्द्रु द्वारा राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा एवं विज्ञान शिक्षा की व्यावहारिकता पर प्रकाश डाला वहीं कुमायूँ विश्वविद्यालय की बायोटेक्नोलॉजी विभाग की प्रोफेसर बीना पाण्डे ने डी0एन0ए0 फिंगर प्रिंटिग तथा जीनोम संरचना पर प्रतिभागियों से चर्चा की। वाडिया संस्थान के पूर्व निदेशक डॉ0 बी0आर0 अरोड़ा ने हिमालय की भीतरी हलचलों, भू–जल स्तर, एवं पर्यावरणीय प्रभावों पर पावर प्वॉइंट के माध्यम से विस्तृत चर्चा की। एस0एस0जे0 परिसर कुमायूँ विश्वविद्यालय के प्रोफेसर एन0एस0 भण्डारी द्वारा अभिनव रूप से तैयार आवर्त सारणी को शिक्षकों के सम्मुख प्रस्तुत किया गया तथा रसायन विज्ञान के अध्यापन की सरलता पर चर्चा की गयी। राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के राज्य समन्वयक डॉ0 अशोक कुमार पन्त ने विद्यार्थियों में वैज्ञानिक सोच पैदा करने हेतु वार्ता की। प्लेनरी सत्रों का संचालन श्री जी0एस0 बोरा द्वारा किया गया।

उत्तराखण्ड शिक्षक विज्ञान कांग्रेस का समापन पद्मविभूषण श्री सुन्दरलाल बहुगुणा द्वारा किया गया। श्री बहुगुणा ने शिक्षकों का आह्वान किया कि वे विद्यार्थियों को जमीन से जोड़ें तथा परिवेश के विज्ञान को सर्वप्रथम विद्यार्थियों को स्पष्ट कर अभिप्रेरित करें। इस अवसर पर डॉ0 ए0के0 बियानी द्वारा पूरी विज्ञान कांग्रेस की अकादमिक आख्या प्रस्तुत की गयी। 'पहल' की अध्यक्ष श्रीमती कमला पन्त द्वारा पूरे आयोजन में सहयोग हेतु यू–कॉस्ट सहित समस्त शिक्षकों, वैज्ञानिकों आदि के प्रति आभार व्यक्त किया गया। समापन अवसर पर समस्त प्रतिभागी शिक्षकों को प्रमाण पत्र दिये गये तथा उत्कृष्ट शिक्षकों को सम्मानित किया गया।

उल्लेखनीय है कि इस अवसर पर एक विशेष दल द्वारा एक विशिष्ट दस्तावेज ''उत्तराखण्ड घोषणा पत्र'' तैयार किया गया। इस दस्तावेज में राज्य की विज्ञान शिक्षा के वर्तमान परिदृश्य की व्याख्या के साथ–साथ विज्ञान शिक्षा को प्रभावी बनाने हेतु सुझाव दिये गए हैं। राज्य की शिक्षा व्यवस्था में यह स्वयं में एक सबसे पहला दस्तावेज है। इस घोषणा पत्र को तैयार करने में श्री जी0के0 शर्मा, डॉ0 एस0के0 अग्रवाल, डॉ0 ए0के0 बियानी, श्रीमती कमला पन्त, डॉ0 एस0के0 गुप्ता एवं डॉ0 अशोक कुमार पन्त द्वारा कार्य किया गया। समापन समारोह के अवसर पर डॉ0 शशिकान्त गुप्ता द्वारा उत्तराखण्ड घोषणा पत्र प्रस्तुत किया गया।

राष्ट्रीय शिक्षक विज्ञान कांग्रेस, एक परिचय

डॉ0 अशोक कुमार पन्त
प्रधानाचार्य
एस0डी0एस0 रा0इ0का0 पिथौरागढ़

राष्ट्रीय शिक्षक विज्ञान कांग्रेस देश के शिक्षकों का एक ऐसा मंच है जहां वे विज्ञान शिक्षण के क्षेत्र में अपनी समझ और जागरूकता का स्तर विकसित कर सकते हैं। भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के अन्तर्गत राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् द्वारा प्रवर्तित रा०शि०वि० कांग्रेस वर्ष 2003 से ही लगातार शिक्षकों के मौलिक विचारों, धारणाओं और सुझावों को आपस में साझा करने और कक्षाओं में विज्ञान-शिक्षण को अधिक प्रभावी बनाने में सफल सिद्ध हुई है। इस वर्ष सातवीं राष्ट्रीय शिक्षक विज्ञान कांग्रेस के माध्यम से एक बार पुनः शिक्षकों को अपने विज्ञान शिक्षण के क्षेत्र में किये जा रहे अभिनव प्रयासों को प्रस्तुत करने हेतु मंच प्राप्त होगा।

रा0शि0वि0कां0 के प्रमुख उद्देश्य निम्न हैं–

1. स्थानीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर विज्ञान शिक्षा परिदृश्य में नवाचार एवं आलोचनात्मक मूल्यांकन हेतु शिक्षकों को जागरूक करने हेतु मंच प्रदान करना।
2. स्थानीय स्तर पर कम लागत की शिक्षण विधि में नवाचार, हाथ से कर के सीखना विधि को और स्थानीय अनुभवों को विद्यालय स्तर तक ले जाना।
3. विज्ञान शिक्षा एवं संचार के क्षेत्र में शोध एवं विकास को प्रोत्साहित करना, नये प्रयासों का विकास, मापन एवं सम्बद्ध क्षेत्रों से परिपुष्टि।
4. भूमंण्डलीकरण/निजीकरण के परिप्रेक्ष्य में नई आर्थिक नीतियों से प्रभावित विज्ञान शिक्षा पर वैचारिक आदान–प्रदान जिससे आम जन की पहुंच एक नए जीवन स्तर तक हो सके।
5. वर्तमान शिक्षा प्रणाली से इतर नए शिक्षा–शास्त्रीय प्रयोगों से समन्वित विज्ञान शिक्षण पद्धती को विकसित करना।

राष्ट्रीय शिक्षक विज्ञान कांग्रेस एक राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम है जो आम जन में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का संचार करने के लिए गठित भारत सरकार की शीर्ष संस्था राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् द्वारा उत्प्रेरित एवं पोषित है। वैज्ञानिक चेतना और क्षमता के अभाव में बहुधा विकास के मुद्दों पर लिए जाने वाले निर्णय पर्याप्त विश्लेषण के बिना ही ले लिए जाते हैं। इसलिए इस कार्यक्रम का महत्व बढ़ता जा रहा है। आज स्थानीय स्तर पर भी लोगों को निर्णय लेने पड़ रहे हैं जिसके लिए हमें

वैज्ञानिक चेतना से सम्पन्न लोगों की आवश्यकता है।

उल्लेखनीय है कि राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् जो कि भारत में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार में जुटे हुए संगठनों का एक स्वयंसेवी नेटवर्क है, इस सम्मेलन को प्रतिवर्ष आयोजित करता है। विज्ञान के संचार और लोकप्रियकरण के लिए समर्पित 75 से अधिक सरकारी और गैर–सरकारी संगठन इसके सदस्य हैं। विगत 20 वर्षों से राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के रूप में एक वृहत् वार्षिक गतिविधि का आयोजन सेकेंण्डी एवं सीनियर सेकेण्डी स्तर पर विज्ञान के शिक्षण–अधिगम की दिशा में प्रभावी भूमिका का निर्वहन कर रहा है। रा0शि0वि0 कांग्रेस एक खुला मंच है जिसमें चयनित विषयों पर अपने विचारों, अनुभवों और प्रयोगों के परिणामों को दूसरों के साथ साझा करने के लिए राष्ट्रीय संयोजक को शोधपत्र प्रेषित किये जाते हैं। चयनकर्ताओं का एक राष्ट्रीय पैनल इन शोध पत्रों का मूल्यांकन करता है और चयनित प्रतिभागियों को राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित होने वाले समारोह में अपना शोध पत्र प्रस्तुत करने के लिए आयोजित किया जाता है। रा0शि0वि0 कांग्रेस में सेकेण्ड्री/सीनियर सेकेण्ड्री स्तर के विज्ञान शिक्षक, व्यवसायिक शिक्षक/मुक्त विद्यालय के शिक्षक/शिक्षक प्रशिक्षक/डायट के शिक्षक, वैज्ञानिक/तकनीकी विशेषज्ञ/कॉलेज अध्यापक/स्कूल स्तर पर अध्यापनरत् प्रोफेसर, विज्ञान शिक्षा/संचार के क्षेत्र में कार्यरत् किसी संगठन के कार्यकर्ता अपने शोध पत्रों सहित प्रतिभाग कर सकते हैं।

इस वर्ष आयोजित होने वाली सातवीं राष्ट्रीय शिक्षक विज्ञान कांग्रेस हेतु मुख्य विषय ''दीर्घकालीन विकास हेतु विज्ञान शिक्षा'' चयनित किया गया है। उपरोक्त विषय के चयन की पृष्ठभूमि में यह तथ्य संज्ञान में लिया गया है कि पं0 जवाहर लाल नेहरू ने सन 1960 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह के अवसर पर अपना यह दृढ़ मत प्रदर्शित किया था कि केवल विज्ञान ही मानव की विविध समस्याओं जैसे भूख और गरीबी, अस्वच्छता और कुपोषण, अशिक्षा और अज्ञान, अंधविश्वास तथा रूढ़िवादिता, परम्परामोह तथा अंध श्रद्धा एवं लाखों करोड़ों भूख से पीड़ित लोगों के बीच संसाधन एवं संपत्ति का विनाश आदि से समाधान दिला सकता है। डॉ0 ए0पी0जे0 अब्दुल कलाम ने भी अनेक बार यह विश्वास प्रकट किया है कि सन 2012 के बाद के भारत के लिये विकास ही एकमात्र अवलम्बन है।

विकास का अर्थ है कि भावी पीढ़ी की आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति में बाधा न बनते हुए वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति करना। इसके लिये अपेक्षित है कि लोगों को समाज को प्रभावित करने वाले प्रत्येक प्रश्न पर निर्णय लेने से पूर्व सही वैज्ञानिक सिद्वान्तों तथा प्रक्रियाओं का समझदारी से पालन करना होगा। आज विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विकास के आधार हैं। विज्ञान के आधारभूत प्रशिक्षण से ही व्यक्ति में अनेक प्राथमिक विशेषताओं तथा समस्याओं के रचनात्मक समाधान, विवेचनात्मक विचार करने की पद्धति, सहकारिता, तकनीकों का प्रभावी प्रयोग तथा आजीवन ज्ञानार्जन की इच्छा का विकास होता है। इसलिये इसमें कोई संशय नहीं है कि यदि विकास का लक्ष्य प्राप्त करना है तो शिक्षण, विशेषतया विज्ञान शिक्षण आवश्यक तथा अनिवार्य है। इस विचार की पुष्टि संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा दिसम्बर 2002 में ही तब कर दी गई जब उसने सन 2005 से 2014 के काल को विकास के लिये विज्ञान शिक्षण का संयुक्त राष्ट्र दशक घोषित किया था। आज अध्ययन व अध्यापन के आधुनिक स्वरूप का मूल आधार जिज्ञासा, ज्ञानार्जन तथा विश्व की सही समझ है। स्पष्ट है कि इसके लिये अध्ययन की पद्धति, उपकरण, मूल्यांकन स्वरूप आदि में परिवर्तन तथा संस्थाओं को समाज से जोड़ना अपेक्षित है। आज आवश्यकता है कि विकास की अवधारणा की सही समझ बनाने के लिये वैज्ञानिक साक्षरता बढ़े। इसी से अधिक गुणवत्तापूर्ण जीवन भी विकसित होगा।

इसी दृष्टिकोण से निम्नलिखित लक्ष्यों तथा उद्देश्यों की पूर्ति हेतु सन 2013 की राष्ट्रीय शिक्षक विज्ञान कांग्रेस के लिये विषय 'दीर्घकालीन विकास के लिये विज्ञान शिक्षा' चुना गया है। यह अपेक्षित है कि इस विषय तथा इससे संबंधित निम्नलिखित 3 उपविषयों मे से किसी को लेकर अध्यापक शोध परियोजनायें बनायें, उन पर कार्य करें तथा अपने शोध पत्रों को कांग्रेस में प्रस्तुत करें। मुख्य विषय के साथ चयनित उपविषयों का परिचय निम्नवत् है–

उपविषय I: विकास के लिये विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी की समझ– इस विषय के अन्तर्गत शिक्षक निम्न क्षेत्रों में कार्य कर अपने शोध पत्र प्रस्तुत कर सकते हैं–

विज्ञान तथा गणित का प्रभावी अध्ययन एवं अध्यापन

विज्ञान तथा गणित के कार्यरत शिक्षकों द्वारा इन विषयों के अध्यापन को अधिक प्रभावशाली, सुगम तथा उपयोगी बनाने हेतु अपनाई गई विविध पद्धतियों पर चर्चा की जा सकती है। उदाहरणार्थ शिक्षकों द्वारा विकसित की गई कोई नवीन प्रक्रिया जैसे रचनात्मक मनोरंजन, क्रीड़ात्मक, पहेलियाँ, प्रश्नात्मक, विज्ञान–कथा, क्षेत्र भ्रमण, केस स्टडी आदि जो उन्हें परंपरागत पद्धति की अपेक्षा बेहतर प्रतीत होते है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास

हर विज्ञान अध्यापक का स्वयं का दृष्टिकोण वैज्ञानिक होना चाहिये और उसे इस दृष्टिकोण को विद्यार्थियों में प्रस्तुत भी करना चाहिये। इस क्षेत्र के शोध में वैज्ञानिक विचार धाराओं के लिये किये गये प्रयासों का अध्ययन, वैज्ञानिक दृष्टिकोण के मापन के लिये मानकों या पद्धतियों का विकास, विज्ञान अध्यापन के कारण विद्यार्थियों के व्यवहार में आने वाले परिवर्तनों का अध्ययन, विद्यार्थियों में निरीक्षण क्षमता के विकास का अध्ययन आदि सम्मिलित किये जा सकते है।

प्रायोगिक क्रियाओं, सूचना एवं संचार तकनीकों तथा बहुमाध्यमों का उपयोग

शिक्षकों द्वारा विज्ञान तथा गणित के अध्यापन हेतु अपनाई गई नवीन प्रायोगिक क्रियाओं तथा सूचना एवं संचार तकनीकों (विकीपीडिया, बहुमाध्यम, पावर प्वाइंट आदि) के अध्ययन के परिणाम प्रस्तुत किये जा सकते हैं। शिक्षक इन पद्धतियों के विद्यार्थियों पर पडने प्रभाव आदि का तुलनात्मक अध्ययन कर सकते हैं।

विज्ञान तथा गणित के अध्यापन में अभिनव पद्धतियाँ

नवनवीन पद्धतियों से अध्ययन–अध्यापन का स्तर ऊँचा उठता है। अध्यापक उनके द्वारा विज्ञान षिक्षण के लिये अपनाई गई नवनवीन पद्धतियों जैसे षोध परियोजनाओं, उदाहरण अध्ययनों, मनोरंजन विधियों आदि के प्रभावों का अध्ययन प्रस्तुत कर सकते हैं।

अध्यापकों का प्रभावी प्रषिक्षण

शैक्षिक सुधारों का मूल आधार शिक्षक है। इसलिये उनका सेवापूर्व तथा सेवारत प्रशिक्षण लाभदायक है। शिक्षकों के लिये प्रशिक्षण पद्धतियों, उनकी उपयोगिता या अनुपयोगिता आदि के उदाहरणों एवं व्यावहारिकता से संबंधित विषयों पर अध्ययन तथा शोध प्रस्तुत किये जा सकते है।

विज्ञान अध्यापन में सर्व समेकित दृष्टिकोण

समेकित दृष्टिकोण से तात्पर्य है शिक्षण का ऐसा वातावरण तथा परिस्थिति जिसमें विभिन्न शारीरिक तथा मानसिक क्षमताओं वाले विद्यार्थियों को भी समान रूप से समावेशित किया जा सके। इस संबन्ध में किये गये अध्ययनों, अपनाई गई या विकसित की गई विधियों, समेकित अध्यापन हेतु किये गये विशिष्ट प्रयत्नों, विकसित उपकरणों, भिन्न–भिन्न क्षमता वाले बच्चों के तथ्यों से संबंधित जिज्ञासाओं, विचारों, भ्रांतियों आदि के समाधान आदि विषय सम्मिलित किये जा सकते है।

उपविषय II : पारम्परिक ज्ञान/व्यवहार, आधुनिक विज्ञान तथा दीर्घकालीनता

पारम्परिक ज्ञान प्रकृति के विविध पक्षों जैसे हवा, पानी, मिट्टी, वनस्पति, जीव–जन्तु, पर्यावरण आदि से संबंधित गत हजारों वर्शों के अनुभवों तथा जानकारियों का भण्डार होता है। इसके प्रमाण मनुश्य के द्वारा निर्मित क्षेत्रों में अपनाई गई पारम्परिक पद्धतियों जैसे कृशि उत्पादन, पषुपालन, स्वास्थ्य, मौसम पूर्वानुमान, मिश्रित कृशि, भूमि संसाधन प्रबंधन तथा फलस्वरूप प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन, आदि में मिलते हैं। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ऐसे पारम्परिक ज्ञान को वैज्ञानिक कसौटी पर कसा जाना चाहिये जिससे विकास के एक नवीन स्वरूप को प्रत्यक्ष किया जा सके। इस उप विशय के अन्तर्गत षिक्षकों द्वारा निम्न क्षेत्रों में कार्य किया जा सकता है–

पारम्परिक ज्ञान तथा व्यवहार के वैज्ञानिक आधार की खोज

इस विषय में जल संरक्षण, चिकित्सा पद्धतियों, खाद्य प्रसंस्करण, मौसम पूर्वानुमान, फसल चक्र, मत्स्य पालन, भवन निर्माण, वस्त्र निर्माण एवं रंगाई, हस्तशिल्प, लोक संगीत तथा वाद्य आदि से संबंधित पारंपरिक पद्धतियों एवं ज्ञान का वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में अध्ययन किया जा सकता है।

पारंपरिक ज्ञान तथा व्यवहार का विकास से संबंध

इस विषय में विभिन्न समाजों अथवा समुदायों में प्रचलित पारंपरिक पद्धतियों तथा तत्संबंधी ज्ञान की विकास की दृष्टि से उपादेयता का अध्ययन किया जा सकता है। उदाहरणार्थ पारंपरिक भवन स्वरूपों का सौर ऊर्जा, जल संरक्षण, पवन ऊर्जा आदि से संबंध का अध्ययन हो सकता है।

उपविषय III : समाज के लिये विज्ञान

इस उपविषय के अन्तर्गत वैज्ञानिक विचारों, सिद्धान्तों तथा विधियों के सामाजिक संबंधों एवं प्रभावों का अध्ययन किया जा सकता है। समाज आधारित इस प्रकार के अध्ययनों तथा प्रयोगो के कुछ निम्न उदाहरण दृष्टव्य हैं।

विज्ञान तथा अंधविश्वास निवारण

देश के विभिन्न भागों तथा समुदायों में व्याप्त भूत बाधा, तंत्र–मंत्र जैसे अंधविश्वासों के कारणों तथा उनके समाज पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन, उनके वैज्ञानिक निराकरण के उपाय, विभिन्न समाजों में व्याप्त विधि–निशेधों की सामाजिक विकास में बाधाओं का अध्ययन आदि पर शोध प्रस्तुत किया जा सकता है।

स्वास्थ्य/कृषि/ऊर्जा/पर्यावरण/जल आदि हेतु विज्ञान

बच्चों और बड़ों के स्वास्थ्य हेतु रहन–सहन, खान–पान आदि की आदतों, संवर्धन उत्पादन तथा पद्धतियों जैसे मिट्टी की गुणवत्ता, कृषि रसायनों का प्रयोग, मृदा पर्यावरण, खाद्य प्रसंस्करण तथा संरक्षण आदि जीवन यापन स्तर को प्रभावित करने वाले विषयों के वैज्ञानिक पहुलओं, निस्तारण तथा पुर्नप्रयोग (उदाहरणार्थ कृषि अपशिष्ट, खाद्य अपशिष्ट, ई–अपशिष्ट आदि) मानव स्वास्थ्य तथा पर्यावरण पर वायु, जल तथा मृदा प्रदूषणों के परिणाम, जैव (प्राणी तथा वनस्पति) एवं अजैव (भूमि, जल तथा वातावरण) दोनों प्रकार के संसाधनों की कमी तथा गुणवत्ता न्यूनता पर मानवीय क्रिया कलापों का प्रभाव, खाद्य मिलावट, जल गुणवत्ता, भवन निर्माण, मौसम परिवर्तन, प्राकृतिक आपदाओं जैसे भूस्खलन, बाढ़, सुनामी आदि अनेक विषयों के सामाजिक संबंधों का भी अध्ययन किया जा सकता है।

विज्ञान लोकप्रियकरण कार्यक्रमों के प्रभाव

अनेक व्यक्ति तथा संस्थायें विज्ञान लोकप्रियकरण के कार्यक्रम तथा उपक्रम चलाती रहती हैं। इनके समाज की स्थिति पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन किया जा सकता है जैसे खाद्य प्रदूषण, रक्त दान, जैव विविधता संरक्षण आदि क्षेत्रों में। अनेक विद्यालयों में पर्यावरण या विज्ञान क्लब होते हैं, अध्यापक इनके माध्यम से विद्यार्थियों में उत्पन्न एवं विकसित जागरूकता का अध्ययन कर सकते हैं। इसी प्रकार अन्य संचार तकनीकों जैसे मुद्रण, इलेक्ट्रॉनिक, नाटक, लोक–कलाओं आदि द्वारा विज्ञान लोकप्रियकरण कार्यक्रमों के प्रभावों का अध्ययन किया जा सकता है।

प्रतिभागी शिक्षकों के अभिमुखीकरण हेतु पूरे देश में 4 स्थानों पर अभिमुखीकरण कार्यशालाओं का आयोजन किया जा रहा है। यह सम्भावना है कि राष्ट्रीय शिक्षक विज्ञान कांग्रेस का मुख्य आयोजन अक्टूबर द्वितीय सप्ताह में होगा जिस हेतु स्थल एवं तिथि निर्धारित किये जाने हैं। प्रतिभागी शिक्षकों से अपेक्षा है कि वे अपने शोध पत्र 20 सितम्बर 2013 तक डॉ0 अशोक कुमार पन्त, राष्ट्रीय संयोजक एन0टी0एस0सी0–2013 को निर्धारित प्रारूप में हार्ड/सॉट कॉपी में अवश्य भेज दें। इस हेतु राष्ट्रीय संयोजक से ई–मेल ashokntsc@gmail.com या मोबाईल नं. –91–9412344870 पर सम्पर्क किया जा सकता है।

जैव उर्वरकों का महत्व

दिनेश मणि

फसलों से अच्छी पैदावार लेने के लिए अनेक पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। मृदा में इन तत्वों में से किसी एक की कमी होने पर या तो बाहरी रूप से असामान्य लक्षण प्रकट हो जाते हैं अथवा बढ़वार में न्यूनाधिक कमी आ जाती है। इन्हीं में से एक तत्व नाइट्रोजन पौधों की बढ़वार के लिए आवश्यक होता है। नाइट्रोजन की आपूर्ति हम उर्वरकों से करते है। लेकिन रासायनिक उर्वरक महंगा होने की वजह से किसान संतुलित मात्रा में प्रयोग नहीं कर पाता है। अतः इन परिस्थितियों में जैव-उर्वरकों का विकास इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण उपलब्धि है। पिछले कुछ दशकों से संसार में दलहनी फसलों में जैव-उर्वरकों का उपयोग हो रहा है। लेकिन धान्य फसलों में जैव-उर्वरकों की कमी किसानों द्वारा काफी समय से महसूस की जा रही है। मिट्टी में पोषक तत्वों की होने वाली क्षति तथा रासायनिक उर्वरकों की बढ़ती कीमत ने वर्तमान में कृषि वैज्ञानिकों का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया है कि रासायनिक उर्वरकों का कोई उपयुक्त विकल्प खोजा जाए। इस दृष्टिकोण से कृषि वैज्ञानिकों ने धान्य फसलों के लिए जैव-उर्वरकों की खोज कर ली है। इसे जीवाणु-खाद के नाम से भी जाना जाता है।

जैव–उर्वरक या जीवाणु खाद विशिष्ट प्रकार के जीवाणुओं का एक विशेष प्रकार के माध्यम (कोयला, मिट्टी, गोबर की खाद) में ऐसा मिश्रण है, जो कि वायुमंडल की नाइट्रोजन को लेकर पौधों को उपलब्ध कराता है। इसके साथ ही यह कुछ लाभदायक विटामिन, हारमोन्स तथा पौधों की वृद्धि में सहायक सूक्ष्म पोषक तत्वों का संश्लेषण भी करता है। ये सभी जैव–उर्वरक पूर्णतः प्रायः प्राकृतिक एवं सूक्ष्म जीवाणु पर आधारित हैं। ये सभी जीवाणु मिट्टी एवं पौधों की जड़ों में उपस्थित ग्रंथियों में भी पाए जाते हैं। इनका मिट्टी या वातावरण आदि पर कोई भी हानिकारक प्रभाव नहीं पड़ता है।

जैव–उर्वरकों को जैव–कल्चर अथवा जैव–टीके भी कहा जाता है। अकार्बनिक उर्वरकों की उच्च कीमतों तथा अप्राप्यता के परिप्रेक्ष्य में जैव–उर्वरक वैकल्पिक पदार्थों के रूप में प्रयोग किए जा रहे हैं। इन उर्वरकों का प्रयोग प्राचीन काल से किया जाता रहा है। दलहनी फसलों की जड़ों में जीवाणुओं द्वारा वायुमंडलीय नाइट्रोजन स्थिर करने की क्षमता होती है। यदि इन जीवाणुओं के कल्चर अथवा टीके मृदा में मिला दिए जाते हैं तो जीवाणुओं द्वारा स्थिर नाइट्रोजन की मात्रा में पर्याप्त वृद्धि हो जाती है। अब अनेक जीवाणुओं के टीके (कल्चर) प्रचलित हैं। इनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं।

1. राइजोबियम कल्चर (दलहनी फसलों के लिए)
2. एजोटोबैक्टर कल्चर (गेहूँ तथा अन्य अनाज फसलों के लिए)
3. एजोस्पाइरिलम कल्चर (खाद्यान्न फसलों के लिए)
4. शैवाल टीके, नील–हरित शैवाल (धान व अन्य अनाज की फसलों के लिए)
5. फास्फोबैक्टिरिन टीका (फॉस्फेट विलेय करने के लिए प्रयुक्त)

इनके अतिरिक्त अनेक प्रकार के जैव–उर्वरकों का निर्माण किया जा रहा है। भारत सरकार के कृषि मंत्रालय के अधीन जैव–उर्वरकों पर अनुसंधान किए जा रहे हैं तथा नए–नए जैव–उर्वरकों का विकास किया जा रहा है। इन उर्वरकों के प्रचलित होने का प्रमुख कारण इनका अपेक्षाकृत सस्ता व अधिक अवशेषी प्रभाव होना है।

राइज़ोबियम कल्चर

यह सर्वाधिक प्रयोग होने वाले जैव–उर्वरक हैं। राइजोबियम सूक्ष्म जीवाणु दलहनी फसलों की जड़ों की गाँठों के वे जीवाणु हैं जो अपने पोषक पौधे के सहयोग से कार्य करते हैं और वायुमंडलीय नाइट्रोजन को मिट्टी में जमा कर देते हैं। यह क्रिया–विधि सहजीवी नाइट्रोजन स्थिरीकरण कहलाती है। भारत में दलहनी फसलों द्वारा 50 से 150 किलोग्राम तक नाइट्रोजन वायु ग्रहण करके मृदा में जमा की जाती है। सनई व लोबिया द्वारा लगभग 90 किग्रा. अरहर द्वारा 40 किग्रा. मटर व चने द्वारा 80–100 किग्रा. तक नाइट्रोजन प्रतिवर्ष स्थिर हो सकती है। कल्चर मिलाने के फलस्वरूप मृदा नाइट्रोजन में 15–20 प्रतिशत तक की वृद्धि संभव है। प्रत्येक फसल अथवा वर्ग के लिए राइजोबियम कल्चर भिन्न–भिन्न होता है क्योंकि फसलों के अनुसार सहजीवी जीवाणु भी भिन्न–भिन्न होते हैं। कुछ फसलों के नाइट्रोजन स्थिर करने वाले जीवाणु सारणी में उल्लिखित हैं।

इन जीवाणुओं के पृथक कल्चर तैयार किए जाते हैं तथा विशिष्ट फसलों में प्रयोग किए जाते हैं। सम्मिलित रूप में इन्हें राइजोबियम कल्चर कहते हैं।

एजोटोबैक्टर कल्चर

यह कल्चर गैर–दलहनी फसलों में प्रयुक्त होते हैं। इनमें राइजोबियम सूक्ष्म जीवाणु के स्थान पर एजोटोबैक्टर अथवा एजोस्पाइरिलम जीवाणुओं का संवर्धन किया जाता है। ये कल्चर मुख्य रूप से गेहूँ व धान में प्रयोग किए जा रहे हैं। चूँकि इन फसलों की जड़ों में गाठें नहीं होती हैं अतः ये मृदा में रहकर वायुमंडल की नाइट्रोजन जमा करते हैं। इस प्रकार का स्थिरीकरण असहजीवी नाइट्रोजन स्थिरीकरण कहलाता है। इनमें प्रमुख जीवाणु एजोटोबैक्टर, रोडो–स्यूडोमोनास, बेंजरिकिया आदि प्रयुक्त किए जाते हैं। इनके प्रयोग में गेहूँ व धान की उपज में अत्यधिक वृद्धि होती है।

फास्फोबैक्टिरिन कल्चर

इसे फास्फोरस विलेयक जीवाणु कहते हैं। फॉस्फोबैक्टर एक ऐसा जीवाणु है जो अविलेय तथा अप्राप्य फॉस्फोरस को विलेय करके प्राप्य बनाता है। प्रायः मृदाओं में फॉस्फोरस अविलेय अवस्था में रहता है। विलेय फॉस्फेटिक उर्वरक भी मृदा में प्रयोग करने पर शीघ्र ही अविलेय हो जाते हैं तथा पौधों को सुलभ नहीं रह पाते हैं। ऐसी मृदाओं में फॉस्फोबैक्टिरिन कल्चर का प्रयोग किया जाता है जिससे अविलेय फॉस्फोरस विलेय हो जाता है तथा अंत में पौधों को सुलभ होता है। देश में विभिन्न फसलों पर किए गए अनुसंधानों से ज्ञात हुआ है कि फॉस्फोबैक्टिरिन के प्रयोग से धान, गेहूँ, मक्का, चना, उड़द, मटर, अरहर आदि के लिए फॉस्फोरस की उपलब्धि 10–30 प्रतिशत तक बढ़ जाती है। दलहनी फसलों में राइजोबियम के साथ इसका प्रयोग करने पर यह अधिक प्रभावशाली होता है।

कुछ फॉस्फोरस विलेयकारी जीवाणु निम्नलिखित हैंः– 1. *स्यूडोमोनास स्ट्रेटा*, 2. *बैसिलस पोलीमिक्सा*, 3. *बैसिलस मेगाटेरियम*, 4. *एस्पर्जिलस अवामोरी*।

शैवालिक कल्चर

नीली–हरी शैवाल वायुमंडल तथा अन्य स्रोतों से नाइट्रोजन लेकर उसको मृदा में जमा कर देती है। ये मृदा में धरातल तथा नीचे के संस्तरों में पाई जाती है, परंतु जो शैवाल धरातल पर होते हैं वे ही नाइट्रोजन स्थिरीकरण कर पाते हैं क्योंकि उन्हीं में प्रकाश–संश्लेषण क्रिया हो सकती है। उत्तर प्रदेश व बिहार के धान के खेतों में नीले–हरे शैवालों के समुदाय के नाइट्रोजन स्थिर करने वाले शैवाल सर्वत्र अधिकता में पाए जाते हैं। इनमें *औलोसीरा, फर्टिलीसिया, एनाबीना, एम्बीगुआ, एनाबीना फर्टिलिसिमा, नोटस्टोक* प्रजाति आदि प्रमुख हैं। शैवालों की बढ़वार, मृदा की प्रकृति, कार्बनिक पदार्थ, नमी की मात्रा, चूना अंश व पीएच. मान पर निर्भर करती है। धान तथा अनाज की फसलों में नील–हरित शैवालों के कल्चर काफी प्रचलित हो रहे हैं। कल्चर वाले धान की उपज में 100–300 प्रतिशत तक वृद्धि देखी गयी है।

नील–हरित शैवाल का प्रयोग ऊसर भूमि के सुधारों में भी किया जा सकता है। समुद्री शैवाल जिनमें पोटाश, अमोनियम सल्फेट आदि अनेक वृद्धिकारक तत्व होते हैं, बहुतायत में प्रयोग किए जा रहे हैं। भारत में शैवाल उर्वरकों का प्रयोग कम मात्रा में ही हो रहा है परंतु भविष्य में शैवाल कल्चर अकार्बनिक उर्वरकों का अच्छा विकल्प बन सकते हैं।

जैसा कि इसके नाम से विदित होता हैं, यह नीले–रंग की होती है जो वायुमंडलीय स्वतंत्र नाइट्रोजन को भूमि में स्थिर करके फसल को प्रदान करती है जो धान की खेती के लिए काफी उपयोगी सिद्ध हुआ है। साथ ही इसका सबसे अच्छा फायदा यह है कि किसान इस उर्वरक को स्वयं अपने खेत या घर पर कम लागत में बना सकता है। वैसे तो धान के खेत में ये शैवाल स्वतः ही

सारणी : दलहनी फसलों में नाइट्रोजन स्थिर करने वाले जीवाणु

सूक्ष्म जीवाणु	वर्ग का नाम	फसलें
राइजोबियम	रिजका वर्ग	रिजका, स्वीट लावर
राइजोबियम ट्रोईफोली	तिपतिया वर्ग	बरसीम
राइजोबियम लेग्यूमिनोसेरम	मटर वर्ग	मटर, मसूर
राइजोबियम फेजियोली	बीन वर्ग	सेम, मोंठ
राइजोबियम जैपोनीकम	सोयाबीन वर्ग	सोयाबीन
राइजोबियम प्रजाति	लोबिया वर्ग	लोबिया, सेम, मूँगफली

उग जाते हैं। यदि पर्याप्त मात्रा में एवं शुद्ध नील–हरित शैवाल का उपयोग किया जाए तो धान की पैदावार को काफी बढ़ाया जा सकता है। नील–हरित शैवाल की कुछ जातियाँ, जैसे *नोस्टाक, एनाबिना, ओलीसिरा* इत्यादि धान की खेती के लिए काफी उपयोगी सिद्ध हुई हैं। इस शैवाल के तंतुओं में डिटरोसिस्ट नामक कोशिकाएं होती हैं जिनमें वायुमंडल की नाइट्रोजन का अमोनिया में परिवर्तन होता है तथा यहाँ से इनका स्थानांतरण पौधों की जड़ों में होता है। यहाँ ध्यान देने योग्य बात है कि धान के खेत में दो प्रकार के शैवाल पाए जाते हैं। इनमें से एक को नील–हरित शैवाल कहते हैं। नील–हरित शैवाल ही पौधों के लिए लाभदायक होता है तथा हरित शैवाल पौधों के लिए हानिकारक होता है। नील–हरित शैवाल लगभग 30–40 किग्रा. नाइट्रोजन/हे. उपलब्ध कराता है और एक हेक्टेयर में लगभग 10 किग्रा. नील–हरित शैवाल की आवश्यकता पड़ती है।

नील हरित शैवाल तैयार करने की विधि

1. खेत में एक आयताकार गड्ढा खोदें तथा उसी के आकार का पोलीथीन सतह पर बिछाएं।
2. इस गड्ढे में 3–4 किग्रा. अच्छी मिट्टी प्रति वर्ग मीटर की दर से डालें और 100 ग्राम सुपरफॉस्फेट प्रति वर्ग मीटर की दर से समान रूप से छिड़क दें।
3. लगभग 10–15 सेमी. ऊंचाई तक पूरे गड्ढे में पानी भर दें एवं 2 मिमी. मेलाथियान भी मिलाएं। उसके पश्चात् एक दिन तक गड्ढे को ऐसे ही छोड़ दें।
4. जब मिट्टी तल में बैठ जाए तो 100 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से नील–हरित शैवाल के मदर कल्चर का सतह पर छिड़काव करें।
5. जब तापमान 35 डि.से. या इससे अधिक होता है तब इस शैवाल में तीव्रता से वृद्धि होती है और 10 से 15 दिन के अंदर पानी की सतह पर शैवाल की मोटी तह बन जाती है। शैवाल की वृद्धि के समय गड्ढे को 10 सेमी. की ऊंचाई तक पानी से भरकर रखना चाहिए एवं जब शैवाल की मोटी तह बन जाए, तब पानी बंद कर देना चाहिए और शैवाल की सतह को धूप में सूखने के लिए छोड़ देना चाहिए।
6. पूर्णतः सूखने के बाद शैवाल की तह मिट्टी से अलग हो जाएगी। इन्हें निकाल कर पोलिथिन की थैलियों में भंडारण करें।
7. लगभग एक किलोग्राम नील–हरित शैवाल प्रति वर्ग मीटर क्षेत्रफल से प्राप्त किया जा सकता है। एक बार शैवाल को निकालने के बाद पुनः गड्ढे में सुपरफॉस्फेट एवं मदर कल्चर का छिड़काव करें और ऊपर दी गई विधि की पुनरावृत्ति करें।

सावधानी

शैवाल पैदा करने वाले गड्ढों में मच्छरों आदि को न रहने दें। यदि जरूरी हो तो मैलाथियान का छिड़काव करें। नील–हरित शैवाल का रासायनिक उर्वरकों एवं रासायनिक दवाओं के साथ भंडारण न करें।

नील–हरित शैवाल के प्रयोग की विधि

1. नील–हरित शैवाल का 10 किग्रा./हे. की दर से रोपाई के 5–7 दिन बाद खेत में छिड़काव करें तथा लगभग 7 दिन तक खेत में शैवाल के छिड़काव के बाद पानी भर कर रखें।
2. यदि नाइट्रोजन उर्वरक का प्रयोग करना हो तो 2/3 भाग रासायनिक उर्वरक का प्रयोग करें एवं शेष नील–हरित शैवाल का प्रयोग करके पूर्ति करें।
3. कीटनाशक दवाओं का प्रयोग एवं अन्य दवाओं का प्रयोग पूर्व की भांति करें। इसका शैवाल पर कोई हानिकारक प्रभाव नहीं पड़ता है।

नील हरित शैवाल के प्रयोग से आर्थिक लाभ

शैवाल को खेत में प्रयोग करने से इसकी लागत लगभग न के बराबर आती है। 10 किग्रा. शैवाल की कीमत 30 रू. आती है और एक हेक्टेयर में 25–30 किग्रा. नाइट्रोजन उपलब्ध कराता हैं। साथ ही पैदावार में लगभग 300 किग्रा./हे. की वृद्धि होती है। सबसे मुख्य बात यह है कि यह प्रदूषण मुक्त है।

एजोला

एजोला की कृषि में उपयोगिता संबंधी जानकारी सर्वप्रथम वियतनाम और थाइलैंड से प्राप्त हुई। एजोला एक जलीय फर्न है। यह एनाबीना नामक नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाले नीलहरित शैवाल की पृष्ठीय पत्तियों की गुहिकाओं में सहजीवी अणुजीव के रूप में पाया जाता है। नील–हरित शैवाल एवं एजोला के पारस्परिक सहजीवन के फलस्वरूप वायुमंडलय नाइट्रोजन का यौगिकीकरण होता हे। केंद्रीय धान अनुसंधान संस्थान, कटक में क्षेत्र परीक्षणों से पता चला है कि पूरे वर्ष भर एजोला की खेती की जा सकती है। एजोला में निम्नलिखित विशेषताएं पाई जाती हैं:

1. इसमें सौर ऊर्जा उपयोग करने की क्षमता पाई जाती है।
2. संयुक्त नाइट्रोजन की उपस्थिति में यह नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करने में सक्षम होता है।
3. सघन पर्णघनत्व के कारण इनसे प्रति वर्ष प्रति हेक्टयर क्षेत्रफल से 37 टन जैव पदार्थ प्राप्त हो जाता है।

धान की रोपाई के बाद थोड़ी सी मात्रा में फर्न का निवेशन करने से प्रतिदिन 1–2 किग्रा./हे. की दर से नाइट्रोजन का यौगिकीकरण होता है। इसका गुणन बहुत ही जल्दी होता है। खेत में एजोला का 0.1 से 0.4 किग्रा./वर्ग मीटर की दर से निवेशन करने पर इसका विकास इतनी तेजी से होता है कि 8 से 20 दिन के अंदर एक हैक्टेयर से 8–15 टन हरा पदार्थ प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार साल भर में 347 टन हरा पदार्थ प्राप्त होता है, जिसमें 868.5 किग्रा. नाइट्रोजन होता है। उल्लेखनीय है कि हरे पदार्थ में 0.2 से 0.3 प्रतिशत नाइट्रोजन तथा शुष्क पदार्थ में 4–5 प्रतिशत नाइट्रोजन पाया जाता है। एजोला के हरे पदार्थ में 94 प्रतिशत जल होता है।

मिट्टी में एजोला के हरे पदार्थ के विघटन के फलस्वरूप अधिकांश नाइट्रोजन धान की फसल को उपलब्ध हो जाती है। जलाक्रांत दशा में धान के

खेत में नाइट्रोजन की लगभग आधी मात्रा का खनिजीकरण तीन सप्ताह के अंदर हो जाता है और 6–8 सप्ताह के अंदर दो–तिहाई नाइट्रोजन का खनिजीकरण हो जाता है। अतः जलाक्रांत दशा में एजोला द्वारा धान की फसल में नाइट्रोजन की पूर्ति का महत्व स्वतः ही स्पष्ट हो जाता है। अंतर्राष्ट्रीय धान अनुसंधान संस्थान, फिलीपीन में किए गए प्रयोगों से पता चला है कि छह सप्ताह के उद्भवन के बाद एजोला द्वारा मुक्त किए गए कुल नाइट्रोजन का 62–75 प्रतिशत अमोनिया रूप में पाया जाता है।

एजोला के पौधों में नाइट्रोजन के अलावा शुष्क पदार्थ में 0.5 से 0.9 प्रतिशत फॉस्फोरस, 2 से 5 प्रतिशत पोटेशियम, 0.4 से 1.0 प्रतिशत कैल्शियम, 0.5 से 0.65 प्रतिशत मैग्नीशियम, 0.1 से 0.16 प्रतिशत मैंगनीज और 0.06 से 0.26 प्रतिशत लोहा पाया जाता है। अतः स्पष्ट है कि एजोला से नाइट्रोजन के साथ ही अन्य आवश्यक पोषक तत्वों की पूर्ति होती है।

एजोला का खेत में उपयोग

एजोला के समुचित विकास के लिए खेत में 5–10 सेमी. ऊंचा पानी भरना तथा 4–8 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से फॉस्फेट का प्रयोग करना अति आवश्यक होता है। यदि पानी की समुचित व्यवस्था हो तो एजोला की बुआई (500–1000 किग्रा. ताजा एजोला प्रति टन) धान की रोपाई के एक महीने पहले कर देनी चाहिए। ज्ञातव्य है कि 2000 किग्रा./हे. की दर से एजोला की बुआई करने पर अपेक्षाकृत कम समय में ही हरे पदार्थ की आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है। कभी–कभी कीड़े भी नुकसान पहुंचाते हैं। ऐसी दशा में निवेशन करते समय ही 3–15 ग्राम की दर से कार्बोयुरान मिला दिया जाता है। लगभग 10–20 दिन के उद्भवन के पश्चात संपूर्ण क्षेत्र एजोला से भर जाता है, जिसे पलटकर मिट्टी में मिलाने के बाद धान के पौधे की रोपाई की जाती है।

जब समुचित मात्रा में पानी उपलब्ध न हो तो ताजे एजोला का निवेशन 200–1000 किग्रा./हे. की दर से सुपरफॉस्फेट व कीटनाशक रसायन के साथ धान की पौध की रोपाई होने के एक सप्ताह बाद किया जाता है। निवेशन के 20–40 दिन बाद सारा खेत एजोला की वृद्धि के फलस्वरूप ढक जाता हे। यदि संभव हो सके तो खेत का पानी बाहर निकाल देना चाहिए। ऐसे जलाक्रांत दशा में भी मिट्टी में मिलाया जा सकता है, परंतु हरे पदार्थ के विघटन में अपेक्षाकृत समय अधिक लग जाता है जो फसल के हित में नहीं होता।

एजोला का धान की उपज पर प्रभाव

इन दोनों ही विधियों से एजोला का इस्तेमाल करने पर धान की उपज में प्रति हेक्टेयर औसतन 0.5 से 2 टन की वृद्धि होती है। क्षेत्र परीक्षणों से पता चला है कि 10 टन/हे. की दर से धान के खेत में एजोला मिलाने से नियंत्रित प्रयोग की तुलना में धान के दाने व पुआल की उपज में 25 से 47 प्रतिशत वृद्धि हुई।

मृदा में जैव–कल्चर प्रयोग करना

मृदा में प्रायः कल्चर का प्रयोग किया जाता है। इसकी प्रयोग की विधि नीचे दी गई हैः

1. एक किलोग्राम पानी में 150 ग्राम गुड़ घोलकर उसे गर्म करके गुड़ का घोल तैयार कर लीजिए। इसे ठंडा कीजिए।
2. गुड़ के घोल में 200 ग्राम कल्चर डाल दीजिए और उसे अच्छी तरह मिला दीजिए।
3. गुड़ के घोल व कल्चर मिले मिश्रण में एक हेक्टेयर खेत बोए जाने वाले बीज को अच्छी तरह मिलाइए तथा इसको 15 मिनट तक रहने दीजिए।
4. तदुपरांत बीज को छाया में सुखाकर खेत में बो दीजिए।

अन्य जैव–कल्चरों को बीज उपचार के द्वारा अथवा मृदा में सीधे मिलाया जा सकता है।

जैव–उर्वरकों के प्रयोग में सावधानियाँ

1. कल्चर सदैव ठंडे स्थान पर रखना चाहिए।
2. उपयोग में लाए जाने वाला कल्चर ताजा होना चाहिए, अतः उपयोग में लाने से पहले उपयोग की अंतिम तारीख देख लेनी चाहिए।
3. किसी फसल विशेष के लिए निर्देशित कल्चर का ही उचित मात्रा में प्रयोग करना चाहिए।
4. बुवाई से बचे बीजों को खाने के उपयोग में नहीं लाना चाहिए।
5. बीज को छाया में उपचारित करना चाहिए तथा सूर्य की तेज धूप एवं गर्म हवा से बचाना चाहिए।
6. कल्चर की लुगदी बनाते समय ज्यादा पानी उपयोग में नहीं लाना चाहिए। लुगदी ऐसी होनी चाहिए जिससे बीज पर कल्चर की एक समान परत चढ़ जाए।
7. उपचारित बीज को उर्वरकों एवं कीटनाशी रसायनों के सम्पर्क से बचाना चाहिए।
8. जीवनाशी रसायनों का उपचार कल्चर उपचार से पूर्व कर लेना चाहिए।
9. बचे हुए कल्चर को 40 डि.से. तापमान पर ठंडे स्थाना पर अच्छी तरह बंद करके भंडारण करना चाहिए।

जैव–उर्वरकों का उपयोग नर्सरी की जड़ डुबोकर तथा मिट्टी में सीधे मिलाकर भी किया जाता है।

पूर्व सम्पादक, 'विज्ञान' मासिक पत्रिका
35/3, जवाहर लाल नेहरू रोड,
जार्जटाउन, इलाहाबाद 211002

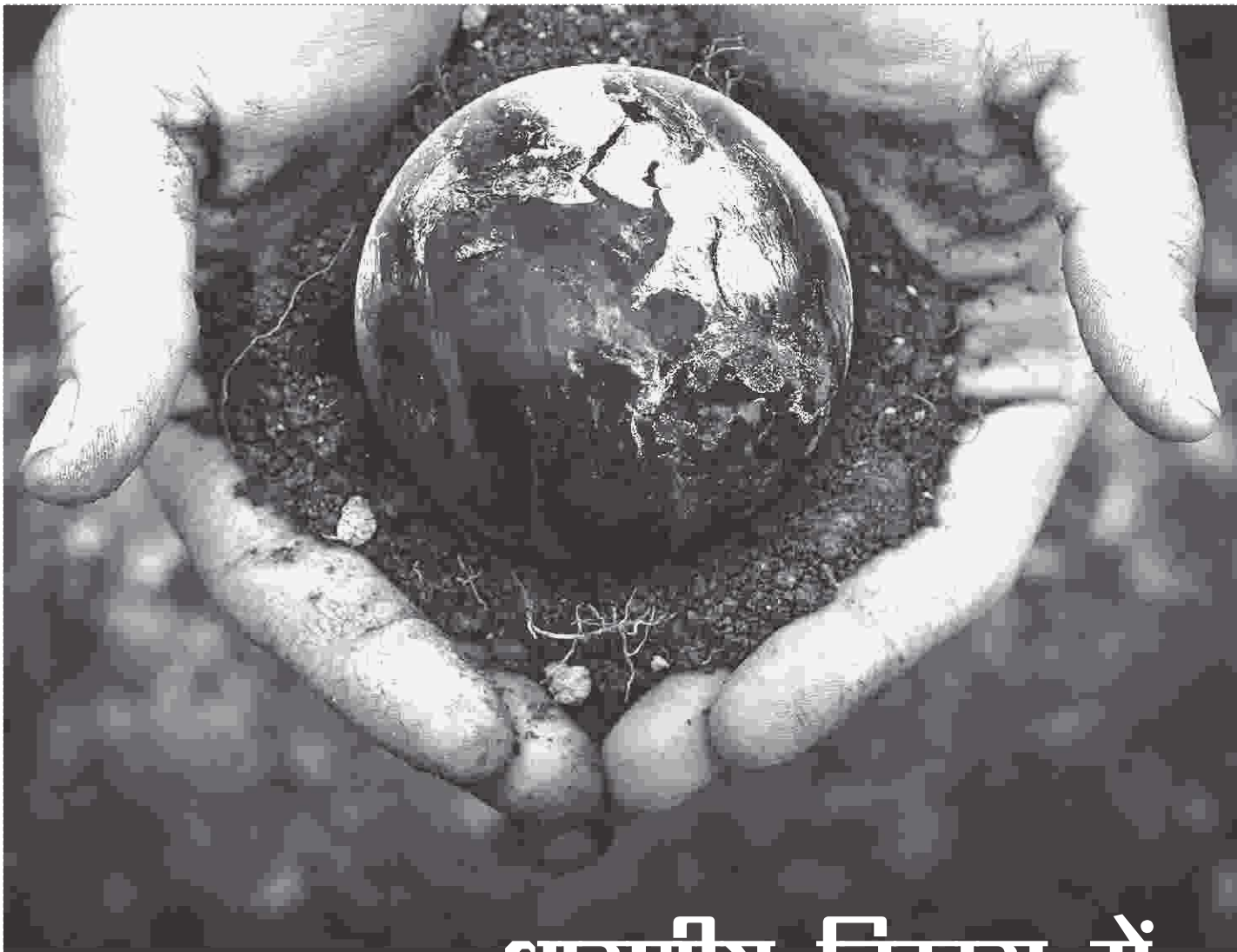

धारणीय विकास में उच्च शिक्षा एवं शोध की भूमिका

भवतोष शर्मा

सस्टेनेबल डेवलपमेन्ट अर्थात धारणीय विकास सामान्यतः मानव का ही एक विषय है जिससे जुड़े हुए बिन्दुओं को किसी भी समाज के आधार के रूप में देखा जा सकता है। इसका मुख्य ध्येय पर्यावरण के लिये ही है परन्तु इसकी उपयोगिता मनुष्य के प्रत्येक प्रयास को भी समाहित करने तक बढ़ चुकी है। धारणीय विकास के लिये शिक्षा में विचार-विमर्श ही प्रधान तत्व है, साथ ही साथ इस प्रकार के विकास के अध्ययन के लिये पर्यावरणीय शिक्षा ही आधार शिक्षा मानी जा सकती है। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते है कि पर्यावरणीय शिक्षा धारणीय विकास की शिक्षा के लिये मार्ग प्रशस्त कर सकती है। कोई भी अनुसंधानवेत्ता जो कि धारणीय विकास की शिक्षा के व्यापक प्रचार व प्रसार के लिये

काम कर रहा है वह भी इस प्रकार के विकास की मूल्य आधारित व्याख्या का समर्थन करता है। पिछले दशक में धारणीय विकास की शिक्षा को जो कि किसी भी देश या राज्य की सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता होती है, एक मुख्य नीति, के रूप में स्वीकार किया गया है। इस दिशा में न केवल अनुसंधानवेत्ताओं या पर्यावरणविदों के द्वारा बल्कि बहुत से राष्ट्राध्यक्षों द्वारा भी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सभी का ध्यान आकर्षित करने हेतु पहल की गई है।

प्रारंभ में भूमण्डलीय स्तर पर धारणीय विकास के विषय पर 1972 में स्टाकहोम में संयुक्तराष्ट्र के एक सम्मेलन में चर्चा की गई थी। जिसके पश्चात 1987 में संयुक्तराष्ट्र द्वारा पर्यावरण एवं विकास के लिये गठित "वैश्विक आयोग" द्वारा "हमारा सामान्य भविष्य" विषय पर एक रिपोर्ट प्रकाशित की गई जो कि 'बर्नलेन्ड रिपोर्ट' के रूप में लोकप्रिय हुई और तब लोगों का ध्यान धारणीय विकास की ओर गया। सन् 1992 में ब्राजील के रियो डी जेनिरियो में "संयुक्तराष्ट्र पृथ्वी सम्मेलन" में पर्यावरणीय समस्याओं एवं उनके समाधान हेतु एक गम्भीर विचार उभर कर आया और एक बहुविषयक सोच की आवश्यकता महसूस की गई। इस सम्मेलन के बाद शिक्षा की भूमिका को पारिस्थितिक विघटन को रोकने के रूप में स्वीकार किया गया। पुनः सन् 2000 में संयुक्तराष्ट्र के तत्वावधान में विभिन्न देशों के राष्ट्राध्यक्ष पर्यावरण संरक्षण के मुद्दे पर चर्चा के लिये एकत्रित हुये। सन् 2002 में जोहान्सबर्ग में धारणीय विकास पर आयोजित की गई कान्फ्रेन्स के पश्चात संयुक्तराष्ट्र की आमसभा के द्वारा सन् 2005–2014 को "धारणीय विकास की शिक्षा का दशक" घोषित किया गया और यह माना गया कि धारणीय विकास के लिये प्राकृतिक संसाधनों को इस प्रकार प्रयोग किया जाना चाहिए ताकि वे आने वाली पीढ़ियों के लिये संरक्षित रह सकें।

धारणीय विकास का विचार शिक्षण संस्थाओं और सामाजिक संरचना के विभिन्न पहलुओं को स्पर्श करता है। रियो पृथ्वी सम्मेलन के पश्चात धारणीय विकास में शिक्षा की प्रभावी भूमिका निश्चित रूप से बढ़ी है। उच्चशिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान कार्यक्रम धारणीयता को सुनिश्चित करते हुये प्रभावी होने चाहिए। साथ ही साथ उच्च शिक्षा का उद्देश्य बड़ी–बड़ी समस्याओं जैसे कि जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, ऊर्जा, जैवविविधता, पर्यावरण संरक्षण आदि के उचित समाधान के लिये नये–नये प्रतिरूप प्रस्तुत करना भी होना चाहिए। इसके अतिरिक्त उच्च शिक्षण संस्थाओं का उत्तरदायित्व प्रत्येक व्यक्ति के लिये धारणीयता को परिभाषित करने हेतु नई–नई विधियां विकसित करना होना चाहिए। धारणीयता विभिन्न विषयों को एकीकृत रूप से साथ लाने का एक श्रेष्ठ विषय भी है। धारणीय विकास हेतु विभिन्न शिक्षण संस्थाओं में उच्च शिक्षा की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है और इसे विभिन्न उद्देश्यों जैसे– उच्च शिक्षण संस्थाओं में सर्वश्रेष्ठ घटनाओं के अध्ययन की पहचान एवं अनुसरण; धारणीय विकास पर शोध एवं अध्यापन हेतु एक सही दृष्टिकोण बनाना; नीति निर्माताओं एवं विद्यार्थियों को वर्तमान में हो रहे विकास के घातक पहलुओं के बारे में शिक्षित करना एवं उच्च शिक्षा के द्वारा धारणीय विकास के वैकल्पिक मार्गों के ज्ञान का प्रसार करना; पर केन्द्रित किया जाना चाहिए।

संयुक्तराष्ट्र के अनुसार, धारणीय विकास के लिये शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक व पारिस्थितिक पहलुओं को भूमण्डलीय परिधि को दृष्टिगत रखते हुये लेकर चलना है। हालांकि उच्चशिक्षा के पाठ्यक्रम में धारणीय विकास के विभिन्न पहलुओं को मूल्य–आधारित व्याख्या के आलोक में एकीकृत करना कठिन है लेकिन इसे संबंधित कुशल प्रयासों एवं धारणीय विकास के पारिस्थितिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक तत्वों को उच्च शिक्षा के शोध एवं अध्यापन में सम्मिलित करके सरल बनाया जा सकता है।

राज्य एवं राष्ट्रीय स्तर के उच्च शिक्षण संस्थानों के लिये धारणीय विकास एक प्राथमिकता का विषय है। अतः उच्च शिक्षण संस्थाओं में इस हेतु कुछ नीतियां जैसे प्रतिभागियों से धारणीय विकास के संबंधित प्रश्नावलियों का विश्लेषण, राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय समन्वयन, नीतियों का प्रसार, अध्यापन विशेषज्ञों एवं विद्यार्थियों में दक्षता का निर्माण, कुशल नेतृत्व की पहचान एवं अच्छे विशेषज्ञों को पुरस्कृत करना आदि, को अपनाया जा सकता है। एक सामान्य विचार के अन्तर्गत धारणीय विकास की चुनौती को शोध के विकास एवं अध्यापन के एक आवश्यक अंग के अवसर के रूप में लिया जा सकता है। धारणीय विकास की शिक्षा विद्यार्थियों एवं शोधार्थियों को अधिकार सम्पन्न बनाने के साथ–साथ उनके मन को एक सही दिशा, भविष्य की धारणीयता के प्रति जागरूक एवं धारणीय विकास का आधार बनाती है।

भारत के कुछ मंत्रालयों यथा वन एवं पर्यावरण मंत्रालय, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय आदि के अतिरिक्त विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद, आदि संगठन देश में धारणीय विकास की सोच के साथ अपने विभिन्न कार्यक्रमों एवं शोध परियोजनाओं को देश के विभिन्न शिक्षण संस्थाओं, कॉलेजों, विश्वविद्यालयों में निरंतर आर्थिक सहायता देकर संचालित कर रहे हैं। यद्यपि देश के विश्वविद्यालय एवं कॉलेज धारणीय विकास की शिक्षा के व्यापक प्रसार में समर्थ हैं लेकिन बहुत से गैर सरकारी संगठन भी उद्देश्य की पूर्ति में सहायक सिद्ध हो सकते है। इसके अतिरिक्त देश में दूरस्थ शिक्षा पद्धति के द्वारा पर्यावरणीय धारणीय विकास पर शोध एवं शिक्षा को एक विकल्प के रूप में लिया जा सकता है।

वैज्ञानिक, उत्तराखण्ड विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान केन्द्र (यूसर्क), देहरादून

कैल्शियम लें पर सावधानी के साथ

मंजुलिका लक्ष्मी

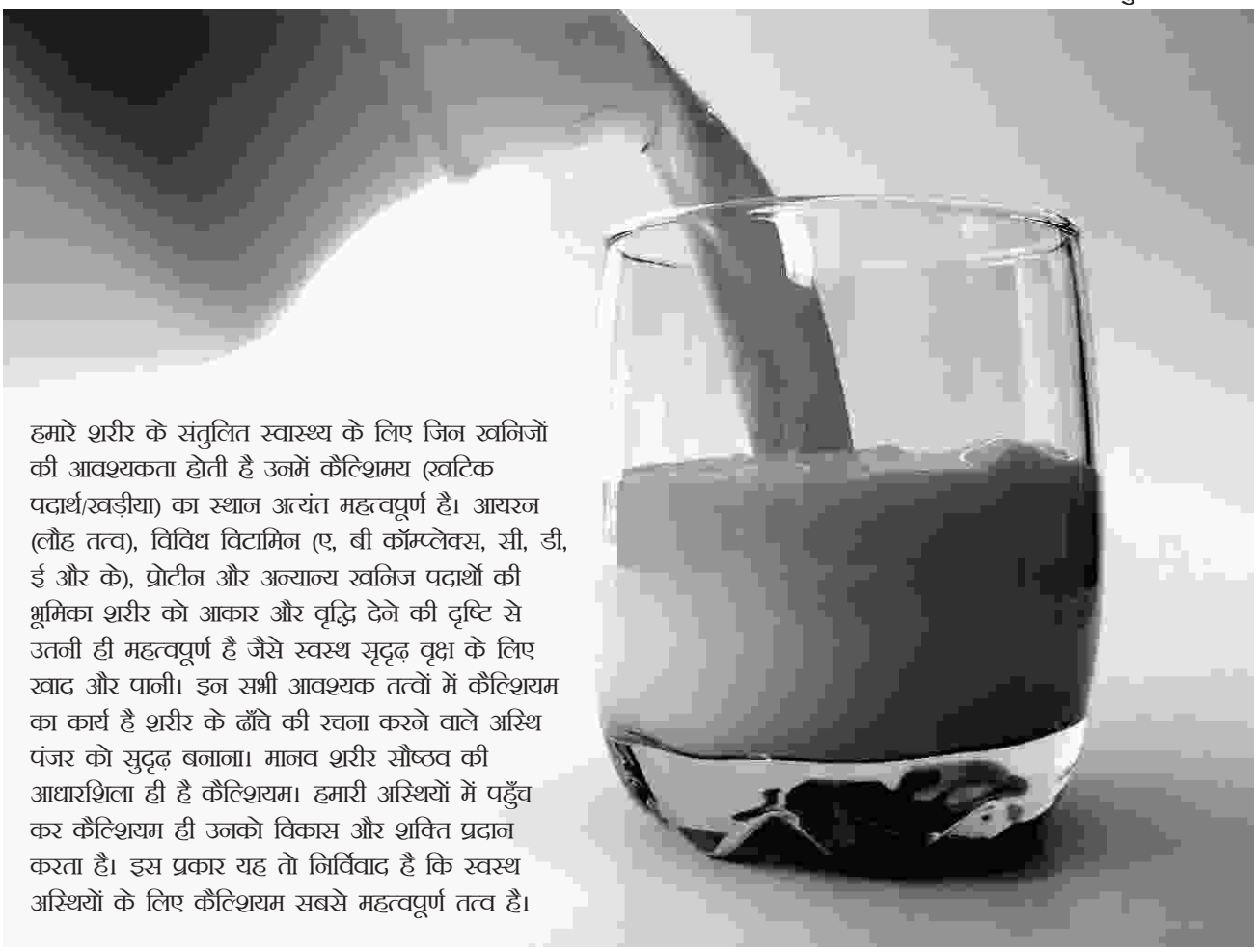

हमारे शरीर के संतुलित स्वास्थ्य के लिए जिन खनिजों की आवश्यकता होती है उनमें कैल्शिमय (खटिक पदार्थ/खड़ीया) का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। आयरन (लौह तत्व), विविध विटामिन (ए, बी कॉम्प्लेक्स, सी, डी, ई और के), प्रोटीन और अन्यान्य खनिज पदार्थों की भूमिका शरीर को आकार और वृद्धि देने की दृष्टि से उतनी ही महत्वपूर्ण है जैसे स्वस्थ सुदृढ़ वृक्ष के लिए खाद और पानी। इन सभी आवश्यक तत्वों में कैल्शियम का कार्य है शरीर के ढाँचे की रचना करने वाले अस्थि पंजर को सुदृढ़ बनाना। मानव शरीर सौष्ठव की आधारशिला ही है कैल्शियम। हमारी अस्थियों में पहुँच कर कैल्शियम ही उनको विकास और शक्ति प्रदान करता है। इस प्रकार यह तो निर्विवाद है कि स्वस्थ अस्थियों के लिए कैल्शियम सबसे महत्वपूर्ण तत्व है।

कैल्शिमय की सर्वाधिक आवश्यकता शरीर को उसके वृद्धिकाल में होती है। बचपन और किशोरावस्था में बढते हुए शरीर को प्रतिदिन कैल्शियम की पर्याप्त मात्रा मिलने से अस्थियों के आकार और घनत्व का उचित विकास और पोषण होता है। अस्थियों का विकास और क्षय एक क्रमिक प्रक्रिया है अतः शरीर को निरंतर उसके पोषण के लिए उचित मात्रा में कैल्शियम की आवश्यकता पड़ती रहती है। यही कारण है कि बाल्यावस्था में पर्याप्त कैल्शियम लेने के प्रश्न पर चिकित्सक बहुत बल देते हैं। यदि बाल्यावस्था और युवावस्था में मानव शरीर की अस्थियों रूपी नींव सुदृढ़ होती है तो वृद्धावस्था में उसका क्षय भी धीमी गति से होता है। प्रारंभिक वर्षो में कैल्शियम के प्रति उदासीन रहने के दुष्परिणाम सदैव वृद्धावस्था में भुगतने पड़ते हैं।

मानव शरीर में अन्य खनिज लवणों के अनुपात में कैल्शियम की मात्रा अधिक होती है। कैल्शियम का लगभग 99 प्रतिशत अस्थियों और दाँतों में विद्यमान होता है। बाकी 1 प्रतिशत अन्यत्र कुछ कोमल अंगों और अन्य द्रवों में पाया जाता है।

अस्थियों के लिए कैल्शियम के इतने अपरिहार्य होने के बावजूद हड्डियों और रक्त में कैल्शियम का अवशोषण एक जटिल प्रक्रिया है। इसका अवशोषण मानव शरीर की छोटी आँत में होता है। पैराथायरायड ग्रंथि से स्रावित होने वाला पैराथार्मोन नामक एक हारमोन कैल्शियम उपापचय पर नियंत्रण रखने का उत्तरदायी बताया जाता हैं। इसी के द्वारा अस्थि और रक्त में कैल्शियम की मात्रा को समुचित स्तर पर रखने का कार्य भी संपन्न होता है। प्रोटीन, लैक्टोज, शर्करा तथा कैल्शियम और फॉस्फोरस का 1:1 एवं सबसे अधिक

विटामिन 'डी' कैल्शियम अवशोषण में सहयोग देते हैं और अस्थियों में कैल्शियम संचय के कारक होते हैं।

कैल्शियम के अवशोषण में परम आवश्यक इस विटामिन 'डी' को हम अपने नित्यप्रति के आहार से ही सरलता से प्राप्त कर सकते है। भोजन की वस्तुओं के अतिरिक्त प्रातःकाल की हल्की धूप में जब हमारी त्वचा सूर्य किरणों के संपर्क में आती है तो हमारे शरीर में स्वतः विटामिन डी का संश्लेषण होता है। सुबह की हल्की धूप की संस्तुति इस दृष्टि से की जाती है कि सूर्य की मध्यान्हकालीन तेज किरणों से त्वचा के जलने (सनबर्न), शरीर के द्रवों की हानि और सूर्य की पराबैंगनी किरणों द्वारा होने वाली क्षति से बचा जा सके। विटामिन 'डी' और कैल्शियम मिलकर अस्थि अपक्षय को रोकते हैं। विटामिन 'डी' की ही उपस्थिति से कैल्शियम का हमारी आँतों द्वारा अवशोषण संभव होता है – यह तो पहले ही कहा जा चुका है। जन्म के समय बच्चे के शरीर भार को आदर्श स्तर पर रखने में भी माँ के गर्भकाल में कैल्शियम और विटामिन 'डी' की महत्वपूर्ण भूमिका है। कैल्शियम का संचय अस्थियों में होता है। रक्त में कैल्शियम की आवश्यकता से कम मात्रा को हाइपोकैल्शीमिया कहते हैं। इस स्थिति में हाथ–पैरों की उँगलियों में झनझनाहट, मांसपेशियों में बार–बार अकड़न, दौरे पड़ना, आलस्य, भूख न लगना, मतिविभ्रम, हृदय की असामान्य गति तथा मृत्यु तक की संभावना हो जाती है।

हमारे प्रतिदिन के आहार में कुछ सामान्य खाद्य पदार्थो को सम्मिलित करके बड़ी सरलता से कैल्शियम आवश्यकता की पूर्ति की जा सकती है। दूध और दुग्ध निर्मित उत्पाद कैल्शियम प्राप्ति का सबसे व्यापक और सर्वश्रेष्ठ साधान हैं। दूध के अतिरिक्त सूखे मेवे, अण्डे की जर्दी, तिल, हरी पत्तीदार सब्जियाँ, तरह–तरह की फलियाँ, सोयाबीन, फूलगोभी, मेथी, धनिया, पुदीना, अंजीर, शहतूत, नींबू, सूखा नारियल, काबुली चना (छिलके सहित) रोहू मछली, मांस और पान के पत्ते के साथ खाया जाने वाला चूना आदि कैल्शियम प्राप्ति के अच्छे साधन हैं। इनके अतिरिक्त लगभग सभी के भोजन का अनिवार्य अंग गेहूँ की रोटी या ब्रेड भी कैल्शियम प्रदान करने में किसी से पीछे नहीं है।

इतना तो स्पष्ट है कि इतना महत्वपूर्ण तत्व होने के कारण कैल्शियम के अभाव से शरीर को भारी क्षति होती है। बाल्यावस्था और किशोरावस्था में इसके प्रति दिखाई गई उदासीनता वृद्धावस्था में अवश्य ही आपको ऑस्टियोपोरोसिस ऑस्टियोमलेशिया, ऑर्थ्राइटिस जैसे कष्टकारी रोगों के चंगुल में फँसा देती है। इसके अभाव से बच्चों में सूखा रोग, अस्थियों का टेढ़ापन और दाँतों की सड़न जैसी व्याधियाँ भी जड़ें जमा लेती हैं। बच्चों में बारंबार अस्थिभंग (फैक्चर) होना, कद का छोटा होना, सुस्ती और आलस्य, निर्बलता का अनुभव, बिना श्रम किए थकान और सुस्ती, पूर्ण शरीरिक विकास में कमी, हाथ पैरों में दर्द और अकड़न आदि सभी लक्षण शरीर में कैल्शियम की आवश्यक मात्रा की कमी के सूचक हैं।

कैल्शियम की प्रतिदिन की आवश्यक मात्रा नवजात से 12 मास तक के शिशुओं में 500 मि.ग्रा., 1 से 9 वर्ष तक के बालकों में 500 से 550 मि.ग्रा., 10 से 18 वर्ष के बालकों और किशोरों में 550 से 700 मि.ग्रा., तथा पूर्ण वयस्कों में 1000 मि.ग्रा. प्रतिदिन मानी गई है। गर्भवती और स्तनपान कराने वाली महिलाओं में इसकी आवश्यकता सामान्य से अधिक होती है क्योंकि उन्हे एक साथ दो मानव शरीरों के लिए समुचित पोषण चाहिए। इसी कारण उनकी प्रतिदिन कैल्शियम की आवश्यकता 1000 मि.ग्रा. से लेकर 1.15 ग्राम तक हो सकती है।

अस्थियों के पोषण, सामान्य स्वास्थ्य और स्फूर्ति तथा शरीर की सुदृढ़ता के अतिरिक्त कैल्शियम हृदय की गति नियंत्रित करने तथा मांसपेशियों की सक्रियता बनाये रखने का भी कार्य करता है। इसके अतिरिक्त यह स्नायुओं को स्वस्थ रखने तथा नाड़ी तंत्र द्वारा संदेश भेजने के कार्य में भी प्रभावी भूमिका निभाता है। इसकी भूमिका विविध एंजाइमों और हारमोनों के स्रवण में भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। कैल्शियम का एक सामान्य आवश्यक स्तर सदैव शरीर के ऊतकों और स्रावों में सुरक्षित रहता है जिससे शरीर के महत्वपूर्ण अंगों की कार्यप्रणाली सुचारु रूप से चलती रहे। अस्थियाँ शरीर के ऐसे जीवित ऊतक हैं जिनमें निरंतर परिवर्तन होते रहते हैं। इस प्रक्रिया में अस्थियों में कैल्शियम अवशोषण और निक्षेपण के मध्य एक संतुलन बना रहना आवश्यक है। यह संतुलन बढ़ती आयु के साथ बिगड़ने लगता है, अतः उस समय विशेष रूप से कैल्शियम अंतर्ग्रहण के प्रति सचेत रहने की आवश्यकता है।

कैल्शियम के विषय में अब तक यही ज्ञात था की इसकी भूमिका हृदय की गति को सामान्य रखने में महत्वपूर्ण है। आज नवीनतम अध्ययनों के फलस्वरूप ऐसे समाचार आ रहे हैं कि कैल्शियम कहीं न कहीं हृदयाघात की आशंकाओं को बढ़ाने का भी उत्तरदायी है। इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि कैल्शियम को लेना ही रोक दिया जाये, किन्तु उसे लेने के विषय में सतर्क रहना अत्यावश्यक है।

इसका समाधन यही हो सकता है कि शरीर की विटामिन और कैल्शियम स्थिति का पूर्ण चिकित्सकीय परीक्षण (अस्थियों का घनत्व और रक्त परीक्षण) कराने के उपरान्त और चिकित्सक के परामर्श पर ही कैल्शियम लेना प्रारंभ करना चाहिए। विशेषकर भारतीय पृष्ठभूमि में तो यह सतर्कता और अनिवार्य है क्योंकि यहाँ बिना किसी चिकित्सक से पूछे कोई भी दवा खा लेने की प्रवृत्ति बहुत व्याप्त है।

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के राष्ट्रीय स्वास्थ्य संस्थानों के अन्तर्गत चार लाख से अधिक (50 से 70 वर्ष के मध्य आयु वाले) वयस्कों के मध्य किए गये एक अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला गया कि प्रतिदिन 1000 मि.ग्रा. से अधिक कैल्शियम लेने वालों में हृदय संबंधी रोगों से पीड़ित होने की घटनायें कैल्शियम न लेने वालों की अपेक्षा 20 प्रतिशत अधिक पाई गईं। इस अध्ययन को पिछले दिनों अमेरिकन मेडिकल जर्नल में प्रकाशित भी किया गया। उसमें स्पष्ट शब्दों में यह कहा गया कि शिराओं और धमनियों में कैल्शियम निक्षेपण के कारण हृद्संवहनियों (कार्डियोवैस्कुलर) संबंधी समस्यायें बढ़ सकती हैं। इससे पूर्व 2010 में न्यूजीलैंड में भी इस प्रकार का एक अध्ययन किया गया था। उसका निष्कर्ष भी यही था कि कैल्शियम का असंतुलित अंतर्ग्रहण (विटामिन 'डी' सहित या विटामिन 'डी' रहित) हृदसंवहनियों की

समस्याएँ और हृदयाघात दोनों की संभावनाओं में वृद्धि करता है।

वस्तुतः इस ज्ञान ने, कि बढ़ते शरीर में कैल्शियम की बहुत आवश्यकता होती है जनमानस में कैल्शियम के प्रचार को बहुत तीव्रता दी। चूँकि कैल्शियम के यह विज्ञापन अधिकांशतः बच्चों और किशोरों को लक्ष्य बनाते थे अतः इसके द्वारा विज्ञापनकर्ताओं ने अभिभावकों के सबसे कोमल पक्ष को छुआ। फलस्वरूप कैल्शियम के महत्व को बढ़ चढ़ कर बताने और कैल्शियम उत्पादों से बाजार को भरने की होड़ लग गई। उचित तो यही होगा कि इस 1000 मि.ग्रा. की प्रतिदिन की आवश्यकता का अधिकांश भोजन से पूर्ण किया जाये और बची हुई आंशिक पूर्ति के लिए गोलियों की सहायता जी जाये।

जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है कैल्शियम अवशोषण के लिए विटामिन 'डी' ही उसका वाहक बनता है और उसे शरीर के विभिन्न अवयवों तक पहुँचाता है। अतः विटामिन 'डी' और कैल्शियम के मध्य एक समुचित अनुपात की अनुपस्थिति में कैल्शियम अवशोषण प्रभावित होता है और प्रतिदिन का कैल्शियम अंतर्ग्रहण भी एक समस्या बन सकता है। कारण यह है कि अतिरिक्त कैल्शियम हृदय की धमनियों में जमा होकर हृदय रोगों को निमन्त्रण दे सकता है। यद्यपि अभी तक अमेरिकी शोध पूर्णतया सिद्ध नहीं हो सके हैं तथापि अधिकांश हृदय चिकित्सक अब इसी पक्ष में विचार करने लगे हैं। ब्रिटिश मेडिकल जर्नल (2010–2011) में प्रकाशित यह कथन इस तथ्य को विशेष रूप से रेखांकित करता है कि "विटामिन 'डी' से रहित कैल्शियम के पूरक धमनियों में जम सकते हैं।" अतः सामान्य रूप से कैल्शियम लेते समय इस पक्ष के प्रति विशेष सतर्कता रखना आवश्यक है।

अनुकम्पा,
वाई 2 सी, 115/6 त्रिवेणीपुरम्
झूंसी, अलाहाबाद – 211019

परितंत्र की कहानी–11

हिंसा को उकसाता

हाथी ने हिरण और उसके शावक को अगली कहानी सुनाते हुए कहा, "हाँ बेटा, अब मै तुम्हें सुनाने जा रहा हूँ कि मानव किस तरह अपनी आपत्तिजनक गतिविधियों से हमारे सीधे व भोले-भाले साथियों को हिंसा करने के लिए उकसाता है।" हिरण ने भी जिज्ञासा व्यक्त की "हाँ दादा, सुनाइये, मेरी भी ऐसी कहानियाँ सुनने की बड़ी इच्छा है क्योंकि ऐसी घटनायें अक्सर सुनने को मिलती रहती हैं, जिनके लिए मानव हाथियों को दोषी ठहराते हैं।"

हाथी ने समझाया, " यह तो तुम जानते ही हो कि हाथी भी तुम्हारी तरह ही शाकाहारी व शांतिप्रिय पशु है। स्पष्ट है कि हम स्वभाव से हिंसक नहीं हैं अतः जब भी हमारे भाई कोई हिंसक गतिविधियाँ करते हैं तो निश्चित रूप से उनकी कोई विवशता होती है।"

हाथी ने कुछ सोचते हुए आगे बताया, "इसी तरह की एक घटना अक्टूबर 2006 में असम में घटित हुई थी जब हाथियों पर चार लोगों की हत्या करने का आरोप लगा था।"

शावक ने उत्सुकता से पूछा "ऐसा क्या हुआ था? दादा, जरा स्पष्ट ढंग से समझाइये।"

हाथी ने स्पष्ट किया, "हुआ क्या था, अरे भाई एक तो मानव ने हमारे आवासीय क्षेत्रों को इतना संकुचित कर रखा है कि हम आराम से उसमें अपनी दिनचर्या भी पूरी नहीं कर सकते, ऊपर से वहाँ अपनी आवाजाही भी जारी रखता है। वहाँ अपने स्थायी–अस्थायी निवास बनाने की कोशिशें करता है, वहाँ से चारा व लकड़ियाँ काटता रहता है – वन्य

दिनेश चन्द्र शर्मा

मानव

उत्पादों को नोचता–खसोटता रहता है। आखिर कब तक सहन करें ये सब....! हमें कब तक गुस्सा नहीं आयेगा?"

हिरण ने प्रश्न किया, "दादा! क्या असम में भी ऐसा ही कुछ हुआ था?"

हाथी ने बतलाया, "हाँ यही तो हुआ हिरण भइया, वहाँ लगभग एक दर्जन हाथियों के झुण्ड ने आरक्षित वन में लकड़ी कटान का विरोध किया और वहाँ आये हुये लकड़हारों को खदेड़ा। इसी अफरातफरी में दो लकड़हारे कुचल गये। ऐसी ही एक अन्य घटना में भी दो लोगों की मौत हुई। इन लोगों की मृत्यु का हमें बड़ा दुःख है। लेकिन ध्यान देने की बात यह भी है कि इन घटनाओं से पहले हाथियों ने अपने क्षेत्रों में मानव द्वारा बनायी गई कई झोपड़ियों को उजाड़ा था। तब भी मानव हमारा मंतव्य नही समझ पाया था।

हिरण ने बात को आगे बढाया, "हाँ दादा, उत्तराखण्ड में इस तरह की घटनायें घटती रहती हैं जब अक्सर जंगलों में चारा व लकड़ी काटने वालों को खदेड़ कर हाथी अपना विरोध दर्ज करते ही रहते है।"

हाथी ने भी इस बात का समर्थन किया और बताया "नवम्बर 2006 में तो हाथियों के एक विचित्र व्यवहार ने सभी को सकते में डाल दिया था।"

हिरण ने उत्सुकता से पूछा, "क्या हुआ था नवंबर 2006 में?" हाथी ने बतलाया "देहरादून के पास बड़कोट रेंज के एक भाग में जहाँ हाथियों का आवासीय क्षेत्र था – मनुष्यों द्वारा दो तरफ से सड़कों का निर्माण किया जा रहा था, जिस पर हाथियों ने आपत्ति व्यक्त की। उनमें से 17 हाथियों का एक दल तो इतना नाराज हो गया था कि वह जंगल में कई दिनों तक पेड़ उखाड़ता रहा और अपनी नाराजगी व्यक्त करता रहा था।

हिरण ने कहा, "यह तो हाथियों ने विरोध करने का एक अच्छा तरीका अपनाया, जिसमें मनुष्यों को कोई हानि भी नहीं पहुँची और विरोध दर्ज भी हो गया।"

हाथी ने अपना मत व्यक्त किया, "लेकिन जंगल की हरियाली को काफी नुकसान पहुँचा, जिसका हम हाथियों को भी बहुत अफसोस है। ऐसी ही जून 2009 में भी एक घटना हुई थी जब झारखण्ड और उड़ीसा के जंगलों में मानव द्वारा बड़े पैमाने पर खनन गतिविधियाँ करने से नाराज 150 से भी अधिक हाथियों के समूह ने राज्यों के सीमांत जिलों जशपुर, अम्बिकापुर और कोरबा के जंगलों में आकर कई दिनों तक मानवीय क्षेत्रों में अपनी नाराजगी व्यक्त की थी।

शावक ने चिन्तित स्वर में कहा, "आखिर, ये मनुष्य अपनी हरकतों से बाज क्यो नहीं आते?"

हाथी ने क्रोध भरे स्वर में कहा, "अरे इन मनुष्यों ने तो सारी सीमायें तोड़ दी हैं। जंगलों में हमारे लिए न चारा छोड़ा – न पानी और न ही रहने के लिए शांतिपूर्ण आवास। ऊपर से हमारे शिकार को भी तैयार बैठे रहते हैं और यदि हम भोजन–पानी की तलाश में अपने आवासीय क्षेत्रों से बाहर निकलते हैं तो हमारे ऊपर गंभीर आरोप लगाये जाते हैं।"

हिरण ने चिंता भरे स्वर में कहा, "दादा! मानव को यह समझ क्यों नहीं आता कि हाथियों को उनकी हरकतें बुरी लग रही हैं?"

हाथी ने उत्तर दिया, "नहीं हिरण भइया, दरअसल मानव समझता तो है लेकिन उसने अपनी लिप्साओं को बहुत बढा लिया है और वह वन्य जीवों के साथ सामंजस्य बिठाकर जीने की कला भूल गया है।"

शावक ने पूछा, "दादा क्या सारे मनुष्य ही हाथियों को तंग करते हैं?"

हाथी ने समझाया, "नहीं बेटा, ऐसा नहीं है दरअसल कुछ तुच्छ स्वार्थी लोग ही हमारे हितों को नुकसान पहुँचाते है, अन्यथा हमारे हित की बात सोचने वाले भी काफी मनुष्य हैं। लो अब मैं तुम्हें कुछ ऐसी ही कहानियाँ सुनाता हूँ जिससे यह बात भी स्पष्ट हो जायेगी।

ध्यान से सुनो.....।

–क्रमशः

राज्य अकादमिक कन्वीनर,
राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस,
उत्तर प्रदेश

पुस्तक – चलो अंतरिक्ष चलें

लेखक – इरफ़ान ह्यूमन

प्रकाशक – रिसर्च प्रकाशन, शाहजहाँपुर

पृष्ठ – 64

मूल्य – रू० 50/–

बच्चों के लिए अंतरिक्ष यात्रा का रोमांच

जिस तरह हम पृथ्वी पर कार, बस, ट्रेन या हवाई जहाज़ से सफर करते हैं और अपनी छुट्टियों में घूमने-फिरने दूसरे शहर जाते हैं, उसी तरह अब अंतरिक्ष का सफ़र भी शुरू हो चुका है और मौज़-मस्ती के लिए अंतरिक्ष की सैर शुरू हो चुकी है।

चांद–तारों और अंतरिक्ष को लेकर बच्चों के मन में बहुत से सवाल रहते हैं कि अंतरिक्ष क्या है? अंतररिक्ष में क्या है? अंतरिक्ष जाएंगे कैसे? आकाश जाएंगे कैसे? आकाश में कहां से शुरू होता है अंतरिक्ष दिवाली में चलाए जाने वाले पटाख़े वाले रॉकेट से लेकर अंतरिक्ष में

जाने वाले रॉकेट तक का सफर कैसा था और किस सिद्धान्त पर काम करते हैं रॉकेट? अंतरिक्ष में पहुंचने के लिए स्पेस शटल कैसे होते हैं? अब तक सैर–सपाटे के लिए कौन लोग अंतरिक्ष जा चुके हैं? ज़ीरो ग्रेविटी क्या है, अंतरिक्ष में जब हर चीज़ तैरती है तो अंतरिक्ष यात्री खाते–पीते कैसे होंगे? अंतरिक्ष में जाने से पहले कैसा प्रशिक्षण होता है? अंतरिक्ष के ख़तरे क्या हैं? क्या अंतरिक्ष में डांस किया जा सकता है? अंतरिक्ष यात्रा का टिकट कितना है? क्या फ्री में अंतरिक्ष में पहुंचा जा सकता है...? इन सभी का जबाव इस पुस्तक में मिलेगा।

आधुनिक वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित बच्चों के लिए विज्ञान कथाकार इरफ़ान ह्यूमन द्वारा लिखित पुस्तक "चलो अंतरिक्ष चलें" से बच्चों को अंतरिक्ष सैर के साथ अंतरिक्ष के अनेक रहस्यों की जानकारी मिलेगी। हिंदी में प्रकाशित इस पुस्तक में सभी तकनीकी शब्द अंग्रेज़ी में भी दिये गये हैं, जिससे अंग्रेज़ी माध्यम से पढ़ने वाले बच्चों को इसे समझने में कोई कठिनाई नहीं होगी।

अंतरिक्ष में सैर का दौर शुरू हो चुका है। नई सदी अंतरिक्ष पर्यटन के लिए हमेशा याद की जाएगी क्योंकि इसमें अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी को लेकर कई तकनीकों और संभावनाओं का जन्म हुआ। पुस्तक की शुरूआत बड़े ही रोचक ढंग से अंतरिक्ष वैज्ञानिक ब्रैडली एडवर्ड्स के बच्चों को संबोधन के साथ की गई है। ब्रैडली एडवर्ड्स ने अंतरिक्ष तक पहुंचने के लिए एक नया रास्ता सुझाया था, जिससे तहत उन्होनें आने वाले वर्षों मे एक ऐसी लिफ्ट का सुझाव रखा जो सैकड़ों किलामीटर तक ऊपर तक जा सकेगी, जिससे अंतरिक्ष यात्रा के दौरान राकेट प्रक्षेपण में होने वाले 90 प्रतिशत से अधिक खर्च को बचाया जा सकेगा। पिछले दिनों ब्रिटिश उद्यमी रिचर्ड ब्रानसन काफ़ी चर्चा में रहे। अंतरिक्ष उड़ानों को संचालित करने वाली रिचर्ड की कम्पनी वर्ज़िन गैलेक्टिक अंतरिक्ष यात्रियों को पांच के ग्रुप में अंतरिक्ष यात्रा कर सकेंगे और उड़ान मे होने वाली आमदनी काके अंतरिक्ष यात्रा को और अधिक सस्ती बनाने में इस्तेमाल किया जाएगा। ज्ञात रहे रिचर्ड के सहयोगी और इस अभियानसे जुड़े बर्ट रूटेन द्वारा डिज़ाइन किया गया स्पेसशिप वन ने जून, 2004 में 90 मिनट की पहली उड़ान भरी थी। यह पहला ऐसा मौक़ा था जब स्पेसशिप वन जैसे प्राइवेट यान ने पहली बार आकश में 100 किलोमीटर की ऊचाई तक पहुंच कर अंतरिक्ष सीमा को छुआ था।

पुस्तक में बताया गया है कि अभी तक अंतरिक्ष की सैर का द्वार केवल वैज्ञानिकों और अंतरिक्ष अनुसंधानों के लिए ही खुला था, लेकिन अब दुनिया की सैर कर बोर हो चुके आम लोगों के लिए भी अंतरिक्ष सैर की सुविधा प्रदान की जाने लगी हैं, जिनको प्राप्त करने वाले ज्यादातर करोड़पति व्यक्ति हैं जो अंतरिक्ष की सैर करने की इच्छा रखते हैं। नई सदी में अंतरिक्ष पर्यटन के भी कई रास्ते खुले और इस संबंध में कई योजनाओं का जन्म हुआ। पिछले वर्षों में अंतरिक्ष पर्यटन के क्षेत्र में कई कम्पनियों ने सहयोग किया प्लेनेट स्पेस निजी क्षेत्र की पहली ऐसी कम्पनी है, जो मानव द्वारा चलाए जाने वाले अंतरिक्ष यानों के निर्माण के साथ अपने खर्चे पर लोगों को अंतरिक्ष की सैर कराने की सेवा शुरू करने जा रही है, जो आगामी वर्षो में दो हज़ार लोगों को अंतरिक्ष की सैर कराएगी। यदि आप भी इस कम्पनी की सेवा प्राप्त कर अंतरिक्ष की सैर के इच्छुक हैं तो आपको सिर्फ़ 2.25 करोड़ रूपये ख़र्च करने होंगे, लेकिन मुफ्त में भी अंतरिक्ष यात्रा का लुत्फ़ उठाया जा सकता है। स्पेस एडवेंचर्स कम्पनी के अध्यक्ष एवं पूर्व एयरोस्पेस इंजीनियर एरिक एंडरसन ने घोषणा की है कि अब कोई भी आम व्यक्ति अपने अंतरिक्ष की सैर का सपना पूरा कर सकता है, इसके लिए उसे पांच डालर का लॉटरी का टिकट ख़रीदना होगा, जिसमें किसी भी देश का निवासी पहला पुरस्कार जीत कर अंतरिक्ष की सैर कर सकता है। यदि आप पुरस्कार नहीं जीतते तब भी कोई बात नहीं, आप टिकट ख़रीद कर भी अंतरिक्ष का आनन्द ले सकते हैं।

आज जहां अंतरिक्ष अनुसंधानों के लिए अंतरिक्ष में स्काई लैब, सैल्युट, स्पेस शटल जैसी प्रयोगशालाएं बनाई गई हैं वही भविष्य में अंतरिक्ष में ऐसे ही टूरिस्ट केन्द्र नज़र आयेंगे। अंतरिक्ष के इस रोमांचकारी पर्यटन के दौरान समस्या खाने–पीने की भी आयेगी, तो वैज्ञानिकों ने इस पर भी कार्य शुरू कर दिया है। कथाकार ने पात्रों के माध्यम से जानकारी उपलब्ध कराते हुए लिखा है कि नासा की कैथी ओलसेन अपने सहयोगियों के साथ आलू व शकरकंद जैसी किस्मों के विकास में लगी हई हैं जो जमीन और अंतरिक्ष में समान रूप से उगाई जा सकेगी। अंतरिक्ष में खाने–पीने के सवाल के साथ एक अहम मुद्दा सेहत का है। वास्तव में अंतरिक्ष में जाकर मानव शरीर कई तरह से प्रभावित होता है। अंतरिक्ष में मानव शरीर की हड्डियाँ बुरी तरह प्रभावित होती हैं। लम्बे समय तक अंतरिक्ष में रहने से हड्डियों का क्षय प्रारम्भ हो जाता है। वैज्ञानिक ऐसी समस्याओं से निपटने और अंतरिक्ष यात्राओं को और अधिक सुगम बनाने के लिए भी गहन अध्ययन कर रहे हैं।

पुस्तक में ऐसा है अंतरिक्ष, सच हुई कहानियां, अंतिरक्ष यान से अंतरिक्ष तक, अंतरिक्ष का आभास, अंतरिक्ष में जाने से पहले, अंतरिक्ष में ख़तरे, अंतरिक्ष की सैर कर लो, अंतरिक्ष बस्ती में मौज–मस्ती जैस आठ अध्याय शामिल किए गए हैं। पुस्तक में आवश्यकतानुसार चित्रों का समावेश भी किया गया है। इस पुस्तक के माध्यम से बच्चों को अंतरिक्ष और अंतरिक्ष यात्रा संबंधित रोचक ढंग से तरोताज़ा जानकारियां उपलब्ध कराने का लेखक का प्रयास सराहनीय है।

समीक्षक – रूफिया खान

अन्टा, निकट मोहनी स्कूल, मज़ार वाली गली, शाहजहाँपुर, उत्तर प्रदेश

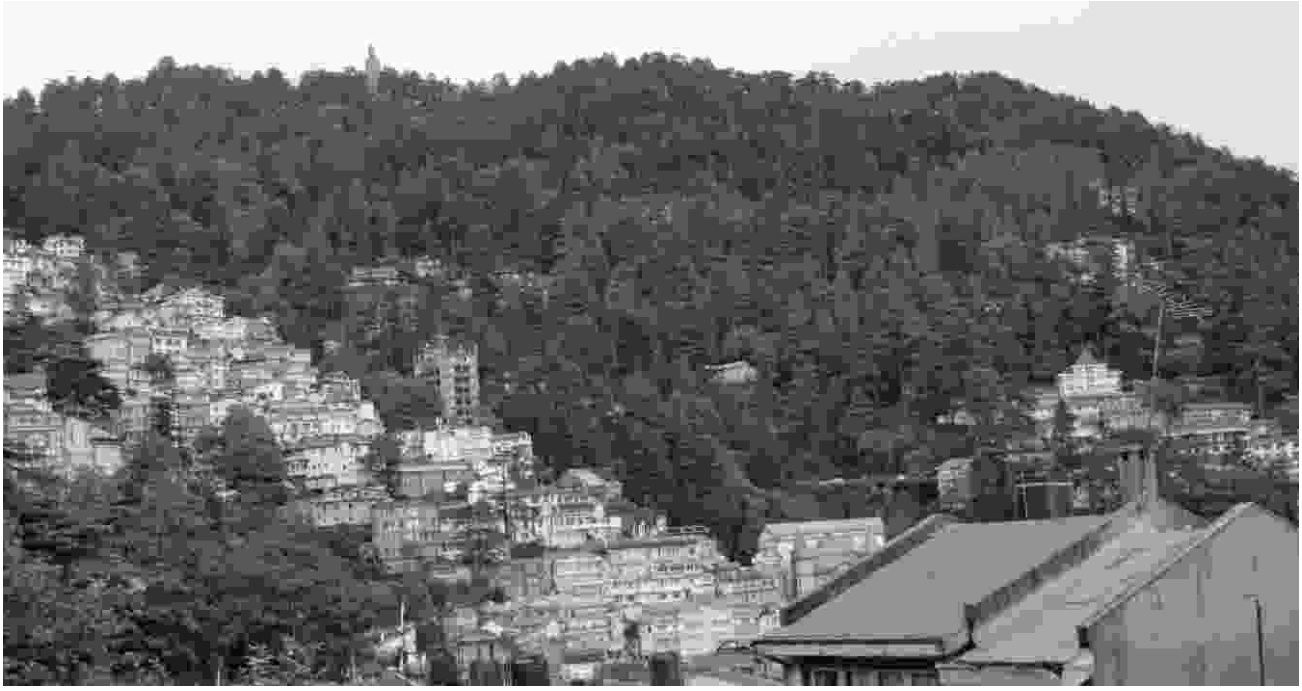

हिमालय की वनस्पतियों पर बढ़ता दबावः शिमला (पश्चिमी हिमालय) एक संदर्भ

हर्ष सिंह, वीणा दीक्षित, प्रियंका अग्निहोत्री एवं तारिक हुसैन

हिमालय विश्वभर में अलौकिक दार्शनिक दृश्यों एवं पर्वत श्रृंखलाओं के लिए प्रसिद्ध है। भारतीय हिमालय ($27^{\circ}50'$–$37^{\circ}0'$ दृशांश तथा $72^{\circ}30'$–$97^{\circ}25'$ अक्षांश) 2500 किमी. लम्बाई तथा 240 किमी. चौडाई के साथ, लगभग 4,19,873 किमी.^{2} क्षेत्र में फैला हुआ है। हिमालय पर पाई जाने वाली विविध जलवायु परिस्थितियाँ एवं मिट्टी की अमूल्य उर्वरक क्षमता के कारण यहाँ पर अद्वितीय जैविक विविधता पाई जाती है। हिमालय की गोद में 21 प्रकार के वन्य 18440 पौधे; 1748 औषधीय पौधे; 816 पेड प्रजातियाँ; 8000 पुष्पीय पौधे पाए जाते है। इन 8000 पुष्पीय प्रजातियों में लगभग 30 प्रतिशत स्थानिक (एंडेमिक); 10.2 प्रतिशत पेड़ एवं 15 प्रतिशत औषधीय पौधे हैं। उपर्युक्त तथ्यों से हिमालय की जैविक विविधता एवं महत्ता का स्वतः ही आकलन किया जा सकता है।

शिमला अपने अनुपम दृश्य एवं अमूल्य वन्य संम्पदा के लिये पूरी दुनिया में जाना जाता है। यह हिमाचल प्रदेश की राजधानी है, जो कि $31^{\circ}6'12$ दृशांश एवं $77^{\circ}10'20$ अक्षांश में 2200मी॰ पर पश्चिमी हिमालय क्षेत्र का एक भाग है। शिमला शब्द की उत्पति श्यामलादेवी (स्थानीय देवी) से हुई, जो माँ काली का स्वरूप है। यह क्षेत्र उत्तर में मण्डी, पश्चिम में कन्नौर तथा दक्षिण–पश्चिम में उत्तराखण्ड एवं दक्षिण में सोलन और सिरमोर से घिरा है। शिमला की जलवायु ठंड़ी है, जहाँ कि शीत काल में -4° C एवं गर्मी में 31°C तक पारा पहुँचता है। प्रसिद्व जाखू मंदिर यहाँ की ऊँची पहाड़ी जाखू पर स्थित है, जहाँ से पूरे शिमला का मनोरम दृश्य दृष्टिगोचर होता है। यह मंदिर हनुमान जी को अर्पित है, तथा इस मंदिर में हनुमान जी की विशालकाय मूर्ति स्थित है।

पर्यटन का एक महत्वपूर्ण केन्द्र होने के कारण यहाँ पर पर्यटकों की एक भारी संख्या साल भर पहुँचती है। मुख्यतः जनवरी एवं फरवरी माह में यहाँ पर आच्छादित बर्फ की सफेद चादर पर्यटकों के लिये विशेष आकर्षण केन्द्र होती है। पर्यटन विभाग के आँकड़ों के अनुसार पिछले विगत दशक में यहाँ पर विदेशी एवं देशी सैलनियों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। इसलिए पर्यटकों की विभिन्न सुविधाओं जैसे– आवास, परिवहन, इत्यादि के विकास के कारण प्राकृतिक वनों का अत्यधिक दोहन हो रहा है। कई निजी संस्थाओं द्वारा रिसॉर्ट का निर्माण किया जा रहा है, जो अपनी प्राकृतिक दृश्यों के लिए पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। परन्तु ये रिसार्ट हमेशा प्राकृतिक वनों एवं कई संसाधनों का अविवेकपूर्ण दोहन का कारण बनते हैं। पर्यटन के दबाव के कारण CO_2 का बढ़ता दबाव भी वनस्पतियों की प्राकृतिक संरचना पर अनुप्रयुक्त प्रभाव डाल रहा है। इसके अलावा जलवायु परिवर्तन जैसी कई जटिल समस्याएँ भी पर्यटन दबाव के कारण उत्पन्न होती जा रही

हैं। आर्कषक परिदृश्य स्थलों जैसे–पर्वत श्रृंखलाएँ एवं ढलानें आदि पर प्राकृतिक दृश्यों के साथ–साथ विभिन्न प्रजाति युक्त पारिस्थितिक–तंत्र पाए जाते हैं। परन्तु यहाँ पर मनुष्य के बढ़ते दबाव के कारण यह प्रजातियाँ विलुप्त होती जा रही हैं।

शिमला की जलवायु भिन्नता के कारण यहाँ पर कई प्रकार के पेड़–पौधों पर पुष्प अलग–अलग मौसमों में अपनी छटा बिखेरते हैं। शिमला मुख्यतः चीड़ (पाईनस लॉंगीफोलिया) देवदार (सीड्रस द्योदारा) बुराँश (रोडोडेन्ड्रान आरवोरियम) पाँगर (एसकुलस इण्डीका) बाँझ (क्वरकस ल्यूकोट्राइकोफोरा) पेड़ो से घिरा है। फरवरी से मार्च में बुराँश के लाल पुष्प पूरे शहर को खूबसूरत बनाते हैं। इसके अलावा फरवरी से मार्च में दारूहरिद्रा (बरबेरिस प्रजातियाँ), हिंसालू (रूबस इलेक्टिकस), पाषाणभेद (बरजीनीया सीलेयेटा), तगर (वेलिरेयाना जटामांसी), हाईपेरिकम ऑबलोगीफोलियम, अप्रैल से मई में लोनीसीरा, रोजा, इण्डीगोफिरा, टेराक्सम, ऑफीसनेलीस एवं जुलाई से अक्टूबर में डेलफीनीयम डेनूयूडेटम, एकोनीटम हीट्रोफाइलम, माइक्रोस्टाइलिस एक्यूमिनेटम, थैलीक्ट्रम जैविनीकम्, वनहल्दू (हिडेचियम स्पीकेटम्) हबीनेरिया इन्टरमीडिया (ब), रोजकोरीया अल्पाइना (स), इत्यादि पाये जाते है।

औषधीय महत्व के कारण दोहन होने वाली कुछ मुख्य प्रजातियां जैसे– वृद्वि (हेबीनेरिया इण्टरमीडिया) क्षीर–काकोली (लीलीयम पॉलीफाईलम) एवं जीवक (माइक्रोस्टालीस एक्यूमीनेटाम्) अष्टवर्ग के कुछ महत्वपूर्ण पौधे हैं, जिनका उपयोग बीमारियों के निराकरण हेतु सालों से होता है। इसके अलावा अतीस (एकोनीटम हिट्रोफाइलम) रोसकोरिया अलपाइना, डेलफीनीयम डेन्यूडेटम कुछ दुर्लभ औषधीय पौधे हैं जिनका अत्यधिक दोहन इन्हे समाप्ति की ओर ले जा रहा है। इनके अविवेकपूर्ण दोहन के कारण पौधों की प्राकृतिक संख्या में कमी होती जा रही है। वैसे तो पर्यटन का दबाव सभी वनस्पतियों पर होता है, परन्तु इसके अलावा उपयोगी वनस्पतियों के विलुप्त होने का खतरा ज्यादा बढ़ जाता है। कई वनस्पतियों के लोक–औषधीय एवं औषधीय उपयोग मानव जाति द्वारा खोजे जा चुके हैं। इसके अलावा उन वनस्पतियों को भी इस दबाव का खतरा होता है, जिनका कोई औषधीय उपयोग तो नही होता है परन्तु उनका प्रयोग कई स्थानीय लोगो द्वारा अपने दैनिक उपयोग के लिये होता है।

जलवायु परिवर्तन आज इस शताब्दी का एक महत्वपूर्ण चिंताजनक विषय पूरे विश्व में बना हुआ है। इसका मुख्य कारण प्रकृति पर बढ़ता एथ्रोपोजेनिक दबाव है जो मुख्य रूप से निकलने वाले धुएं एवं पेड़ों के अत्यधिक कटाव के कारण पैदा होता जा रहा है। सभी प्रकार के मौसमों जैसे सर्दी, गर्मी, बरसात एवं पतझड़ के समय में परिर्वतन हुआ है, और वनस्पतियाँ जलवायु के लिए सर्वाधिक संवेदनशील होती हैं। इसलिए जलवायु में तनिकमात्र परिवर्तन का असर वनस्पतियों पर स्वतः ही देखा जा सकता है। इन परिवर्तनों में मुख्य रूप से फूलों के खिलने का समय बढ़ना या घटना, पत्तियों पर उपस्थित स्टोमेटा की संख्या एवं संरचना में परिवर्तन एवं पौधो के पाए जाने की उन्नयन इत्यादि है। संवेदनशील पौधों की श्रेणी में मुख्यतः औषधीय पौधे आते है इसलिये इनकी विलुप्तता का खतरा सर्वाधिक है।

पौधे प्रकृति के द्वारा प्रदान की गई वो अमूल्य धरोहर हैं, जो यदि एक बार मानव जाति के हाथों से निकल जाए तो उसको पुनः प्राप्त करना असंभव है। इसलिए प्रत्येक मनुष्य को इसके संरक्षण के लिए प्रयास करना होगा। वैसे तो सरकार एवं कई निजी कंपनियों द्वारा कई परियोजनाएँ पौधों के संरक्षण के लिए चलाई जा रही हैं। परन्तु एक अनुमान के अनुसार हर वर्ष होने वाले दोहन की तुलना में पौधों के संरक्षण की नीतियों के द्वारा प्राप्त उत्पादन पर्याप्त नहीं है। वैज्ञानिकों के द्वारा संरक्षण की कृत्रिम प्रणाली को विकसित किया गया है एवं इसके परिणाम काफी उपयोगी सिद्ध भी हुए हैं। फलतः कृत्रिम पद्धति के द्वारा पौधों की संख्या को कम समय में अधिक बढ़ाया जा सकता है। फिर भी स्थानीय लोगों के प्रयास के बिना किसी भी प्रणाली का परिणाम पूरा नहीं हो सकता। प्रत्येक पद्धति का अंतिम लक्ष्य, पौधों की प्राकृतिक संख्या को बढ़ाना है। इसलिए आज प्रत्येक व्यक्ति को पौधों की रक्षा अपने किसी व्यक्ति की तरह करनी होगी, जिससे हम अपने आने वाली पीढ़ी को औषधीय पौधों का उपहार दे सकें! एवं दूसरी ओर दोहन की उचित विधियों को सीखने की भी आवश्यकता है क्योंकि गलत तरीके से किए गये दोहन के फलस्वरूप भी पौधों की संख्या बहुत कम हो रही है। इसलिए औषधीय पौधों का उपयोग एवं प्राप्त करने की उचित विधि ही हमारे आगामी भविष्य को पौधों के आशीर्वाद से भरपूर बना सकती है।

सीएसआईआर–राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

खोदो, पर खो मत दो

मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी

मानव की उत्पत्ति से लेकर आज तक का गत एक लाख से अधिक वर्ष का उसका इतिहास केवल खोदने का इतिहास है। होमो सेपियन्स सेपियन्स आर्थात् हम मानवों ने जमीन खोद कर कन्दमूल खाये। पहाड़ खोद कर पत्थर निकाले। ऐसे पत्थर जो मजबूत थे, नुकीले और धारदार बनाये जा सकते थे। फेंककर शिकार को मारने, मरे शिकार की खाल छीलने, माँस काटने, हड्डियाँ तोड़ने आदि के लिये भाँति-भाँति के पत्थर चाहिये थे। ऊँचे पेड़ों से फल गिराने के लिए भी पत्थर ही चाहिये थे। उन्हें पहाड़ खोद कर ही निकालना पड़ता था। और यह खोदने का कार्य केवल होमो सेपियन्स ने ही किया हो ऐसा नहीं; उनके चचेरे पूर्वज अर्थात् पाँच लाख वर्ष पूर्व के होमो सेपियन्स नियांडर्थेलिस या नियांडर्थल मैन भी पत्थरों का ऐसा ही उपयोग करते थे। उनसे भी पहले के पूर्वज होमो इरेक्टस और होमो हैबिलिस भी पत्थरों का प्रयोग करते थे इस बात के प्रमाण मिले हैं। आग जलाने के लिये भी तो पत्थर चाहिये थे। पन्द्रह लाख वर्ष पूर्व होमो इरेक्टस ने ही आग जलाना सीख लिया था। खोदना तब से चल रहा है।

फिर आदमी ने देखा कि पत्थर तो पानी में डूबते हैं पर लकड़ी तैरती है। बड़े-बड़े पेड़ों को उखाड़ कर उनकी सहायता से नदियाँ पार की जा सकती है। लताओं से पेड़ो को बांध कर बेड़े बनाये जा सकते हैं। बेड़ों को किनारो पर बांध कर रखने के लिये टूटे पेड़ो की लकड़ियों को गाड़ कर खूटियाँ बनाना आ गया। उखाड़ने और गाड़ने की इन

क्रियाओं के लिये भी खोदना ही जरूरी था।

विकास का क्रम आगे बढ़ा जब मनुष्य ने उगाना सीखा। अपने आप उगने वाले कन्द्र, मूल, फल खाते–खाते उनके बीज अपनी मनचाही धरती में गाड़ने से उन्हें खुद भी पैदा किया जा सकता है यह एक क्रान्तिकारी खोज उस प्राचीनतम वैज्ञानिक ने की और शुरू हो गया कृषि का इतिहास। और खेती का पहला चरण है जमीन को जोतना माने खोदना। चल पड़ा खोदने का यह सिलसिला लगभग 12000 वर्ष पूर्व।

इसी बीच किसी समय किसी वैज्ञानिक को धातु के पत्थरों का पता चला। चमकीले पत्थर चाल्कोपाइराइट। इस नाम से तो उसे हम आज जानते हैं। जिस प्रथम वैज्ञानिक ने खोजा होगा उसने पता नहीं क्या नाम दिया होगा। पर मनुष्य ने जाना कि इस पत्थर को गला कर एक शानदार चमकीली धातु प्राप्त की जा सकती है जिसे हम तांबा कहते हैं। वैसे प्रकृति में तांबा तांबे के रूप में भी मिलता है पर बहुत कम। तांबे के यौगिक खनिज ही उसके प्रमुख स्रोत हैं। अब तक विद्वान मानते थे कि आज से लगभग 5500 वर्ष पूर्व तांबे की खोज हुई। इस काल को ताम्रयुग कहते हैं। पर अब हमें 7000 वर्ष से भी पहले तांबे की खोज का पता चल गया है। आज के अफगानिस्तान और पाकिस्तान के कंदहार, मुंडीगाक, बलूचिस्तान, बोलन दर्रे और मेहरगढ़ क्षेत्रों में 7786 वर्ष पूर्व के तांबे के उपयोग के प्रमाण मिले हैं। मनुष्य ने केवल तांबा ही जाना हो ऐसा भी नहीं। उसने रांगा भी पा लिया और इन धातुओं को मिला कर कांसा नाम की एक नई मिश्रित धातु बनाने की विद्या प्राप्त कर ली। धातुएँ ऐसे ही नहीं मिलतीं। वे खनिजों में रहती हैं, खनिज पहाड़ों में होते हैं। उनकी खोज करनी पड़ती है। जहाँ वे अच्छी मात्रा में मिलते हैं वहाँ से उन्हें खोद कर निकालना पड़ता है। फिर खनिजों को गला कर भाँति–भाँति की रासायनिक प्रक्रियाएँ कर उनमें से धातुओं को साफ कर अलग करना कोई साधारण कार्य नहीं है। हजारों वर्षों के मानव इतिहास में इन विद्याओं का क्रमशः विकास हुआ है।

पत्थर गलाने के लिये तेज आग चाहिये थी। आग जलाने की विधियों की खोज तो *होमो सेपियन्स* के पूर्वजों ने ही कर ली थी। पत्थर से पत्थर या लकड़ी से लकड़ी रगड़ कर अग्नि प्रज्वलित की जा सकती है यह ज्ञान मानव जाति का एक क्रान्तिकारी प्रथम वैज्ञानिक आविष्कार था। आग जलाने की ये विधियाँ बहुत श्रमसाध्य थीं। लंबे समय तक रगड़ते रहो तो चिनगारी निकलेगी। फिर वे चिनगारियाँ तुरन्त किसी ज्वालाग्राही पदार्थ के सम्पर्क में आये तो आग पकड़े। इसलिए एक बार आग जल गई तो उसे संभाल कर रखना और बुझने न देना बड़ा महत्वपूर्ण था। यदि बुझ गई तो फिर से जलाओ माने कितना झंझट? इस सिलसिले में हमारे पुराणों की एक कथा बड़ी मनोरंजक है। एक बार अग्नि गायब हो गया। सारी सृष्टि में हाहाकार मच गया। कहाँ गुप्त हो गया अग्नि? अग्नि नहीं माने मानव का जीवन नहीं। आर्यों के सारे कार्य व्यवहार अग्नि पर ही तो आश्रित थे। यज्ञ प्रधान संस्कृति थी उनकी। सभी अग्निहोत्र धारण करते थे। अग्निहोत्र का अर्थ है प्रतिदिन अग्नि की उपासना। कहते हैं अग्निहोत्री के घर में अग्निकुण्ड सदैव प्रज्वलित रहता है, रखा जाता है। अग्नि लुप्त हो गया तो सारी प्रजा व्याकुल हो उठी। निकल पड़े सब अग्नि की खोज में। जंगल–जंगल पहाड़–पहाड़ ढूंढते फिरे। पर अग्नि का कहीं पता न चला। आर्यों में एक ऋषि के पास दिव्य दृष्टि थी। उसका नाम था अंगिरा। उसे दिखाई पड़ गया वह स्थान जहाँ अग्नि छुपा हुआ था। वह था एक बबूल के सूखे पेड़ में। अंगिरा ने बबूल के उस पेड़ के दो डंडे लिये और उन्हें रगड़ने लगा तथा साथ ही साथ अग्नि के आवाहन के सूक्त भी पढ़ने लगा। अंगिरा के इस तप से अग्नि छुपा न रह सका तथा प्रकट हो गया। सारे समाज में अंगिरा की जयजयकार होने लगी। तभी से अग्नि को अंगिरा का पुत्र माना जाने लगा। तो यह कथा हमें बताती है कि बबूल की लकड़ियाँ रगड़ कर आग जलाने की विधि का आविष्कारक वैज्ञानिक था अंगिरा। बाद में इस विधि का और परिष्कार किया गया। लकड़ी की एक कटोरीनुमा खोल में दूसरी लंबी लकड़ी डाल कर बड़ी तेजी से घुमाकर अग्नि प्रज्वलित की जाने लगी। इस विधि को अरणि मन्थन कहा जाता है। आज भी शुद्ध पवित्र यज्ञ के लिये अग्नि माचिस या लाइटर से नहीं जलाई जाती, केवल अरणि मंथन किया जाता है।

तांबे के बाद मनुष्य ने लोहे के खनिजों से लोहा निकालने की विद्या भी सीख ली। पृथ्वी में तांबे की तुलना में लोहा बहुत अधिक पाया जाता है। पृथ्वी की पर्पटी में तांबा औसतन केवल 0.005 प्रतिशत है जबकि लोहा 5.4 प्रतिशत। तांबे के अयस्क खनिज जैसे चाल्कोपाइराइट जिनसे तांबा निकाला जा सकता है, उनमें भी तांबे की मात्रा 3.4–3.5 प्रतिशत ही होती है जबकि हेमेटाइट, मैग्नेटाइट जैसे लोहे के अयस्कों में लोहा 60 से 70 प्रतिशत तक हो सकता है। इस प्रकार पृथ्वी पर लोहा तांबे से बहुत अधिक मात्रा में उपलब्ध होते हुए भी हमारे पूर्वजों ने तांबा पहले खोजा, लोहा बाद में यह एक आश्चर्यजनक बात लगती है। इसका कारण सम्भवतः यह होगा कि लोहे के ऑक्साइड अयस्कों से लोहा अलग करने की विधि तांबे के सल्फाइड खनिजों से तांबा निकालने की विधि की तुलना में अधिक श्रमसाध्य है। इसलिये हो सकता है कि उन्हें लोहा बाद में मिला हो। पर एक बार जब मिल गया तो उनके खोदने की गति की कोई रोक ही न रही। लोहा अत्यन्त मजबूत धातु है। सारे पत्थरों को तोड़ सकती है। जमीन में गहरे से गहरे गड्ढे आसानी से बना सकती है। धीरे–धीरे और धातुएँ भी खोजी गईं। ईसवी सन् के प्रारंभ तक तांबा, रांगा, सीसा, लोहा, चांदी, सोना और पारा ये सात धातुएँ ज्ञात हो चुकी थीं। बाद में और भी पता चलीं। लोहे में दूसरी धातुएँ मिला कर इस्पात बनाने की कला का भी आविष्कार कर लिया मनुष्य ने । वह पहाड़ खोदता रहा और नये–नये खनिज और शैल खोजता रहा। हजारों वर्षों के काल के वे सारे वैज्ञानिक हमारे पथ प्रदर्शक हैं। आज हम जिस भौतिक उन्नति का उपभोग कर रहे हैं वह गत दस–बारह वर्षों की परम्परा की परिचायक है। और उस परम्परा का आधार है केवल खोदना।

प्रारम्भ में जब मनुष्य खेती के लिये या पत्थर प्राप्त करने के लिये केवल ऊपर ही ऊपर जमीन खोदता था तो वह खुदा हुआ स्थान प्राकृतिक क्रियाओं से भर भी

जाता था। इसलिये पृथ्वी माँ की प्रार्थना करते हुए वैदिक ऋषि उससे कहते हैं कि हे माँ! ऐसी कृपा करो कि मैं जो कुछ भी खोदूं वह शीघ्र ही भर जाय और मेरे इस प्रकार के कार्यकलाप से तुम्हें किसी प्रकार का कष्ट न हो।

'यत् ते भूमे विखनामि क्षिप्रं तदपि रोहतु
मा ते मर्म विमृग्वरि मा ते हृदयमर्पितम्'

–अथर्ववेद, पृथ्वीसूक्त, कांड 12, अ. 1, सू. 1.35

किन्तु समय के साथ खोदने की यह क्रिया अत्यधिक बढ़ती गई। खनिजों के नये नये उपयोग पता चले। उनकी मांग दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती रही। नये नये खनिज भण्डार खोजे जाने लगे। मनुष्य आवश्यकताएँ बढ़ाता रहा और फिर उनकी पूर्ति के लिये आविष्कार भी होते रहे। पहाड़ सपाट होने लगे। चार चार, पाँच पाँच किलोमीटर गहराई तक खानें खुद गईं। ज्यादा गहरे जहाँ मनुष्य खुद नहीं जा सकता था वहाँ कुएँ खोदने के यन्त्र जाने लगे। पृथ्वी में गहरे गहरे छेद कर ईंधन तेल तथा गैस निकाला जाने लगा। आज विश्व में लगभग आठ अरब मनुष्य हैं और प्रतिवर्ष करोड़ों टन खनिज निकाल रहे हैं। खोदना बदस्तूर बढ़ता जा रहा है। जमीन पूरी नहीं पड़ रही है तो अब समुद्र के नीचे तैयारी है। छिछले समुद्रों में तो खोदन चल ही रहा है। अब गहरे पानी पैठ कर धन निकालना है। इतना ही क्यों, इस सृष्टि में केवल पृथ्वी थोड़े ही है। ग्रह, नक्षत्र, तारे सब हैं। सब खोदने हैं। खोदने की सीमा असीम है।

यह तो हुई केवल भौतिक खोदने की बातें। परन्तु मानव की केवल भौतिक सभ्यता ही नहीं वरन् उसकी वैचारिक, मानसिक तथा बौद्धिक प्रगति का भी आधार खोदना ही रहा है। मनुष्य की दो मूलभूत प्रवृत्तियाँ हैं। वे हैं जिज्ञासा और कौतूहल। पृथ्वी के साढ़े चार अरब वर्ष से अधिक के इतिहास में असंख्य जीव प्रजातियाँ उत्पन्न हुईं; कम या अधिक समय तक रहीं और फिर नष्ट हो गईं। परन्तु मनुष्य से पहले ऐसा कोई भी जीव पृथ्वी पर नहीं हुआ जिसमें ये दो गुण विकसित हुए हों। जीव विकास के क्रम का अद्भुत प्रतिनिधि है यह *होमो सेपियन्स*। आदमी ने अपने चारों ओर के प्रकृति के रहस्य को केवल कौतूहल से देखा ही नहीं वरन् उसको समझने का और यथासम्भव अपने अनुकूल बदलने का भी कार्य किया। प्रकृति को समझने की इस विद्या का नाम है विज्ञान। इस विज्ञान के विकास की आधारशिला है खोदना। रहस्य की एक के अन्दर एक छिपी हुई पर्त को खोदते हुए अंतिम सत्य –यदि वैसा कुछ होता हो तो – तक पहुँचना।

सभ्यता के प्रारम्भ से ही मनुष्य ने प्रश्न पूछना शुरू किया। यह सृष्टि क्या है, कैसी है, क्यों है, कब बनी, किसने बनाई, इसका अन्त कब होगा, इसमें इतनी विविधता क्यों है? नदी, पहाड़, समुद्र, रेगिस्तान, मैदान, जंगल, भांति भांति की वनस्पतियाँ, जीव जगत, मौसम, ग्रह, नक्षत्र, तारे सारे उसके सामने एक महान रहस्य के आवरण में प्रस्तुत थें और उसने शुरू किया खोदना। इसी खोदने के क्रम में बुद्धिनिष्ठ विज्ञान का विकास हुआ तो आस्थानिष्ठ धर्म का भी। ऐसे ही किसी खोदक ने ईश्वर को खोज निकाला। निर्गुण निराकार, सगुण साकार, अवतार, पैगम्बर, ईश्वर के पुत्र, बोधिज्ञान प्राप्त बुद्ध, कैवल्य प्राप्त तीर्थंकर, कुछ भी न प्राप्त ढोंगी साधु, महन्त, मठाधीश सारे मनुष्य द्वारा पिछले हजारों वर्षों में की जा रही खुदाई में निकलते रहे और आज भी निकलते जा रहे हैं।

मनुष्य जिस प्रकार अपनी भौतिक उन्नति के लिये खोदता रहा है, अपनी वैचारिक प्रगति के लिये खोदता रहा है वैसे ही वह अपनी पाशविक प्रवृत्तियों के अधीन होकर भी खोदता ही जा रहा है। किसी भी देश के इतिहास की कोई भी पुस्तक उठा कर देख लीजिये। सारे इतिहास का केवल एक मूल मन्त्र है – दूसरे की जड़ खोदना। सारा इतिहास मानव समाजों या गुटों की उखाड़ पछाड़ का इतिहास है। यद्यपि अस्तित्व के लिये संघर्ष तो सभी प्राणि जातियों में होता है। डार्विन द्वारा प्रतिपादित जीव विकास के सिद्धान्त का आधार ही अस्तित्व के लिये संघर्ष तथा योग्यतम का बचना हे। परन्तु यह संघर्ष नितान्त प्राकृतिक है। मानवों के बीच आपसी संघर्ष पूर्ण रूप से मानवीय अर्थात् अप्राकृतिक है। अपने अहंकार के लिये, दूसरे की सम्पत्ति का हरण करने के लिये, झूठे धर्म के लिये या केवल क्रूरतावश होने वाला संघर्ष प्राकृतिक नहीं होता।

तो भौतिक हो, वैचारिक हो या सामाजिक हो, हर धरातल पर मनुष्य का इतिहास केवल खोदने का इतिहास है। खोदने के अलावा हम कुछ और कर भी नहीं सकते। खोदना हमारी नियति है। यहाँ तक तो ठीक। परन्तु खोदते खोदते भी हम जरा सा रुकें और सोचें कि खोदने के इस जुनून में हम कहीं खुद ही न खो जायें। पृथ्वी के इतिहास में मनुष्य अभी कल का बच्चा है। केवल एक लाख वर्ष आयु है उसकी। अरबों वर्षों में एक लाख का बिन्दु दिखाई भी नहीं पड़ेगा। और इन्हीं लाख वर्षों में खोदते खोदते हम विनाश के कगार पर आ पहुँचे हैं। भौतिक उन्नति के लिये जो खोदन चल रहा है उससे पृथ्वी के जमीन के संसाधन समाप्त हो रहे हैं। समुद्र की गहराइयों के बाकी हैं। नहीं तो चांद–तारों के भी लाये जा सकते हैं। पर हवा, पानी, मिट्टी सब गंदी करते करते समुद्र, ग्रह नक्षत्र सब प्रदूषित करने के लिये मानव तैयारी कर रहा है। वैचारिक खोदन कार्य इतना हो गया कि अब विचारक सभ्यताओं के संघर्ष की अवधारणा प्रकट कर रहे हैं। तुम मेरे भगवान को नहीं मानते तो मरो। वैसे नहीं मरते तो मेरे साथ मरो। इस वैचारिक खोदन का भी अंतिम पड़ाव विनाश है। और सामाजिक खोदन कार्य? उसका तो आधार ही विनाश है। बिना अन्य को मारे अपनी सिद्धि नहीं होती।

तो हममें से क्या कुछ को जागना नहीं चाहिये? जगे हैं। पिछले हजारों वर्षो में बहुत लोग जगे हैं। सन्त, साधु पुरुष, महान् जन नेता, तत्वचिन्तक, वैज्ञानिक, विचारक जगते रहे हैं, जगाते रहे हैं। सब एक स्वर से एक ही बात करते रहे हैं। आइये, हम आप भी उनके स्वर में स्वर मिला कर उस ध्वनि को और सुनने योग्य बनाते हुए कहें कि भाई, खोदो पर खो मत दो।

एसोशिएट प्रोफेसर (से.नि.)
डी. बी. एस. महाविद्यालय, देहरादून
उपाध्यक्ष,
भारतीय विज्ञान लेखक संघ, उत्तराखण्ड प्रभाग

एक यात्रा प्राकृतिक प्रयोगशाला की

कैलाश कोठारी

लेखक न होते हुए भी लेखक होने के मौके का आनन्द लेने के लिए मैं कई बार उत्तरांचल के सुदूर पर्वतीय क्षेत्रों, सीमावर्ती ग्राम्य आँचलों और जनजातीय क्षेत्रों में घूमने भी गया। लेखन का भूत मुझे उस समय लगा जब मैं ट्रेकिंग पर इस विधा में अपने गुरू श्री बी. डी. जोशी जी के साथ दुर्गम स्थलों, घने जंगलों, जल धारा युक्त उन महान घाटियों, नदियों और झरनों में आनन्द लेने के लालच से उनका हमसफर बन गया। श्री जोशी ट्रेकिंग कौशल का अच्छा अनुभव रखते हैं और अपनी इच्छाओं के अनुसार उत्तरांचल की प्रकृति का खूब आनन्द ले चुके हैं। उनके अनुभव कठिन और निष्ठुर बाधाओं में उत्साह के चरम को भोगने में भी सक्षम है। उनके साथ इन अभियानों के दौरान आते–जाते और विश्राम करते हुए मैं देशी और विदेशी यात्रियों, पर्यावरणविदों और प्रकृति प्रेमियों से मिला। साथ ही मेरी मुलाकात विज्ञान और तकनीकी विकास में अपना योगदान देने वाली नई पीढ़ी के सदस्यों से भी हुई। अनेकों लेखकों, शिक्षा शास्त्रियों, अनुभवी बुजुर्गों, ग्राम प्रधानों से भी मेरी भेंट हुई। मुझे वहाँ ग्रामीण परम्पराएं, लोक संस्कृति, पौराणिक आस्था और उसके प्रतीक स्वरूपों के भी साक्षात् दर्शन हुए। पहाड़ के कुछ क्षेत्र आज भी प्राचीन संस्कृति से ओत–प्रोत हैं। परन्तु सुदूर ग्रामीण इलाकों के कई क्षेत्र उन मूलभूत व्यवस्थाओं से वंचित हैं, जो कि जीने के लिए जरूरी हैं। विकास नियोजन जैसी वयवस्थाओं से उनका भरोसा टूटा है। शिक्षा और स्वास्थ्य भी वहाँ खानाबदोश हैं। वहाँ गरीबी है। गरीब वहाँ अपने पुराने ढ़र्रे वाले काम से वहीं तक सीमित है, जो अपनी पूरी आयु अपने पेट भरने के संघर्ष में ही गुजार देते हैं। इस तरह अनेक अनुभवी लोगों के विचारों, अनुभवों और परामर्शो से मैं भी फलीभूत हुआ। एक ट्रेकिंग के दौरान एक लेखक ने दूसरे लेखक से पूछा आप यहाँ क्यों आते हैं। उन्होंनें कहा मैं यहाँ प्रकृति के साथ हमेशा होता हूँ। यह मेरे पिता की मुझे दी हुई नेमत है। उनके पास मुझे देने के लिए कुछ नहीं बचा था अतः उन्होंने मुझे यह सुन्दर पृथ्वी ही थमा दी थी। मैं सोचने लगा कि हमारे पूर्वज भी हमें यह दे गये हैं। यहाँ की प्रकृति का अपना निजी वैशिष्ट्य है जो धार्मिक और आध्यात्मिक संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती हैं। यह करीब ले जाती है उन बौद्धिक और दार्शनिक परम्पराओं के जो हमारी पौराणिक संस्कृति के पाठ हैं। हमारी बौद्धिक संस्कृति में प्रकृति का आदर और आभार परिलक्षित होता है। ज्ञान विज्ञान और दर्शन के लिए प्रकृति सबसे बड़ी प्रयोगशाला है। विज्ञान प्रकृति विज्ञान वैज्ञानिक सिद्धान्तों का स्रोत है। विज्ञान मानता है कि जो कुछ भी इस दुनिया में होता है वह सब प्रकृति के नियमों से ही संचालित होता है। इसलिए सभी प्रकृति के नियमों का आदर और सम्मान करते हैं। कोई भी वैज्ञानिक अनुसंधान व शोध यह मानने को तैयार नहीं होगा कि प्रार्थना या अलौकिक सत्यों से दुवा माँगकर अनहोनियों को होनियों में बदला जा सकता है। फिर भी हम अपनी समस्याओं का समाधान तंत्र–मंत्रों में ही खोजने की प्रवृत्ति रखते हैं। ग्रामीण और जनजातीय क्षेत्रों में कृपा और प्रकोप वाली मानसिकता आज भी कायम है। आज पूँजीवाद के विस्तार ने पर्यावरण का हश्र कायरता की उस सीमा तक किया है, जिससे अनेकों संकट उपजे हैं। दुश्मन जैसे कुछ पर्यावरण मित्र जो अपने अमित्रतापूर्ण व्यवहार से भोजन, पानी और हवा देने वाले इस सुन्दर ग्रह को काफी नुकसान पहुँचा रहे हैं। विश्व भर में इसके प्रबन्ध पर अनेकों महत्वकांक्षी प्रयोग और शोध हो रहे है। लेकिन हमारे यहाँ इसका लोक पक्ष और मौलिक स्वरूप आज भी उपेक्षित है। जितना बुद्धि और विवेक का उपयोग इस क्षेत्र में होना चाहिए उतना नहीं होता। प्रकृति संसाधनों का वैज्ञानिक दोहन बड़े मुनाफे का कारोबार है। यहाँ की समृद्ध प्रकृति जैव विविधता से परिपूर्ण है। अनेकों राष्ट्रीय पार्क भी यहीं हैं और हिमालय भी, फिर भी हम उस ज्ञान और विज्ञान से वंचित हैं जो प्रकृति के साथ होने और इसके विमुक्तकारी प्रभावों को जानने और समझने के अवसर प्रदान करता है। इसके स्रोत्रों के साथ हम अपनी क्षमताओं को उजाकर कर सामंजस्य स्थापित कर सकते हैं। वैज्ञानिक शोध एवं अनुसंधान में विश्व स्तर पर हमारे योगदान का प्रतिशत बहुत कम है।

अग्रणी विशेषज्ञों का मानना है कि प्रकृति के साथ सामंजस्य और युक्तिसंगत तारतम्य स्थापित कर हम अपने उत्थान और विकास की सीमाएं तय कर सकते हैं। आप जानते हैं कि पर्यावरण के साथ–साथ टेक्नोलॉजी भी बदली है। विज्ञान और तकनीकी विकास से बाजार का व्यवहार और रोजगार का स्वरूप बदला है, लेकिन मानव मानस की मनोवृत्तियों पर उस अनुपात में परिवर्तन नहीं हुआ जितना कि वैज्ञानिक और तकनीकी विकास से भौतिक जगत और वैभव में परिवर्तन हुआ है। कल सभी लोगों को अपने–अपने तर्कों को युक्तिसंगत ठहराने के लिए वैज्ञानिक दलील ही देनी होगी और सभी दावे विज्ञान को ही साक्षी मानकर किये जायेंगे। पूरा विज्ञान, प्रकृति के इन्हीं अक्षय स्रोतों में है। इसके संवर्धन और संरक्षण में आपके सहयोग की भी दोगुनी आवश्यकता है, यह भयंकर सत्य आपकी कल्पना से परे तो नहीं होगा। इस प्रयोगशाला में जाकर आप भी अपनी क्षमता से निश्चय ही अपनी समस्याओं को सुलझा सकते हैं। साथ ही सनातन प्रकृति के विभिन्न स्वरूपों और विराट विस्तार को देख समझ और महसूस कर सकते हैं। वहाँ जाकर मेरी तरह वैज्ञानिक न होते हुए भी आप अपने आप को वैज्ञानिक की भूमिका निभाने के लिए तैयार पायेंगे, और यदि ऐसा भी न हुआ तो विज्ञान और प्रकृति के साथ होने का आनन्द तो ले ही सकते हैं। व्यक्तिगत जीवन में कला, साहित्य, संगीत, विज्ञान और बौद्धिक गतिविधियों के प्रबल हिमायती बनकर सम्मान से जी तो सकते ही हैं।

भारत संचार निगम लिमिटेड ; सदस्य, भारतीय विज्ञान लेखक संघ, उत्तराखण्ड प्रभाग

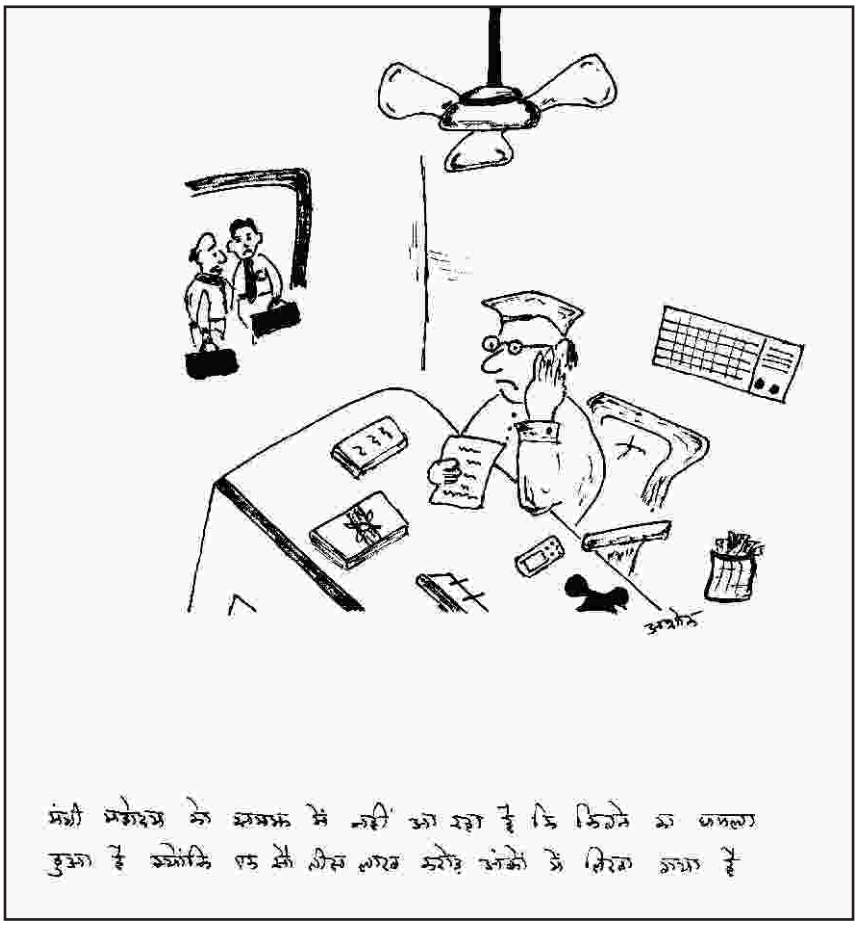

निवेदन

लेखकों से

विज्ञान परिचर्चा में प्रकाशन हेतु सामग्री भेजते समय निम्न मुद्दों का ध्यान रखें।

1. विज्ञान परिचर्चा एक लोकप्रिय विज्ञान पत्रिका है। अत: इसमें विज्ञानके विविध आयामों से संबंधित परन्तु जन सामान्य के लिये उपयोगी तथा उनकी समझ में आ सकने योग्य ढंग से लिखी सामग्री प्रकाशित होती है।
2. लेख यथासंभव आपके अपने अध्ययन के विषय से ही संबंधित हों। भौतिक विज्ञानी का किसी रोग के उपचार से संबंधित या गणितज्ञ का नीबू के औषधीय उपयोग जैसे विषयों पर लिखे लेख उचित नहीं हैं।
3. आपके लिखे लेख के प्रत्येक तथ्य का सत्यापित होना आवश्यक है। इसलिये सन्दर्भ सूची अवश्य दें। अनेक लेखक सोचते हैं कि यह कोई शोध पत्रिका नहीं है अत: इसमें सन्दर्भ देने की आवश्यकता नहीं। यह सोच गलत है। पत्रिका में प्रकाशित लेख को पढ़ कर कोई पाठक यदि अधिक जानना चाहे तो सन्दर्भ सूची लाभदायक होती है। दूसरे सन्दर्भ देने से आपके कथ्य की विश्वसनीयता भी परखी जा सकती हैं
4. लेख स्पष्ट सुवाच्य ढंग से कागज के एक ही ओर लिखा अथवा यथासंभव टाइप किया हुआ होना चहिये। लेख भेजने से पूर्व एक बार पुन: पढ़ लें । अकसर कई भाषा की, व्याकरण की, मात्रा की या वर्तनी की भूलें रह जाती हैं।
5. गंभीर लेखों के अतिरिक्त विज्ञान कथाएँ, कविताएँ, व्यंगचित्र, चित्र, वैज्ञानिकों के संस्मरण रोचक घटनाएँ, वर्ग पहेली, बुद्धि खाद्य आदि सामग्री का भी स्वागत है।

पाठकों से

1. विज्ञान परिचर्चा के अंकों के संबंध में आपकी प्रतिक्रियाएँ अवश्य भेजें। आपके सुझाव हमारा मार्गदर्शन करेंगे।
2. पत्रिका नि:शुल्क वितरण के लिये है। अत: यदि आप इसे नियमित रूप से प्राप्त करना चाहते हैं तो कार्यालय से संपर्क करें। यदि डाक या कुरियर से मंगाना चाहें तो उसका खर्चा देकर प्राप्त कर सकते हैं।

विज्ञान परिचर्चा का आगामी अंक 'प्राकृतिक आपदा अंक' के रूप में प्रकाशित करने का प्रस्ताव है। अतः यदि आप प्राकृतिक आपदाओं के वैज्ञानिक पक्ष पर अपने विचार व्यक्त करना चाहें तो आपके लेखों का स्वागत है। अवैज्ञानिक विचार जैसे ईश्वरीय अवकृपा या पापों का फल जैसे लेख प्रकाशित नहीं होंगे।

जरबेरा पुष्प

आर्किड

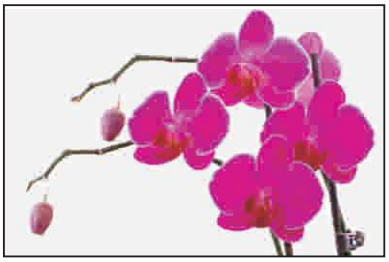

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद (यूकॉस्ट), देहरादून आगामी माह नवम्बर, 2013 में तीन दिवसीय अष्टम् उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कांग्रेस–2013, द्वितीय उत्तराखण्ड विज्ञान शिक्षक कांग्रेस–2013 एवं विज्ञान मेला–2013 का आयोजन करने जा रही है (आयोजन स्थल एवं तिथि बाद में घोषित की जायेगी)।

राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कांग्रेस–2013 में मौखिक एवं पोस्टर प्रस्तुतिकरण हेतु निम्न 16 विषयों में शोध पत्र के सारांश आमंत्रित किये जाते है :

1. कृषि विज्ञान
2. जैव प्रौद्योगिकी, जैव रसायन एवं सूक्ष्म जैविकी
3. वनस्पति विज्ञान
4. रसायन विज्ञान
5. पृथ्वी विज्ञान सह भू–विज्ञान, भू–भौतिकी
6. अभियान्त्रिकी विज्ञान एवं तकनीकी
7. पर्यावरण विज्ञान एवं वानिकी
8. गृह विज्ञान
9. मैटिरियल साइंस एण्ड नैनो टैक्नोलॉजी
10. गणित, सांख्यिकी तथा कम्प्यूटर विज्ञान
11. चिकित्सा विज्ञान एवं फार्मास्यूटिकल साइंस
12. भौतिक विज्ञान
13. विज्ञान एवं समाज/विज्ञान संचार
14. पशु चिकित्सा एवं पशुपालन विज्ञान
15. जन्तु विज्ञान
16. रूरल टैक्नोलॉजी (ग्रामीण प्रौद्योगिकी)

8th STATE SCIENCE AND TECHNOLOGY CONGRESS 2013

राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कांग्रेस–2013 में प्रत्येक विषय अन्तर्गत युवा वैज्ञानिक पुरस्कार (मौखिक व पोस्टर प्रस्तुति) तथा एक अन्वेशक पुस्स्कार–2013 भी प्रदान किया जायेगा।

राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कांग्रेस–2013 हेतु रजिस्ट्रेशन फीस निम्नवत् निर्धारित की गयी है :

1. वैज्ञानिक/प्रवक्ता
   - ₹ 750.00
2. शोधार्थी (छात्रवृत्ति प्राप्त)
   - ₹ 500.00
3. शोधार्थी (बिना छात्रवृत्ति प्राप्त)/ छात्र- शून्य

उक्त Demand Draft कार्यकारी अध्यक्ष (Executive Chairman), अष्टम् उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कांग्रेस- 2013 के नाम से देय होगा जो शोध पत्र के सांराश की एक प्रति के साथ (बैवसाईट www.ucost.in में दिये गये प्रारूप व editable MS Word में) प्रभारी वैज्ञानिक, अष्टम् उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी कांग्रेस–2013 को उपरोक्त पते पर डाक एवं ईमेल (usstc8@ucost.in) द्वारा दिनांक 30 सितम्बर, 2013 तक अवश्य पहुँच जानी चाहिए।

उक्त कांग्रेस में निम्नलिखित विषयों में मस्तिष्क मन्थन सत्र (Brain Storming Session) का भी आयोजन किया जायेगा :

1. Occupational Health Hazard
2. Medicinal and Aromatic Plant
3. Genetically Modified Crops

द्वितीय उत्तराखण्ड विज्ञान शिक्षक कांग्रेस–2013 हेतु निदेशक, विद्यालयी शिक्षा, उत्तराखण्ड की सहमति उपरान्त राज्य के प्रत्येक जिले से चयनित 10 अध्यापकों को ख्यातिप्राप्त वैज्ञानिकों द्वारा विभिन्न विषयों में दिशा निर्धारण (orientation) किया जायेगा।

उक्त विज्ञान कांग्रेस अन्तर्गत विज्ञान मेला–2013 का भी आयोजन किया जायेगा जिसमें विभिन्न प्रदर्शनियों के माध्यम से छात्र/छात्राओं को वैज्ञानिक गतिविधियों से जागरूक कराया जायेगा।

डा0 राजेन्द्र डोभाल
महानिदेशक,
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद, उत्तराखण्ड

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिशद
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग (उत्तराखण्ड सरकार)
6 वसंत विहार, फेज–I, देहरादून–248 006, उत्तराखण्ड
Ph. 0135- 2762766 (O); 2761063 (Fax) Website: www.ucost.in